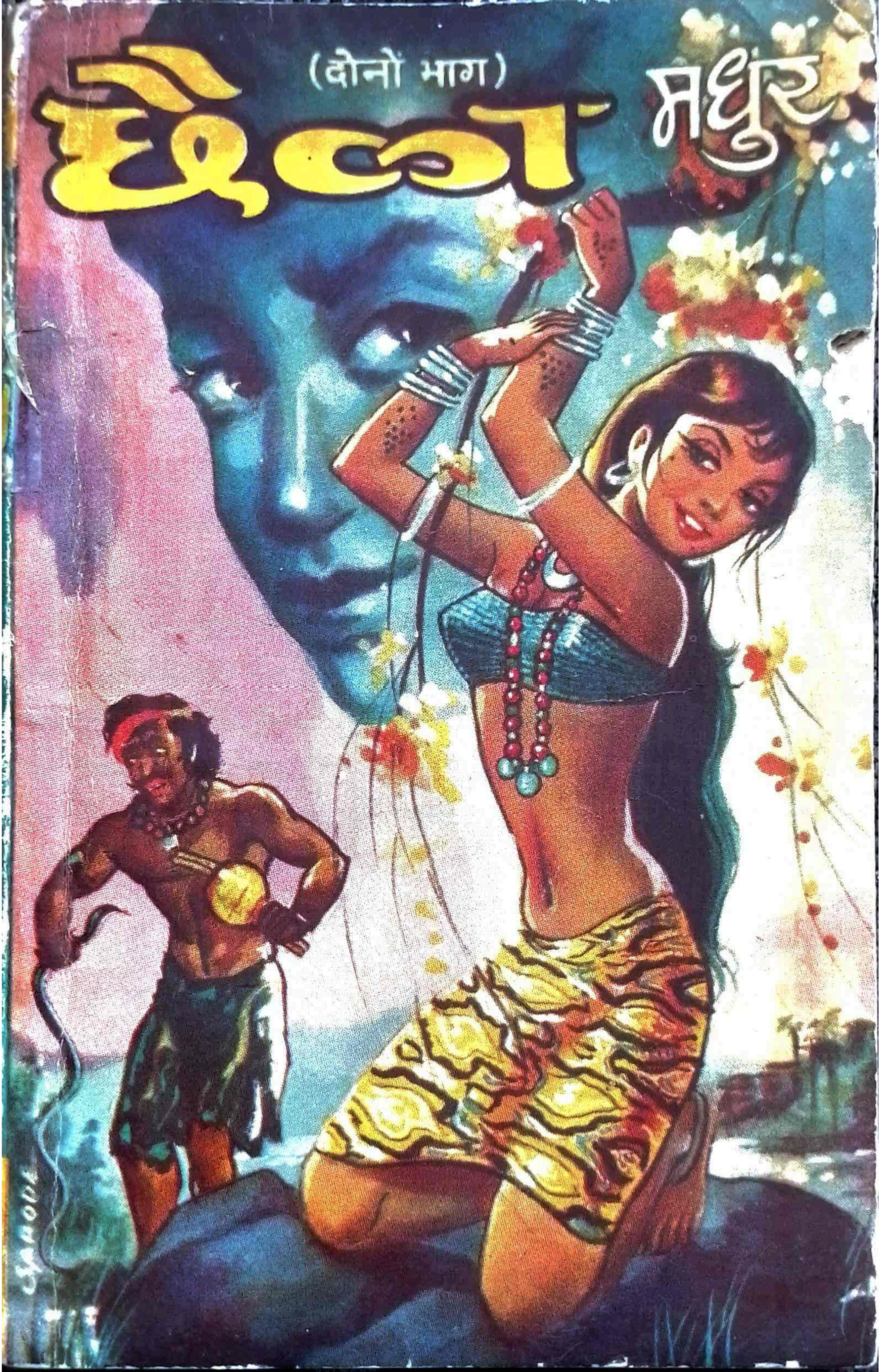
(दोनों भाग)
छैला
मधुर

"मुझे सतायें मत सरकार ! मैना मर जायगी मेरे बिना....सुना अपने ? पुकार रही है वह....अभी आया मैना.... मुझे जाने दीजिए हजूर !...."

कुंवर मैना को चूमता जा रहा था। थोड़ी देर बाद आश्वस्थ हुआ तो बोला—"हजूर ! आपका लाख-लाख शुकिया....मुझे मैना मिल गई.... आपको बहुत तकलीफ उठानी पड़ी मेरी वजह से....गरीब परदेसी आपका अहसान भूलेगा नहीं...."

[परदेसी का तीसरा चौथा भाग]

मूल्य—पांच रुपया

ढैला

मधुर

भारत पॉकेट बुक्स

©
शान्ती कुशवाहा

● प्रकाशक—
भारत पाकेट बुक्स
हीरापुरा, जालपादेवी रोड
वाराणसी—२२१००१

● वितरक—
चिनगारी प्रकाशन
सीके० ६४/७ जालपादेवी रोड
पो० बा० ७८, वाराणसी-२२

फोन नं० ६६१५८

● मुद्रक—
विजय प्रकाश प्रेस
गोला दीनानाथ, जालपादेवी
वाराणसी—२२१००१

छवा ● उपन्यास ● मधुर

जिन्दगी एक सफर है और मौत एक मन्जिल ! सफर में जिन्दगी है, मंजिल पर मौत ! मैना सफर तय करके अपनी मंजिल पर पहुँच गई थी । टिकोरा का सफर अभी जारी था. जीवन की आंधी उड़ाये लिए जा रही थी उसे । परदेसी से मैना को छीनकर क्या बचा पाया वह ? मैना का निर्जीव शरीर ही तो । अजगर की तरह फुफकारने वाले सँपेरे का फन झुक गया था । उसके भीतर एक आग पैदा हो रही थी, जिसकी लपटें बाहर निकलने की राह खोज रही थीं । उस भयानक सँपेरे का दिल दग्ध था । उसके चारों ओर निराशा का अन्धकार फैल गया था । अभी मैना जी उठे तो उसे ताकत मिल जाय, फिर उसे जय में कितनी देर लगेगी ? टिकोरा तो टिकोरा है । वह मैना की मौत से लड़ेगा ।

अपनी मैना को जीवन देकर साबित करेगा कि कितनी ताकत है उसके पास । धीरे-धीरे दुनिया पर रात ने काली चादर डाल दी । किन्तु टिकोरा चलता रहा चुपचाप । अभी उसकी मंजिल दूर है और उसे अभी जीना भी है ।

मैना को जिलाने के लिए...परदेसी को जलाने के लिए ।

● ●

'छैला !' कोमल कण्ठ से मधुर आवाज निकली मगर बिस्तर पर लेटा युवक चुप ही रहा । जैसे उसने सुना ही नहीं कुछ ।

'परदेसी बाबू बोलो नऽ !' युवती की पतली-पतली शोख उंगलियां युवक के चमकीले, घुँघराले बालों से खेलने लगीं ।

युवक उस मादक स्पर्श से चौंक उठा ।

'डर गये बाबू !...यह तो मेरी उँगलियाँ है । सांप नहीं जो तुम्हें डँस लेंगी...बोलो नऽ...कुछ बोलो भी – ऊपर क्या देख रहे

हो जी ! जरा नीचे भी देखो, कबसे मैं तुम्हारी एक नजर के लिये बेचैन बैठी हूँ ...सूनी छत में भला क्या है ? तनिक इधर तो देखो।' और उसने युवक का मुख अपनी ओर घुमा लिया।

और वह युवक, शहरी छैला ?

एकटक देखता रहा उसके रूप-यौवन को।

'दैया रे !' चेहरे पर आश्चर्य की लकीर खींचकर वह बोली-'टकटकी लगाये क्या देख रहे हो जी ! ऐसे मत देखा करो, मुझे कैसा तो लगने लगता है ...ऐसे तो सांप भी नहीं देखते।'

'तो मैं सांप हूँ....' युवक बोला।

'नहीं जी, तुम तो मेरे दिल के सपने हो।' कहते-कहते शर्म से दोहरी हो गई वह युवती।

'मैं तुम्हारा सपना हूँ ?' युवक ने पुनः पूछा।

'हाँ !' संक्षिप्त-सा उत्तर मिला। चेहरा लाल हो उठा। गुलाब का हुस्न उसके कपोलों पर छा गया।

शहरी छैला ने उसे अपने समीप खींच लिया।

'हटो जी, तुम तो बड़े वो हो !' उसकी वाणी में जैसे कोयल ने अपनी कूँक भर दी हो, ऐसा लगा।

'वो क्या ?'

'चोर !'

'तुम्हारा क्या चुराया है मैंने ?...' युवक ने कहा।

'मेरा दिल जो चुरा लिया है तुमने ! मेरा करार, आंखों की नींद, सभी कुछ तो चुरा ली है। देखो, मेरा कलेजा कैसा धक्-धक् कर रहा है। सिर्फ यही भर तो छोड़ दिया है तुमने।'

और उसने युवक के हाथ को अपने धड़कते कलेजे से चिपका लिया, अपने दिल की आवाज सुनाने के लिए।

यौवन के स्पर्श से युवक सुध-बुध खो बैठा।

'मेरे रसिया !' युवती ने पुकारा प्यार से और हौले से दबाया युवक के हाथ को जो उसके कलेजे पर पड़ा था—'तुम्हें देखती हूँ तो देखती ही रह जाती हूँ। तुमने मुझ पर कैसा जादू कर दिया

है ? बोलो नऽ...तुम्हारी चुप्पी तो जान ही ले लेती है।'

युवक जंगल की युवती के कलेजे पर पड़े अपने हाथ को हटाने लगा तो—'इसे यहीं रहने दो छैला ! बड़ा सुख मिल रहा है...'

उसका अस्त-व्यस्त भावों वाला मुखड़ा धीरे-धीरे परदेसी के हसीन चेहरे की ओर झुकने लगा। वह उन्मत्त-सी हो उठी थी। उसके अंग-अंग में नशा सिहरन बनकर पैठ गया था। उसकी गरम-गरम साँस, छैला के मस्तक पर लोटने लगी। युवक अपने को संभाल नहीं सका और उसे अपनी बाहों में भर लिया। सपनों की दुनिया से जब युवक वास्तविक संसार में आया तो उसने देखा—आँखों पर बोझिल पलकों की चादर डाले 'वह' उसके कलेजे पर लेटी थी। उसने उसके सर को आहिस्ते से हटाना चाहा, तभी—युवती के काँपते होठों से लड़खड़ाती आवाज फूट पड़ी—'मैं नागिन नहीं हूँ जो डरते हो मैं तो चम्पक लता हूँ; तुम्हारे गोरे शरीर से लिपटकर शोभा ही बढ़ा दूँगी !....'

'हटो भी, तङ्ग मत करो !'

'जरा-सी राहत दे दोगे तो छोटे नहीं हो जाओगे।'

'हो गया नऽ ! छोड़ो भी अब...आह ! देखो मेरा जख्म—उफ् !' कराह उठा वह !

'अरी मोरी माई ! मैं तो भूल ही गई थी...अभी दवा बनाकर लाई...नहीं तो चिकोरा मुझ पर सारा गुस्सा उतारने लगेगा !' बोली युवती और उठ खड़ी हुई। दौड़कर बाहर से हरी-हरी पत्तियाँ और पीले रङ्ग की कोई जड़ी ला पत्थर पर घिसने लगी।

दवा तैयार हो गई तो दौड़ी-दौड़ी आई परदेसी के पास। पैर और हाथ के जख्म पर दवा लगाने लगी।

दवा लगाकर पुनः अपने छैला की बगल में आ बैठी वह।

× × ×

'लगता है कि खा ही जायगा। वाह बेटा वाह ! अजगर के भी बाप निकले। चमकी ! ओ मेरी रानी ! अरी कहाँ हो छबीली ! जरा आकर तो देख, तेरे लिए गेहुँअन घर लाया हूँ। तेरी चोली

फट गई है; अब बना ले नई-नई। अबे, ताव मत दिला नहीं तो गर्दन मरोड़ दूँगा तो टें हो जायगा। चमकी !'

आवाज सुन हड़बड़ा कर उठ बैठी वह।

'आई मेरे राजा !...' और हवा के झोंके की तरह आकर वह चिकोरा से लिपट गई—'किसकी गर्दन तोड़ रहे हो ?'

'अरे, जरा दूर हट ! नागिन बनकर घेरा क्या डालती है... हाँ, अब ठीक है...देख, इस बेईमान की गर्दन दबा रहा था। शैतान ने दौड़ा मारा मुझे...'

'तुम तो मरे नहीं हो। तुम तो यहाँ हो, मेरे पास !'

'तुम्हें देखकर जी गया रानी ?...' बोला चिकोरा हाथ के साँप को सँभालते हुए—'छैला कहाँ है गोरी !'

'यह है !' चिकोरा की ओर इशारा किया चमकी ने और हँस पड़ी ही-ही-ही !

'मैं तो हूँ ही...मगर वह शीतल बाबू कहाँ है ?'

'वह तो दिन भर लेटा ही है मेरे रसिया ! कुछ कहती हूँ, तो कहता है...मनाओ जाकर उसे तुम्हारा कहा मानेगा...पड़े-पड़े बदन में जंग भी नहीं लगती है उसके।'

'चल छबीली, देखूँ ज़रा छैले को...' बोला चिकोरा।

चिकोरा चमकी की अदाओं पर मोहित हो उठा था।

'चलो न ?' कमर पर हजार-हजार बल डालकर बोली वह।

चिकोरा घर में घुसा। चमकी भी उसके पीछे हो ली।

सूरज डूबते ही, उजेला पहाड़ी के उस पार विशाल गर्भ में विलीन हो गया ! शाम के धुंधलके ने भयानक जङ्गल के बीच में बसे उस छोटे से गाँव को अपने अङ्क में भर लिया।

फूस से बने घर में घुसकर चमकी ने साँप के चर्बी की मशाल जलाई और बोली चिकोरा से—'यह रहा तुम्हारा परदेसी मेहमान !....दिन भर अजगर की तरह पसरा रहता है !'

'अच्छा, अब चुप रह चमकी।' बोला चिकोरा बैठते हुए—'परदेसी बाबू ! यहाँ कोई तकलीफ हो तो कहना। हम गरीब हैं

खातिरदारी न हो सके तो भूल-चूक क्षमा कर देना। हम सँपेरे हैं नऽ! साँपों के साथ खेलते-खेलते साँप बन गये हैं।'

चिकोरा परदेसी की तरफ देखकर कहता रहा—'फर्क है तो डँसने और बचाने का! साँप डँसकर लोगों की जान लेता है और हम जहर उतार कर मौत को जिन्दगी देते हैं चमकी खूब सेवा करेगी तुम्हारा...अभी-अभी महीने ही भर तो हुए हाथ पीला किए...जब से यह मेरी जिन्दगी में आई है, झोपड़ी चमक उठी है।' कहते-कहते चिकोरा ने चमकी की ओर देखा।

'हटो जी, तुम बड़े वैसे हो!' तीर चलाती हुई बोली वह।

थोड़ी देर के लिए सभी चुप हो गये तो चमकी को यह शान्ति खटक गई। बोली—'छैला!'

'अरी अलबेली! कई बार कहा तुमसे—बाबू का नाम शीतल है, शीतल!' चिकोरा ने कहा!

'मैं क्या जानूं शीतल-पीतल!...मैं तो छैला ही कहूँगी... हाँ!' मुँह बिचकाती और हाथ मटकाती बोली वह।

'देखो न बाबू! किसी की नहीं सुनती यह!'

'उई!' चौंक पड़ा शीतल। उसकी दृष्टि चिकोरा के हाथ पर पड़ी। उसके हाथ में साँप लिपटा हुआ था।

'डर गये बाबू! मैंने कहा न हम सँपेरे हैं...साँपों से खेलना तो हमारा पेशा ही है। इसका खेल देखोगे बाबू!...लो अपने हाथ में, लो नऽ—काटेगा नहीं, मन्तर से बँधा है।'

शीतल में साँप छूने का साहस नहीं था। वह करवट बदल कर लेट रहा। चमकी ने साँप शीतल के ऊपर डाल दिया।

भय से घबड़ाकर उछल पड़ा शीतल और भागकर चिकोरा के पीछे खड़ा हो गया। उसे डर से पत्ते की तरह काँपता देखकर हँस पड़ी चमकी! बोली—'बड़े डरपोक हो बाबू!'

'इसे मना कर दो चिकोरा भाई! मुझे भय लगता है—मैं अब यहाँ नहीं रहूँगा...मेरी तबीयत ठीक हो गई है, मैं अपने शहर जाऊँगा हाँ...।' एक ही साँस में कह गया शीतल।

वह यहाँ के लोगों का भयानक जीवन-क्रम देखकर चकित था। उसके जाने का नाम सुनते ही चमकी की हँसी ने उदासी का जामा पहन लिया। बोली—'अभी तो तुम्हारा घाव भी ठीक नहीं हुआ है छैला !...जल्दीबाजी में काम बिगड़ जाता है—क्यों रसिया !' चमकी ने होठों पर हँसी चमकाई, अपने चेहरे पर छाई उदासी दूर करने के लिए।

'हाँ !' चिकोरा ने कहा, स्निग्ध दृष्टि से शीतल की ओर देखा उसने—'चले जाना बाबू, जरा राहत तो हासिल कर लो... हम तुम्हें खुद ही पहुँचा देंगे ...रास्ता खतरनाक है; अजगरों और जङ्गली जानवरों से भरा हुआ !'

'इसी जङ्गल में एक शहरी बाबू अजगर की चपेट में आ गया था—अजगर उसे लील गया और....' चमकी बोली।

'और ?....' शीतल चमकी की बात पूरी होने के पहले ही बोल उठा। आगे की घटना सुनने के लिए अत्यन्त उत्सुक हो उठा वह। जब से वह यहाँ आया है उसे विचित्र-विचित्र बातें देखने-सुनने को मिल रही हैं।

'और अगर मेरे गाँव के टिकोरा ने अजगर को पकड़ न लिया होता तो ...बड़ा हरामी है जी टिकोरा।' चमक-चमक कर कह रही थी चमकी।

'और तब क्या हुआ ?'

बीच-बीच में शीतल प्रश्न पर प्रश्न करता जा रहा था। वह समझ रहा था कि चमकी कहानी कहकर उसे चकमा दे रही है; उसे राह की भयानकता दिखाकर रोकना चाहती है।

'अरे जाने भी दो बाबू !, इसके फेर में मत पड़ो, नहीं तो इसकी बातें सुनते-सुनते हार जाओगे लेकिन पार नहीं पाओगे !' बीच ही में बोल पड़ा चिकोरा—'जरा पानी-वानी पिलाओ रानी !...है कुछ ?'

'अजगर का हलुआ और करैत का अचार...खाओगे ?'

'हाँ-हाँ, ला जो भी हो....' दिन भर का थका चिकोरा झुँझला

कर बोला। बिजली की तेजी से चमकी ने चिकोरा के सामने सब कुछ लाकर रख दिया।

चिकोरा खाने लगा, खाते-खाते ही बोला--'बाबू को भी दे !'

'मैं यह सब नहीं खाता।' शीतल बोल उठा।

'सांप से डरनेवाला इसे खायेगा भला ? क्या अनहोनी बोलते हो। इसे तो जङ्गली बेर और शरीफा ला दो !' बोली चमकी—'मैना का परदेसी कितना भला था जी ! जो खाने को दो वह चट कर जाता था। पूरा सँपेरा बन गया था वह तो ...'

'चुप भी रह चमकी ! वह तो सब कुछ भूल बैठा था बेचारा ! उसे तो अपना घर-बार, नाम-पता भी नहीं मालूम था।' कहते हुए हाथ में सांप उठा लिया चिकोरा ने और खड़ा हो गया—'मैं तो चला रानी ! जरा शीतल बाबू को गांव की हवा खिला देना !' कहता तेजी से बाहर निकल गया वह।

शीतल और चमकी अकेले रह गये।

'छैला !' कोयल कूकी किन्तु खामोश रहा शीतल।

'मेरे भोले परदेसी ! नाराज हो गये तुम ?' चमकी के गले में करुणा आ बैठी—'दिल दुख गया हो तो बोलो, मैं नहीं बोलूँगी !' कहती हुई वह शीतल के पैरों पर गिर पड़ी।

एक कोने में सांप की चर्बी का दीवट जल रहा था। उसकी लौ पर कुछ परवाने जान कुर्बान करने को लपक रहे थे।

'इधर देखो मेरे छैला ! अपनी चमकी को देखो तो सही, कुछ तो खबर लो बाबू !' उसने अपना सर शीतल के पैरों पर पटक दिया। शीतल पिघल पड़ा। आहिस्ते से उसने चमकी के चांद से मुख को ऊपर उठाया। चाँद आँसुओं से भींग रहा था।

नारी के आँसुओं में जमाने को बहाने की ताकत होती है। उसकी आह में पत्थर को भी मोम बना देने की शक्ति होती है ... और शीतल तो एक इन्सान था !...अपने को रोक नहीं पाया।

और चमकी के एहसान भी तो कम नहीं हैं उस पर। उसके पति चिकोरा ने ही तो उसकी जान बचाई थी, नहीं तो उस

खूँखार शेर ने दुनिया से उसका नामोनिशान ही मिटा दिया होता उस दिन।

'चमकी !'

'छैला !' शीतल की आवाज सुनकर हर्ष से गद्गद् हो उठी चमकी। उसके गालों पर लेटी आँसुओं की रेखा हँस पड़ी।

'मुझे माफ कर दो रसिया ! सचमुच तुम बड़े बेदर्द हो। दिल्लगी का बुरा नहीं माना करते... अब नहीं मानोगे नऽ? बोलो न मेरे छलिया !'

'कभी नहीं !' छोटा-सा उत्तर दिया शीतल ने मुस्कुराकर।

'तुम चले जाओगे छैला ? जाना नहीं .. नहीं तो सच मानो, अपना सर पटक कर चूर-चूर कर लूँगी ....' उसकी आवाज फिर गीली हो उठी थी, बरसाती हवा की तरह।

'अभी तो नहीं ही जा रहा हूँ। जाऊँगा तो तुम्हें भी ले चलूँगा। चलोगी नऽ ?'

'तुम कहो और मैं ना कर दूँ...भला कभी ऐसा हो सकता है ?' खुशी से उछल-सी पड़ी चमकी।

मन ही मन वह शहर के सपने देखने लगी।

बोली—'शहर में तो बहुत अच्छी-अच्छी चीजें होती होंगी बाबू ? मैना का परदेसी भी तो वहीं रहता है। शैतान टिकोरा भी वहीं गया है उसके पीछे साँप लेकर। भूत जैसा है जो टिकोरा ! अगर रात को देख लो तो नींद न आये, सुबह देख लो तो खाना भी न नसीब हो...' एक ही साँस में कह गई चमकी।

'टिकोरा, मैना, परदेसी ये सब कौन हैं ? क्या मतलब है। तुम्हारा चमकी ?' प्रश्नभरी दृष्टि शीतल ने चमकी पर डाली।

'देखो जी ! मेरा नाम न लिया करो। नहीं तो मैं कुछ नहीं बताऊँगी—हाँ !' शोखी से बोली वह। उसकी बड़ी-बड़ी काली आँखें विचित्र तरीके से नाच कर रस उड़ेलने लगीं।

'तो क्या कहूँ तुम्हें ? '

'मैं क्या जानूँ ?...'

'रानी !' शीतल ने कहा।

चमकी ने दोनों हाथों से अपना मुँह ढँक लिया।

'अब बताओ नऽ ?' शीतल उत्सुक था।

'चुप भी रहो छैला !...कई रात सो नहीं पाई तुम्हारे कारण। पीछे बता दूँगी, अभी सो लेने दो...' और वह आँखों पर पलकों की चादर ढाँपे पड़ी रही।

दोनों चुप हुए तो वातावरण भी शान्त हो गया। चमकी के सौन्दर्य को अस्त-व्यस्त देखकर अवाक् रह गया शीतल।

साँप के चमड़े की चोली, कमर में अजगर की खाल का एक लहँगा और उस पर मोर-पङ्ख की छटा। इसके सिवा शरीर का सारा भाग खुला। अर्द्धनग्न-सौन्दर्य अपनी मादकता बिखेर रहा था। दीवार के काँपते प्रकाश में काली-काली लटों के बीच उसका मुखड़ा चाँद जैसा चमक रहा था। पतले-पतले मासूम होठों पर मुस्कान की एक रेखा खिंच गई थी। आँखों के इशारे...जो वक्त बेवक्त तीर बनकर शीतल के कलेजे को चाक कर दिया करते थे; पलकों की ओट में कैद थे।

शीतल की गोद में सोलह साल की अलस जवानी, नींद की चादर ताने खामोश पड़ी थी। तभी—ढोलक, नगाड़े और महुवर का सम्मिलित स्वर वातावरण में उठने लगा। सङ्गीत की मधुर ध्वनि जब शीतल के कानों के पर्दे से टकराई तो विभोर हो उठा वह। दीन-दुनिया की सुध बिसार कर उस सगत के स्वरों का रसपान करने लगा।

उसकी उँगलियाँ चमकी के चमकीले बालों से खेलने लगीं। शीतल के स्पर्श से सजग हो उठी चमकी और विह्वल भी। पल भर के लिए पलकों के पट खुले फिर बन्द हो गये। उसने सोये-सोये ही एक घातक अँगड़ाई ली। उसका वक्ष, जिसमें लाखों अरमान और हजारों धड़कने कैद थीं, शीतल के कलेजे से भिड़ गया। शीतल अवश-सा हो उठा।

उसने चमकी के शरीर को बाहों में भर लिया।

'दैया रे ! सोने भी तो दो छैला। ऐसा दबाते हो कि हड्डी-पसली—हाय राम !....एक हो गई। ऐसे तो अजगर भी नहीं दबाता होगा।' निश्चाकु स्वर था चमकी का।

'चमकी ?....' शीतल का लड़खड़ाया स्वर था।

दो जवान दिलों की आग धधक रही थी और उठ रही थी प्रणय की लपटें।

खौफनाक जङ्गल के एक गाँव में सौन्दर्य की एक प्रतिमा को देखकर शीतल का मन चलायमान हो उठा था। आज सात दिन ही तो हुए हैं उसे यहाँ आये; मगर उसे लगता है जैसे वह युगों से यहाँ बस रहा है। सात ही दिनों में काफी घुल-मिल गये थे दोनों। शीतल बैठा-बैठा जङ्गल के बीते दिनों की याद ताजी करने लगा। उसके जङ्गल के इतिहास का प्रथम नायक चिकोरा ही था। चिकोरा का चेहरा जब शीतल की आँखों में आया तो वह भयभीत हो उठा। बड़ी-बड़ी मूछें, साँवला चेहरा, बड़े-बड़े घुँघराले बाल, डरा देनेवाली खौफनाक लाल-लाल आँखें और उसका भयानक अट्टहास।

अगर उसे 'यह' सब मालूम हो गया तो... वह शीतल को जिन्दा नहीं छोड़ेगा। वैसे तो उसके पास दिल है और वह उससे सहानुभूति भी रखता है। उसकी जान बचायी है उसने और उसी के साथ विश्वासघात कर रहा है शीतल ! साँपों से खेलने वाला चिकोरा साँप बन कर डँस लेगा उसे और फिर वह साँस भी नहीं ले सकेगा !

परिणाम आँखों के आगे आया तो काँप उठा वह।

'चुप क्यों हो गये !' चमकी की आवाज काँप रही थी—'तुम तो ढीले होते जा रहे हो...जैसे मन्तर से बँधा साँप !'

चुप रहा शीतल, वह दूसरी दुनिया में विचरण कर रहा था।

वह बोला नहीं तो झकझोर डाला चमकी ने।

'ऐं !' सपने से जागकर वह बोल उठा।

'ऐं-बैं क्या ?...तुम्हीं ने तो मुझे जगाया और तुम्हीं सो गए।

मेरी आँखों की नींद चुराकर। तुम्हें हो क्या जाता है बाबू ?'

'घर की याद आ गई थी चमकी ! जी नहीं लग रहा है।'

'मेरा घर तुम्हें पसन्द नहीं ?'

'है तो !'

'तो फिर ?' चमकी उठकर बैठ गई और निहारने लगी शीतल के उदासी से धूमिल चेहरे को। महुवर और ढोलक की ध्वनि अभी भी दूर-दूर तक फैल रही थी।

'चलो छैला, नाच-गाना देख आयें, तुम्हारा जी भी बहल जायगा।' प्यार से ओत-प्रोत स्वर था चमकी का।

'सोने दो मुझे, नींद आ रही है। तुम भी सो जाओ नऽ !'

'मुझे नींद नहीं आती, सिर्फ सपने आते हैं और सपनों में आते हो तुम ...उठो चलो !' उसने शीतल की बाँह पकड़कर उसे खड़ा किया और खींचती हुई बाहर ले आई।

महुवर की तान और भी सुरीली हो गई थी। नगाड़ों की धमक भी तीव्र हो उठी थी। हँसिया जैसा चाँद पश्चिमाकाश की ढाल पर लुढ़क गया था। चाँदनी ढल रही थी। मस्त सँपेरे नाचने-गाने में मशगूल थे। इमली का वही पुराना दरख्त पड़ा था। सँपेरिनें पिला रही थीं और सँपेरे झूम-झूम कर पी रहे थे। मर्द गा रहे थे, औरतें नाच रही थीं।

चिकोरा भी एक पेड़ की जड़ से उठँग कर बैठा था। बैठा-बैठा नाच देख रहा और पी रहा था। उसके गले में साँप लिपटा था और वह नाचनेवालियों की दिलफरेब अदाओं को देख रहा था। उसकी नस-नस शराब के नशे से भींग कर काँप रही थी। उस पर मदहोशी छाने लगी थी।

'आ न !' चिकोरा ने एक ओर देखकर किसी को कहा।

'लो आ गई राजा !'

'अरे, तू चमकी !...आ गई ?....तू भी पिला दे... पिला न ! अरे, परदेसी बाबू ! आओ बैठो ...' शीतल पर उसकी नजर पड़ी तो उसने उसको भी बैठने के लिए कहा।

पास बैठी सँपेरिनें हट गईं; जो कुछ देर पहले से चिकोरा को पिला-पिलाकर रिझा रही थीं। थोड़ी देर बाद—

'अच्छा अलबेले, अब तो चली मैं....'

'अरे बैठ भी !'

'जरा तुम्हारे शीतल बाबू को हवा खिला लाऊँ...'

चिकोरा के कुछ बोलने के पूर्व शीतल का हाथ पकड़ चमकी भाग गई, जैसे सुगन्ध का हाथ पकड़ पवन भाग जाता है। अँधेरी पगडण्डी पर चल रहे थे दोनों। पतली पगडण्डी पर चलते-चलते कभी-कभी दोनों के शरीर आपस में टकरा जाते तो सिहरन की एक लहर उनके अवयवों में लहरा उठती।

'ठीक से चलो चमकी !...गिर जाओगी तो चोट लग जायगी तुम्हें !' शीतल ने कहा।

'लगने दो !' कहा चमकी ने।

तभी शीतल चीखकर एक तरफ कूद पड़ा।

'क्या हुआ जी परदेसी ?'

'साँप...साँप पर मेरा पाँव पड़ गया...' डर कर बोला शीतल—'कहाँ ले चल रही हो चमकी ?'

साँप से भरे जंगल को देखकर शीतल काँप उठा।

'डर रहे हो ? तो आओ इस चट्टान पर बैठें।'

दोनों एक चट्टान की छाती पर जम गये।

'वह क्या है चमकी !' नीरवता भंग करते हुए पूछा शीतल ने, एक ओर इङ्गित करते हुए।

'वह ! वह तो खण्डहर है, पहले महल था जी, सुन्दर-सा !'

'अच्छा !' आश्चर्य फूट पड़ा शीतल के स्वर में।

'हाँ, इसी में से तो मैना अपने परदेसी के साथ शहर भाग गई। भीतर-भीतर रास्ता है, जो शहर के पास जाकर खत्म होता है—एक नदी के किनारे।' कह रही थी चमकी-'मरदूद टिकोरा भी साँप लेकर पीछे-पीछे गया है बाबू, किसी की जान लेने में तो पहलवान है....दैया रे !' चमकी की आँखों में जब टिकोरा की

खूँख्वार आकृति आ गई तो स्वर और कांप उठा। उसका बदन रोमांचित हो उठा।

'क्या हुआ ?' घबराई चमकी से शीतल ने पूछा।

'प्यार !' संयत होकर बोली चमकी और हँसने लगी।

'चमकी, चलो अब चलें... देखो, चाँद भी सोने जा रहा है !' शीतल सुनसान देखकर घबड़ा रहा था।

'मगर तारे तो जाग रहे हैं। इन्हें भी टूट जाने दो छैला !' और चमकी शीतल की गोद में सर रखकर लेट गई।

कुछ पल ठहर कर फिर बोली—'एक बात बताओ छैला ! यह चाँद डूब क्यों जाता है और तारे क्यों टूट जाते हैं ?'

'फिर कभी बताऊँगा चमकी, अभी मालूम नहीं ?' चमकी के ऊटपटांग प्रश्नों से झुँझला उठा था शीतल।

वह गगन की ओर देख रहा था। एक सघन वृक्ष के पीछे चांद ऊँघ रहा था। चमकी ने पूछा—'ऊपर क्या देख रहे हो छैला ! जरा नीचे भी तो देखो !'

शीतल की आँखें चाँद-तारों की दुनियाँ से लौटकर पुनः जङ्गल में लौट आईं। बोला—'चलो घर चलें। रात काफी गुजर चुकी है...'

'नहीं छैला, यह रात कभी नहीं गुजरेगी। देखो, अभी तक लोग नाच-गा रहे हैं।' बोली वह।

किन्तु शीतल अत्यधिक विकल हो उठा था। वह उठ कर खड़ा हो गया और चमकी को चट्टान पर से खींचा, लौट चलने के लिए। वह कटी पतंग की नाईं झटके के साथ शीतल के कलेजे पर आ गिरी।

'भला ऐसे भी खींचता है कोई कि...'

कहते-कहते चमकी रुक गई, जैसे बीच ही में उसकी जबान को लकवा मार गया हो। उसकी दृष्टि खण्डहर की ओर चली गई थी और वहाँ जो कुछ उसने देखा उसे देखकर देखती ही रह गई थी। उसका मुँह अँधेरे में भी पीला पड़ गया था।

शीतल ने भी देखा, पूछा—'यह हरी-हरी रोशनी कैसी है चमकी !...अरे वह तो कोई—देखो वह तो...'

'चुप !' कहा चमकी ने और शीतल को खींचती हुई जल्दी-जल्दी डग भरने लगी। वह पहले शीतल के साथ, इमली के पेड़ के नीचे गई, जहाँ सँपेरे मस्त होकर गा-बजा रहे थे।

'कहाँ उड़ गई थी हवा बनकर !' चिकोरा था।

'बताती हूँ रसिया !' और चमकी चिकोरा के कान में मुँह लगाकर कुछ कहने लगी।

'अच्छा !' विस्मित होकर बोला चिकोरा—'अभी तो उसी की बातें हो रही थीं।'

'मैं शीतल बाबू को लेकर घर जा रही हूँ...देखो जी, उसके पास मत जाना...मेरी कसम है तुम्हें !'

'क्या हुआ चमकी ! तुम घबरा क्यों उठी हो...कौन था वह ?' शीतल ने पूछा।

'चुप भी रहो जी...घर पर बताऊँगी।'

शीतल ने फिर नहीं पूछा। रात्रि की नीरवता में दोनों चुपचाप चले जा रहे थे। चिकोरा ने सभी को एकत्र किया। चमकी ने जो जानकारी दी थी उसे उसने सबको बता दी। सँपेरों में एक अजीब हलचल मच गई।

'चलो देखा जाय तब !' सँपेरों ने निर्णय किया।

'अभी चलो।' चिकोरा बोला।

सँपेरों का उत्सुक गिरोह खण्डहर की ओर बढ़ा।

'वह देखो।' एक धीरे से बोल उठा।

'हाँ-हाँ, वही है !' दूसरे ने साथ दिया।

सभी जल्दी जल्दी हरी रोशनी की ओर बढ़े। तभी—

'कौन है ?...खबरदार, आगे बढ़ने की कोशिश मत करना नहीं तो साँप खींच मारूँगा...परदेसी से हार गया, मगर तुम लोग नहीं हरा सकते...मैं तुम लोगों का उस्ताद हूँ—समझे ?' चिल्ला उठा रोशनी वाला व्यक्ति !

उसके हाथ पर साँप की मणि चमक रही थी। गले में विकराल साँप माला बना था। दूसरे हाथ से वह किसी युवती को अपने कन्धे पर लादकर सहारा दे रहा था। वह चिल्लाया—'हट जाओ सामने से ...छोड़ दो रास्ता। नहीं तो टिकोरा से बढ़कर कोई खतरनाक न होगा ...' कहकर वह आगे बढ़ा।

सँपेरे रास्ता छोड़कर हट गये। उसी में से एक साहस करके टिकोरा की बगल में आ गया। बोला—'कहाँ गये थे टिकोरा !'

'टिकोरा, हुँ...!' दुहराया टिकोरा ने और उसके बढ़ते पाँव स्थिर हो गये। उसने उसकी ओर आग्नेय नेत्रों से देखा।

'उस्ताद कहना नहीं आता तुम्हें ! मुझे सिखाना पड़ेगा ?'

'माफ करो उस्ताद?...मैं केवल मैना और परदेसी के बारे में पूछना चाहता था ...'

'क्यों ?' चीख पड़ा टिकोरा। परदेसी का नाम सुनकर उसकी बुझती-सी आग पुनः भड़क उठी—'जी रहा है परदेसी और मर गई है मैना ! टिकोरा हारा और परदेसी जीता, समझे, मगर तुम अब नहीं बच सकते, नहीं जीत सकते ...तुमको मैंने अपना भेद बता दिया। जा तू भी...हा-हा-हा।'

पैशाचिक अट्टहास करके टिकोरा ने गले के साँप को हाथ में ले लिया। मणि की रोशनी साँप के पेट में समा गई और तब... और तब हाथ का साँप उस पर फेंका टिकोरा ने और...

और अन्धकार में सँपेरे के गले से एक चीख निकली।

'हा-हा-हा !' अट्टहास कर टिकोरा और आगे बढ़ा।

सभी भय से तितर-बितर हो गये।

पागल-सा टिकोरा मैना की लाश लिए चला जा रहा था अपने घर की ओर। आशा पर ही इन्सान जीता है। टिकोरा भी अपने हाहाकार करते अन्तर में एक आशा दबाये मैना को लेकर गांव आया था। फिर से उसे जिला देना चाहता था।

उसकी चाल की तेजी धीरे-धीरे कम होती जा रही थी।

'देख मैना ! यह तेरा घर है। मेरे उस्ताद का घर...'

यहां थक गया वह। घर की ओर देखते हुए बोला—'उस्ताद ! आज मैं जीत गया हूँ। टिकोरा उस्ताद बन गया है... तुम्हारी दया से नहीं...हा-हा-हा !'

वहां से वह अपने घर आया। भीतर अँधेरा था। मन्तर पढ़ते ही साँप ने मणि उगल दी। मणि की रोशनी से घर का अँधेरा भाग गया। मैना की लाश चारपाई पर धीरे से लिटा दी उसने। बोला—'अब सो जा मैना रानी ! बहुत तड़पाया है तुमने टिकोरा को। आज यह सँपेरा तुम्हारे परदेसी से हार गया। खबरदार फिर भागने की कोशिश न करना।

और विक्षिप्त-सा वह भी मैना की बगल में गिर पड़ा। कलेजे से लगा लिया मैना की लाश को। क्रोध से जलती रहने वाली टिकोरा की आँखों में उस क्षण जाने कहाँ से बादल आ घिरे। भयानक पुरुष के आँसू कितने भयानक होते हैं, कोई देखता तो कहता। साँप ने मणि अपने मुँह में रख ली।

अन्धकार फिर छा गया।

● ●

'कविता !' कुँवर अचलनारायण ने धीमी आवाज में पुकारा।

'हूँ !' कुँवरानी का जवाब था एक अक्षर का। सर झुकाये खड़ी थी वह कुँवर की बगल में।

'हूँ क्या ! जरा इधर तो देखो... मैंने तुम्हारा इतना बड़ा-सा नाम लेकर पुकारा और तुमने सिर्फ 'हूँ' भर किया।

'तो क्या कहूँ ? आपका नाम तो ले नहीं सकती !' कविता का सर ऊपर उठ गया। मदभरे नयन कुँवर को देखने लगे। होठों पर मन्द-मन्द मुस्कान खेलने लगी।

'मेरा नाम लेने से तुम्हारा कुछ बिगड़ जायगा !' कुँवर कुँवरानी को अपलक देख रहा था।

'नहीं तो...मगर हिन्दू स्त्रियाँ कभी पति का नाम लेती हैं क्या ?' प्रश्न किया कविता ने।

कुँवर खामोशी से कुँवरानी को देख रहा था।

'बोलिए न ? चुप क्यों हो गये ? अरे, आप तो इस तरह देख रहे हैं जैसे कभी देखा हो न हो...' कुँवरानी बोली।

'तुमने मुझे देखने का मौका ही कहाँ दिया कुँवरानी !... तुम्हें जिन्दगी भर भी देखूंगा तो शायद ही समझ पाऊँगा, तुम कविता जो हो।'

''आप तो सचमुच कविता करने लगे।'

'तुम ऐसी हो ही कुँवरानी...' कुँवर बोला—'मेरी कविता मेरे मरने के बाद समझ सकोगी।'

'मरने की बात मत कीजिये।' कविता का स्वर भींग गया। उसकी आँखों से अनायास ही आँसू निकल पड़े।

'पगली, यह क्या ?'

मगर कुँवरानी क्यों सुनने लगी ? बोली—'ऐसा मत कहिए। सालों बाद तो आप मिले हैं। आपके वियोग में किस प्रकार कलेजा पत्थर करके जी रही थी... उफ् !... मासूम ललित को छाती से लगाकर रात-दिन की दूरी एक कर रही थी। ललित के भोले-पन में आपकी सूरत की छाया देखती थी तो दिल में दर्द उठ खड़ा होता था। ललित को देखकर सन्तोष तो होता मगर शांति नहीं मिल पाती। खिले फूल की याद को भला कोमल कली कैसे मिटा सकती है। पति और पुत्र में यही तो अन्तर होता है। पति जवानी का सम्बल है और पुत्र बुढ़ापे का सहारा....' कविता की आँखों में बीते दिन मचल उठे थे। हृदय की पीर नयन का नीर बन पलकों पर छा गयी थी।

'कविता ! पागल मत बनो, मैंने तो मजाक किया था सिर्फ !' कुँवर ने कुँवरानी को खींचकर अपने वक्ष से दबा लिया।

'पागल ही तो हूँ। नारी पागल ही तो होती है। पागलपन में नारी मिट जाती है कुँवर साहब ! अपने पुरुष को बचाने के लिए—मैना भी नारी थी.... देखा नहीं आपने ?'

उपदेश पर उतर आई थी कुँवरानी—'निरीह मैना ! आपको जीवन देकर स्वयं अपनी जिन्दगी से हाथ धो बैठी। नारी की

पीड़ा दुनिया का कोई पुरुष नहीं समझ सकता।'

'अगर यों हीं रोज अपनी मधुर वाणी से मधु लुटाया करोगी तो एक न एक दिन नारी को समझ ही लूंगा।' हँसते-हँसते बोले अचल—'अब तक तो नारी को आँसू से भींगा-भींगा ही पाया है मैंने ! जरा अपने हसीन चेहरे को आईने के सामने रखकर तो देखो। आँसू बन गई हो एकदम।'

'नारी और आँसू एक ही चीज होती है और जमाने की गर्दिश में पड़कर वह भी ज्वालामुखी बन जाती है...'

'लो ! अब तो तुम भी कविता करने लगी।'

'बात तो मजाक में उड़ाने की कोशिश न करें कुँवर साहब।'

'मैं दिल्लगी नहीं करता, दिल-लगी करता हूँ....' बोले कुँवर। उसने कुँवरानी को अपने अङ्क में भर लिया—'अब बस भी करो। नारी के विषय में काफी वकालत हो गई। और कहोगी तो बयान भूल आऊँगा....अभी नादान हूँ नऽ, क्यों ?'

'आपसे अधिक तो मेरा ललित ही समझदार है।'

'ललित तुम्हारा ही नहीं...उसके निर्माण में अपना हाथ भी कम नहीं था !' शरारत से हँसकर कहा कुँवर ने।

'वही सही...मगर आप तो...बड़े वैसे हैं आप, शर्म भी नहीं आती बोलते हुए ..' कविता कुँवर की बात सुनकर लाल हो उठी थी, सबेरे की ऊषा की भाँति।

ऐसे ही रात बीत गई। सबेरा आया... बिलकुल नया सबेरा। आज राजमहल में चारों ओर खुशी खिलखिला रही थी। कोई जश्न मनाया जाने वाला था।

'बहूरानी !' किसी ने बाहर से पुकारा।

कविता अचल के आलिङ्गन से बिछुड़ कर अलग बैठ गई। अपनी अस्त-व्यस्त भावभंगिमा संयत करने लगी।

'तुम लोग चुप बैठे हो ?' कहती हुई रानी साहिबा ने वहाँ प्रवेश किया। कविता उठकर खड़ी हो गई—'कैसी तबीयत है अचल ! ठीक तो है नऽ।' रानी साहिबा कुँवर के पास आ गई

बोलीं—'बहू ! जरा देख तो बाहर लोग क्या कर रहे हैं ?'

कुँवरानी चली गई तो रानी साहिबा अचल के पास आकर इधर-उधर की बातें करने लगीं। बात की बात में बीते दिन जाग उठे। रानी साहिबा ने अचल को कोसा भी—

'मुझे क्षमा कर दीजिये माताजी ! जो कुछ हुआ मेरी असावधानी से। चञ्चल का इसमें क्या कसूर, वह तो नादान है...'

'जो कुछ होना था वह तो हो चुका। अब तो सावधानी बरत !' रानी साहिबा बोलीं—'तुमसे तो कहीं अच्छी बहू है।'

'तभी तो मेरे लिए ला दिया है आपने उसको...'

उसी समय कुँवरानी बाहर से आ गयी और अचल ने उसकी ओर देखकर कहा—'क्यों कविता !'

सुनकर झेंप गई वह। बोली—'माताजी ! वारिस शहर जा रहा है...उसे रुपये दे दीजिये'

सकुची-सिमटी खड़ी थी बेचारी कुँवरानी। कुँवर की आंखों से उसकी आंखें टकराईं तो झिझक सी गई।

'ललित आपके कमरे में है माताजी !' झिझक मिटाने के लिए बोली कुँवरानी।

'हाँ ! जा उसे नये-नये कपड़े पहना दे। आज उसके बाप का जन्म-दिन है नऽ, जरा वह भी देखे। कितना भाग्यवान है ललित मेरा कि अपने बाप को भी जन्म लेते देख लिया उसने !' बोलीं रानी साहिबा।

कुँवरानी जाने लगी तो रोक लिया उन्होंने। बोलीं—'ले यह ताली और रुपया निकाल कर वारिस को दे दे !'

ताली लेकर कविता नौ-दो ग्यारह हो गई।

'बैठिये न माताजी ! आप खड़ी क्यों हैं ?'

'उस दिन लाख मना किया, लेकिन शिकार को चले ही गये तुम !' बैठती हुई बोलीं रानी साहिबा—'तुम्हारा भी क्या कसूर था। यह भगवान की मरजी थी और चञ्चल की चाल....होनी थी सो हो के रही...बड़ा शैतान निकला यह चञ्चल !'

कहते-कहते रानी साहिबा के अन्तर की कसक गले तक आकर कांप उठी, जिसे कुँवर ने अच्छी तरह लक्ष्य किया पर बोला नहीं कुछ। रानी साहिबा कुछ देर बाद चली गयीं।

शाम को राजमहल लाल-पीले और नीले-हरे कागजों से शोभायमान हो उठा था...हर तरफ से फूलों की भीनी-भीनी मदहोश करने वाली खुशबू उड़-उड़कर बिखर रही थी। बिजली के छोटे-छोटे रंग-बिरंगे बल्ब ऐसे लग रहे थे जैसे तारे छींट दिये गये हों! पूरा महल मुस्करा रहा था।

कुँवरानी ललित को गोद में लिए देख रही थीं वह हसीन मंजर! आज उसके शरीर पर रेशम के कीमती वस्त्र थे। हाथों में सोने की चूड़ियाँ चमक रही थीं। आज सुहागिन जो हो गई थी तो क्यों नहीं दुल्हन बनती। कुँवरानी कुँवर के समीप आई तो उसने देखा—कुँवर दुल्हा बनकर बैठा था। कविता की गोद में ललित को देखकर वह बोला—'आ बेता, मेला ललित...लकली का घोला लेगा?' दोनों हाथ फैलाकर कहा कुँवर ने तुतलाने का अभिनय करते हुए।

ललित ने उत्तर में माँ की ओर देखा।

'जा....जा न।' कविता ने ललित से कहा।

माँ की ममता छोड़कर ललित पिता के प्यार में चला आया। कुँवर ने जोरों से उसे कलेजे से लगा लिया। बाहर खुशी के बाजे बज उठे। मधुर आवाज से वातावरण गुञ्जरित हो उठा।

'माँ बाजा!' ललित बाजा सुनने के लिए मचल उठा।

'चलो, मैं तुम्हें दिखाऊँ बाजा।' कुँवर कहते हुए उठ खड़ा हुआ। कुँवरानी भी खड़ी हो गईं।

बाहर भीड़ उमड़ पड़ी थी अपने राजा को देखने के लिए, और उस भीड़ के सागर को रोकने के लिए वफादार नौकर वारिस अपनी लम्बी-चौड़ी काया लिए बाँध बनकर खड़ा था, सदर गेट पर। वह लोगों को समझा रहा था और मेहमानखाने का रास्ता बता रहा था।

'क्यों भाई ! तुम्हारा मालिक अजगर के पेट से निकल आया ...अनहोनी हो गई।'

'वही होता है जो मंजूरे खुदा होता है। यह तो खुदा की मिहरबानी है, मौत का शिकार होकर भी हमारे आका सही-सलामत वापिस आ गये। जरा-सी खरोंच तक नहीं आई।' हँसता हुआ बोला वारिस।

'मारने वाले से बचानेवाला बड़ा होता है भैया !'

'खुदा की कसम, तुमने सवा लाख की बात कह दी।' वारिस ने अपनी निगाहें आसमान की ओर उठाईं। अल्लाह का शुक्रिया अदा करने के लिए।

सभी अपने राजा के दर्शन कर वापस लौट गये। रानी साहिबा ने कंगालों को मुक्त-हस्त से दान दिया। फिर कुँवर और कुँवरानी को आशीर्वाद देकर तीनों महलों का निरीक्षण करने चल पड़ीं। फाटक पर आईं। वारिस को हाथ में बन्दूक लिए खड़ा पाया उन्होंने—'अरे, तू अभी तक यहीं है, खाना खाया? जा आराम कर ले, गुलशन इन्तजार करती होगी।'

'आपकी मेहरबानी ही वारिस का पेट भरने के लिए काफी है रानी माँ ! खुदा कसम ! आज तो कुँवर साहब ने वो मिठाइयाँ खिला दीं हुजूर कि वाह...फिकर न करें, गुलशन अपने चुनमुन के साथ हँसती-खेलती होगी...'

रानी साहिबा पलट कर चञ्चल के महल की ओर मुड़ीं। वारिस भी साथ चल पड़ा। चञ्चल अभी तक जाग रहा था। वह कुँवर की तस्वीर देख रहा था। फूलों की माला थी उस पर।

'अब आई है अकल।' रानी माँ ने देखकर कहा।

'अकलमन्द भैया जो आ गये माँ !...अब तुम्हारा चञ्चल समझदारी की दुम बन गया है।' हँसते हुए बोला चञ्चल।

'समझदारी की दुम साहब ! खानदान के रीति-रिवाज का भी ख्याल है कुछ? जा पहले बड़े कुँवर का पैर छू आ।'

'वह तो पहले ही कर चुका माँ !'

'क्या कह रहा था अपने भैया की तस्वीर से ?'

'कह रहा था...अब मैं सुधर गया हूँ भैया !' अभिनय करता हुआ कहने लगा चंचल—'माँ से कह देना। मेरे शरीर पर इतने कोड़े लगवा चुकी हैं कि अब कोई जगह ऐसी बाकी नहीं रह गई जहाँ अपना गुस्सा उतार सकें...बस !'

'शैतान !' बोली हँसकर रानी साहिबा और उन्होंने चंचल की पीठ पर एक चपत जमाई—रानी साहिबा उसकी चंचलता देखकर आज ही खुलकर हँसी थीं। उन्हें प्रसन्नता थी कि उनका आवारा बेटा सुधर गया है। भला पीतल को सोना होता देख, किसे खुशी नहीं होगी। बाहर जाती हुई माँ के चरण चंचल ने छुए और अपने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया।

माँ-बेटे उलझ कर अलग हो गये और इधर—

पति पत्नि का संवाद आरम्भ हुआ।

'क्या सोच रही हो कविता ?' अचल ने पूछा।

'टिकोरा और मैना के बारे में....' एक ठण्ढी साँस खींचकर बोली वह—'वह त्यागमयी प्रेम की प्रतिमा। कितना प्यार करती थी आपको....' कहते-कहते रुक गई कुँवरानी। थोड़ा रुककर फिर कहने लगी—'अपना जीवन खोकर उसने आपको जिन्दगी दी और आप सब कुछ पाकर भूल ही बैठे उसे।'

'मेरी समझ में कुछ नहीं आता है कविता...तुम्हारी बात कहानी जैसी लगती है। अजगर की चपेट में आते ही मैं होशो-हवास खो बैठा था और जब बेहोशी दूर हुई तो टिकोरा और मैना को देखकर जान भी न सका कि वे किस देश के हैं, और मैं किस देश का। इसमें भला मेरा क्या कसूर ?'

थोड़ी देर बाद वह पुनः बोला—'कविता !'

मगर कविता मौन रही। कुँवरानी की आँखों में मैना की मनोहर छाया नाच रही थी। उसके अमर त्याग के विषय में सोचकर विचलित हो उठती थी वह।

'कविता तुम रो रही हो ? तुम्हारे साथ इतने दिन गुजर गये

किन्तु तुम्हें रोते नहीं देखा था कभी—आज यह क्यों ?'

'आपसे कुछ भी तो नहीं छिपाया है अब तक ?' कविता ने साड़ी के छोर से बहते आंसुओं को पोंछा, फिर बोली—'पत्नी-पति का अधिकार और अपना कर्त्तव्य जानती हूँ—और...'

'और कुछ नहीं...पहले इन आंसुओं की कहानी तो कहो... क्यों टूट पड़े थे ये तारे आँखों के आकाश से ?'

'आंसू तो बेवफा होते हैं, इनकी कहानी क्या ?'

चेहरे पर हँसी छा गई। मुस्कान की एक रेखा होंठों पर लोट गई कुँवरानी के।

'हँसी की एक रेखा गम की हजारों रेखाओं को नहीं काट सकती। कुछ छिपाने की कोशिश मत करो, साफ-साफ कहो, क्यों रो पड़ी थी तुम ?'

'तो सुन ही लीजिये !' कहने लगी कविता—'मैना ने मेरे सुहाग को अमर किया, मेरे जीवन-दीप को जलाया, मेरे सुनसान हृदय को आबाद किया। मगर उसे क्या मिला, मौत ही तो...' कहते-कहते उसके गले में करुणा आ बैठी। टिकोरा की याद से कांप उठी वह। जैसे उसे सांप सूँघ गया हो।

'जाने दो कविता, बीते दिनों की स्मृति शूल होती है...' कुँवर ने कविता का हाथ अपने हाथों में ले लिया।

लेकिन वह कहती ही गई—'मैं उस देवी का चरण भी नहीं छू सकी और टिकोरा मौत बनकर ले भागा उसे—पता नहीं कहां ? कितना जालिम था वह शैतान !'

'टिकोरा कौन था ?' कुँवर ने पूछा।

'मैना का प्रेमी ! किन्तु मैना तुम्हें चाहती थी। इसीलिए टिकोरा तुम्हारी जान का भूखा हो गया था। उसी ने तुम्हें अजगर के पेट से निकाला था और तुम्हें मारने के लिए सांप भी उसी ने छोड़ा था।'

'अजीब किस्सा है ?'

'हां...मैना को हासिल करना चाहता था टिकोरा, चाहे जैसे

थी... और वह उसे मिली थी, मगर एक छाया के रूप में। वह तुम्हारे पास खाली पिंजड़ा भी नहीं देखना चाहता था। ओह! उसकी वह आवाज—* 'परदेसी बाबू! आज तुम्हारे दरवाजे से हार कर जा रहा हूँ। मैना मेरी है। तुम इसे नहीं पा सकते....' कितनी दृढ़ता थी उसके स्वर में। सचमुच आप मैना को नहीं पा सके, पा नहीं सकते आप....'

सोचकर विचलित हो उठी कविता। वह लेट गई बिस्तर पर और लेटे-लेटे वरदान देने वाली देवी की आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना करने लगी भगवान से।

'कविता!'

'हूँ!' सो नहीं सकी थी वह। आँखें मूँदे पड़ी थी केवल।

'अब सो जाओ। जो हो गया सो हो गया।' कहकर कुँवर ने 'वेडस्वीच' आफ कर दिया।

कुँवर करवट बदल कर सो गया किन्तु कुँवरानी अँधेरे में करवट बदलती रही। जरा भी आँख लगती तो पलकों की छाया में सपने जाग पड़ते और मैना की मुस्कुराती मोहिनी सूरत सामने आ कहने लगती—'परदेसी को जान दी है मैंने सरकार! इसे सँभाल कर रखना, मेरा परदेसी बड़ा मासूम है, फूल की चोट भी बरदास्त नहीं कर सकता....' आज कुँवर उसके समक्ष उसका पति ही नहीं, मैना की सौंपी अमानत भी है।

आकाश की सफेदी पर ऊषा की गुलाबी छाने लगी। संसार के सुनहले सपने टूट गये। लोगों की आँखों की नींद आकाश का तारा बन गई।

'वारिस?'

'हजूर!' कविता का स्वर कानों में पहुँचा और वारिस हाथ जोड़े उपस्थित हो गया।

'जाकर डाक्टर दास को बुला लाओ...'

थोड़ी ही देर में आँधी की तरह डाक्टर साहब को लेकर

* देखिये पराया का अन्तिम परिच्छेद।

हाजिर हो गया वह। कुँवर के पैरों की पट्टी बदली गई, जहाँ से मुँह लगाकर मैना ने जहर चूसा था।

सुबह की मदहोश हवा सोये गाँव को गुदगुदाने लगी। गाँव के आगोश में सोये लोग रात के सपनों को सँवारने लगे।

टिकोरा अब भी सो रहा था बेखबर, मैना को कलेजे से लगाये....हफ्तों से मैना के पीछे जगा टिकोरा आज चैन की नींद सो रहा था। दरवाजे का कलेजा जमाने की गर्दिश से टूट चुका था। विच्छिन्न दरवाजे के रास्ते गरम सूरज की तीखी किरणें टिकोरा के बदन को आहिस्ता-आहिस्ता सहला रही थीं। थोड़ी ही देर में गर्मी पाकर वह जाग पड़ा। उठते पर सबसे पहले उसकी नजर मैना पर पड़ी। अँगड़ाई ली उसने, शान्ति की एक लम्बी साँस खींचकर वह खड़ा हो गया।

'मैना !...मेरी रानी !' कहते-कहते फिर बैठ गया टिकोरा मैना की बगल में। मैना चुप रही।

'मैना ! आज हार गया हूँ मैं ! तुमसे हार गया है टिकोरा ! आज टिकोरा की ताकत तुम्हें नहीं बाँध सकती...' बोला टिकोरा असंयत स्वर में—'मगर...मगर अभी लड़ूंगा मैं...अभी लड़ूंगा तुम्हारी मौत से !' एक-ब-एक कठोर हो गया टिकोरा। चट्टान-सा दृढ़ हो उठा। आँखों में चमक-सी आ गई।

'कब तक तुम मौत से मुहब्बत करोगी ! देखेगा टिकोरा। तुम्हें अपनी बनाकर ही छोड़ूंगा !' और अपनी भुजाओं में उठा लिया उसको—'जय उस्ताद !' अनजाने में वह बोल गया।

और तब उस्ताद फेरई की आकृति उसकी आँखों में जाग पड़ी। चेहरे पर व्यङ्ग्यपूर्ण हँसी फैल गई।

'उस्ताद !...आज रहते तुम तो देखते, टिकोरा किसकी कृपा से उस्ताद बना है। मैना भी मेरे पास है—तुमसे भी ऊपर उठ गया है टिकोरा।' वह बुदबुदा उठा।

टिकोरा को किसी ने उस्ताद नहीं माना है, लेकिन वह

अपने से ही सारे गांव का उस्ताद बना है ! किसी की हिम्मत नहीं कि जरा भी टिकोरा से आँखें मिला सके। सभी उसके डर से थर-थर कांप रहे हैं। सांप का जहर उतार सकते हैं गांव वाले मगर टिकोरा की बातों का असर जो उनके दिलों में भय बनकर उतर गया है, उसे वे दूर नहीं कर सकते। रात में ही आया टिकोरा और एक को सुरधाम भेज दिया। समूचे गांव में सनसनी फैल गई है, जैसे एक बार अजगर के पेट से परदेसी के निकलने पर फैली थी।

टिकोरा मैना को उठाये जंगल की तरफ चला। इस समय टिकोरा के चेहरे पर क्रूरता के बजाय विषाद की रेखाएँ उभरी थीं। आंखें भीगी थीं पर नीची नहीं। अङ्ग-अङ्ग से वही पुरानी अकड़ झांक रहा थी। थोड़ी ही देर में हांफता हुआ एक ऊंची चट्टान की चोटी पर जा पहुँचा वह। दूसरी तरफ पहाड़ का उतार लेटा था। नीचे पहाड़ी नदी कल-कल कर बह रही थी। ढाल पर धीरे-धीरे उतरने लगा टिकोरा। नदी के पास पहुँचकर उसने मैना को एक साफ-सुथरी शिला पर लिटा दिया, तभी... एक झाड़ी में खड़-खड़ की आवाज हुई। उसने पीछे पलटकर देखा। किसी को देखकर बोल उठा—'कौन है ?' मगर तब तक 'कोई' छिप गया। टिकोरा ने अधिक ध्यान नहीं दिया उधर।

'कैसा हसीन मंजर है।' अपने आप बोला टिकोरा और फिर—'मैना, जरा अपनी आंखें खोलकर तो देखो...'

मैना ने आंखें नहीं खोलीं, उसकी आंखें नहीं खुलीं तो टिकोरा रो पड़ा। थोड़ी देर बाद उसने मैना को गोद में उठाया। उसके शरीर से लिपटे सांप के चमड़े को उतारा। बेजान जिस्म की खूबसूरती कुछ देर निहारता रहा। फिर नदी में मैना की लाश को नहलाया... खुद भी नहाया।

शीतल जल ने उसके थके शरीर में प्राण भर दिए।

मैना को फिर उन्हीं वस्त्रों में लपेट लिया उसने।

फिर जमीन पर पालथी मारकर बैठ गया, आंखें बन्द कर

लीं। उसके भयानक होठों में कम्पन होने लगा। हाथों में हरकत हुई। चुटकी में धूल लेकर दक्षिण दिशा में फेंका उसने। यह क्रिया कुछ देर तक चलती रही। दूसरी, तीसरी, चौथी बार भी धूल लेकर दक्षिण की तरफ फेंका उसने। उसके होठों का कम्पन रह-रह कर तेज हो रहा था। उसने धूल की पांचवीं चुटकी भी दक्षिण दिशा की ओर फेंकी।

और पांचवीं चुटकी का फेंकना था कि कोई चीज उड़ती, हनहनाती उसके आगे आकर गिर पड़ी। उसे टिकोरा ने अपने हाथों में उठा लिया और सहलाने लगा।

'फों !' हाथ की चीज फुत्कार उठी। सांप था वह, विकराल ! सांप की आंखों में देखते हुए मन्तर पढ़ रहा था टिकोरा। उस झाड़ी से, जिधर से खड़खड़ाहट की आवाज आई थी। चार आंखें टिकोरा की गतिविधि देख रही थीं। टिकोरा इस बात से पूर्णतया अनभिज्ञ था। एकाएक वह उठ खड़ा हुआ और मैना को कन्धे पर लादकर गांव की ओर चल पड़ा।

टिकोरा के चले जाने के बाद झाड़ी की आंखें आदमी के रूप में बाहर निकल आईं। दोनों व्यक्तियों में जाने क्या-क्या बातें हुईं और वे उधर ही चल पड़े, जिधर अभी-अभी टिकोरा गया था। एक मर्द था और एक थी औरत।

जब से टिकोरा गांव में आया है तब से उसकी खबर लेने कोई नहीं आया। गांव भर टिकोरा के खिलाफ था। बच्चे-बूढ़े और गांव के पंच भी नाराज थे उससे। उस्ताद की मौत से टिकोरा कैसे पूज्य हो सकता था ? उसने एक उस्ताद को ही नहीं, कितनों को ही मारा था। *चमकू और लजारो का हत्यारा भी वही था। रात उसने एक सँपेरे को भी मारा था। इतना ही नहीं, मैना का अपहरण भी उसने किया था। गांव के सँपेरे घिसावी के घर जुटे थे। घिसावी ! पञ्चों में से एक बुजुर्ग सँपेरा।

'अब क्या होगा बाबा ?' एक सँपेरा था।

---

* चमकू और लजारो कौन थे ? 'परदेसी' देखिये।

'होगा क्या। वही होगा जो अजगर के चपेट में आ जाने से होता है।' सफेद भौंहों को ऊपर उठाकर बोला धिमानी।

'टिकोरा से बदला लेना होगा। उसने उस्ताद की जान ली और अपने मन से उस्ताद बन बैठा है। बाबा! उसकी परीक्षा लो, हम भी तैयार हैं, जो जीतेगा वही सरदार बनेगा।' दूसरा सँपेरा था वह।

चुपचाप सर नीचा किए सोचता रहा धिमानी। बूढ़े चेहरे की झुर्रियों पर चिन्ता के चिह्न थे।

'मैना का क्या होगा बाबा!' यह चिकोरा था। टिकोरा के खिलाफ वह भी आया था—'अगर ऐसे ही वह गांव की बहू-बेटियों को जबरदस्ती लूटने लगेगा तो इज्जत रास्ते की धूल बन कर रह जायगी। बाहर निकलना मुश्किल हो जायगा।'

गांव के सभी सँपेरे मौजूद थे वहां। धिमानी ने सुना और इस बार भी उसकी चुप्पी भंग न हो पाई।

'तारा तोड़ने के लिए आकाश पर चढ़ना ही होगा। जिसे उस्ताद बनने की हसरत है मैदान में उतरे?' चिकोरा कहता जा रहा था—'सांप छोड़ा जाय ...जो जीते, बाजी उसकी ...' फिर उसने चारों तरफ देखा और अपनी जगह बैठ गया।

चिकोरा के बैठते ही सँपेरों में काना-फूसी होने लगी। सन्नाटा फुसफुसाहट में परिवर्तित हो गया। धिमानी भी अब तक चुप था। सभी के चले जाने बाद धिमानी गम्भीर होकर ठण्डे दिल से विचारने लगा। टिकोरा में गुण और करतब दोनों हैं मगर है बदमाश! जरा-सा अपने को सुधार ले तो उस्ताद फेरई से कम नहीं। सारी विद्या तो सिखा दी है उस्ताद ने उसे।

इधर सभी टिकोरा से युद्ध करना चाहते थे और टिकोरा!

वह जानता था कि सांप के विष से इन्सान इतनी जल्दी मर नहीं सकता...परन्तु नहीं। और उसे यह भी मालूम है कि मैना के ऊपर उस्ताद वाले सांप का जहर चढ़ा है जिसे दूर करने की क्षमता स्वयं उस्ताद में नहीं थी। मणि वाले सांप का जहर वह

आग जल रही थी; धुआँ उठ रहा था। कमरा बेमौसम ही सावन की काली घटाओं से आच्छादित हो उठा था। चारपाई पर मैना लेटी थी। पास ही भूला-भूला टिकोरा आँखें मूँदे बैठा था। उसके होंठ बुदबुदा रहे थे। वह हाथों से आग में किसी प्रकार का भस्म छोड़े जा रहा था। उससे एक तीव्र गन्ध निकल रही थी। विषैला धुआँ जब-जब टिकोरा की नाक में घुसता वह अपनी नाक बन्द कर लेता। थोड़ी-थोड़ी देर पर वह रुक जाता और अपनी क्रिया का प्रभाव मैना के ऊपर देखने लगता।

'नहीं बोलेगी मैना ?' टिकोरा के अन्तर की करुणा गले पर दर्द का रूप धारण कर फूट पड़ी—'मेरी रानी ! तुम्हें बोलना ही होगा आज तो...'

अपनी सारी ताकत लगाकर मन्त्र पढ़ने लगा टिकोरा। उसने उस्ताद के बताये सभी मन्त्रों को दुहरा डाला मगर मैना हिली तक नहीं। किसी जड़ी का पीला बुरादा लेकर उसने जलती आग में डाला। रंग-बिरंगी लपटें उठकर विलुप्त हो गयीं।

थोड़ी देर बाद उसी बुरादे को लेकर साँप के तेल में मिलाया और मैना के शरीर पर मालिश करने लगा। लाख दवा करके हार गया टिकोरा, कुछ भी असर नहीं हुआ। असर नहीं हुआ उसके मन्त्र का, उसकी दवाओं का, तो पागल बन गया। पास पड़े पत्थर को उठाकर अपने सर पर दे मारा। उसके चेहरे पर अजीब बेबसी व्याप्त थी।

बदहवास बैठे टिकोरा के चेहरे पर आशा की एक किरण जल उठी। वह उठ खड़ा हुआ और और दरवाजे की ओर दौड़ पड़ा। दरवाजे पर किसी व्यक्ति से टकराकर ठहर गया।

'तुम !' सँभल कर संयत स्वर में टिकोरा ने पूछा।

'पहिचान नहीं सके ?'

'खुद को भूलने वाला, तुम्हें क्या पहचानेगा चिकोरा !'

'जरा अपने को याद करो नहीं तो बरबाद हो जाओगे।' चेहरे पर घृणा थी चिकोरा के।

उसके भावों को पढ़कर जल उठा टिकोरा। क्रोधित हो बोला—'चिकोरा!' आगे नहीं बोल सका टिकोरा। उसके आगे मैना की आकृति नाच उठी और तब उसका ख्याल आया।

'जरा कायदे से बोल टिकोरा!'

'टिकोरा नहीं...उस्ताद कहो...देखते हो यह सांप!' विकराल मणिधर को गले से उतारते हुए बोला टिकोरा—'यह उस्ताद का सांप है। इसे भूले तो नहीं ही होगे?'

'तुम्हें किसने उस्ताद बनाया?...' प्रश्न था चिकोरा का।

'किसी की किरपा से नहीं बना, इतना ही जान लो, बखत नहीं है, नहीं तो बता कर ही जाता...' कहता हुआ टिकोरा जंगल की तरफ दौड़ पड़ा।

चिकोरा मुड़कर घर के अन्दर गया। देखा—मैना सोयी थी पलकें बन्द किये।

'मैना!' धीरे से पुकारा उसने।

मैना कहाँ से बोलती। वह तो उड़ चुकी थी, पिंजड़ा खाली पड़ा था। चीख पड़ा चिकोरा। अब वह समझ गया, टिकोरा क्यों गम्भीर था? क्यों रह-रहकर विचलित हो रहा था।

दौड़ा-दौड़ा वह चारपाई पर बिस्तरे की तरह फैल गया। उसके मस्तिष्क की नसें तन रही थीं। तन्तुओं की सजीवता लुप्त होती जा रही थी। उसका अन्तर, चीख पड़ा—'मैना मर गई, कैसे मर गयी मैना?' और उसकी आँखों के आगे टिकोरा की खूंखार छाया आकर खड़ी हो गई अट्टहास करती हुई।

'टिकोरा!' तेज मगर धीमी आवाज में चीख पड़ा वह। उठकर बैठ गया। आँखों में क्रोध तैर आया।

'क्या है मेरे राजा! बहुत खोये-खोये नजर आ रहे हो?' घर के अन्दर पैर रखती हुई चमकी ने पूछा—'टिकोरा के पास गए थे वह? क्या कहा मरदूद ने? हाथा-पाई तो नहीं हो गई? क्या सोच रहे हो जी? कहो न साफ-साफ।'

वह चिकोरा के बिल्कुल समीप बैठ गई आकर।

'मैना कैसी है रसिया !' चमकी ने पुनः पूछा ।

'उसे टिकोरा ने साँप कटा दिया, वह मर गई । गोरी देह काजल बन गई है । टिकोरा मैना को नहीं, उसकी लाश लेकर आया है—शैतान !' दाँत पीसता हुआ बोला चिकोरा ।

'तब तो परदेसी को भी मार डाला होगा उसने...क्या कर रहा था करैत ।'

'जङ्गल गया है ।'

'सबेरे ही तो मैंने और शीतल बाबू ने देखा था...मैना को नहला रहा था नदी में, तभी तो कुछ बोली नहीं मैना...वरना टिकोरा की ऐसी की तैसी, वह क्या छू सकता था उसे । अब क्या होगा ?' अपनी सहेली की मौत से घबड़ा उठी थी वह । उसकी आँखें भर आई थीं । उसका मगज काम नहीं कर रहा था कुछ ।

'पूछती हो उसका क्या होगा...अजगर का माँस बनाकर बँटवा दूँगा गाँव में...' चिकोरा के स्वर में प्रतिकार की भावना टपक रही थी ।

कुछ क्षण पश्चात उसने कहा—'शीतल बाबू कहाँ हैं ?'

'बाहर साँप और नेवले की लड़ाई देख रहे हैं, बुला दूँ ?'

'नहीं; जखम तो ठीक हो गया है नऽ ?'

'ठीक ही समझो अब तो...'

'अच्छा, जा अब...आँखें लग रही हैं मेरी ।'

चमकी उठकर शीतल के पास चल पड़ी । दरवाजे के बाहर पैर रखा ही था उसने कि किसी को वहाँ खड़ा पाया ।

'तुम ! छिपकर हम लोगों की बातें सुन रहे थे ?'

'नहीं....'सर हिलाकर उत्तर दिया उस व्यक्ति ने—'मैं तो यहाँ तक तुम्हें बुलाने आया था, मगर...'

'हटो जी, बातें खूब बना लेते हो, शहरी छैला हो नऽ !' बोली चमकी और उसका हाथ पकड़ दूसरे कमरे में खींच ले गई ।

वह शीतल ही था । खड़ा होकर बातें सुन रहा था ।

आकर चारपाई पर बैठ गये दोनों ।

'टिकोरा की बातें हो रही थीं ? वही नऽ जिसे नदी पर दिखाया था तुमने ।' शीतल ने पूछा ।

'हाँ, जी ! मैना को डँस लिया उस गेहुँअन ने । परदेसी भी नहीं बच सका । बेचारा परदेसी ! बड़ा भोला था वह...बिलकुल तुम्हारी तरह...' बोली चमकी—'जरा बगल हो जाओ अलबेले! तनिक लेट लूं !'

'परदेसी के विषय में बता सकती हो चमकी !' शीतल ने प्यार भरे लहजे में पूछा ।

'शहर का ही तो था वह ! जहाँ तुम रहते हो । अजगर के पेट से निकला था बेचारा । मैना के बापू ने बचाया था उसे ! मैना के बापू उस्ताद थे नऽ उनके हाथ में जस था...मन्तर पढ़कर मुर्दे को छूते तो जी उठता था ।' उन्मीलित नेत्रों से देख रही थी चमकी शीतल को ।

अजगर के पेट में जाकर कोई बाहर निकल सकता है ?

शीतल को यकीन नहीं हो रहा था । यहां की हर चीज में उसे विचित्रता दिखाई देती थी ।

'तुम्हें विश्वास नहीं होता ?' फिर प्रश्न किया चमकी ने ।

शीतल चुप रहा । उसे विश्वास कैसे हो ? शहर का बासिन्दा, सभ्य संसार का प्राणी, कैसे यकीन करता वह । नानी के मुँह से सुनी कहानियों की तरह उसे सब झूठा लग रहा था । सांप काटे इन्सान को जीते नहीं देखा तो अजगर के पेट से निकले जीवित इन्सान के बारे में कैसे धारणा बना ले ।

शहर में सुना था उसने कि सँपेरे सांप खाते हैं । इसे भी वह उनकी दुनिया में आने के पूर्व मनगढ़न्त कहानी ही समझता था । मगर अब तो वह देख रहा है कि सँपेरे सांप खाते हैं । चमकी ने बहुत-बहुत से जादू-मन्तर के खेल भी दिखलाये थे । इस अनहोनी पर भी उसे यकीन करना ही पड़ा ।

'अजगर देखा है तुमने बाबू ?'

'नहीं...'

'यहाँ हो तो देख ही लोगे कभी न कभी।'

'अब कुछ देखने की अभिलाषा नहीं रही चमकी, सिर्फ घर जाने की तमन्ना है...मुझे जाने क्यों नहीं देती तुम ?' चमकी की ओर देखता हुआ बोला शीतल।

'बाबू ! जाना चाहोगे तो चमकी रोक नहीं सकेगी तुम्हें।' बोली आर्द्र स्वर में चमकी—'बिल में घुसे सांप को बाहर निकालने की ताकत है मुझमें, उड़ते परिन्दे को मन्तर से बांध तो नहीं सकती। यह तो दिल की मजबूरी है परदेसी बाबू ! पूछते हो जाने क्यों नहीं देती ? यह मुझे खुद पता नहीं।'

'यह बात नहीं चमकी ! यहां का वातावरण मुझे पसन्द नहीं। सोता हूँ तो सपने सांप बन जाते हैं, जागता हूँ तो जिन्दगी डँसने लग जाती है। मुझे डर है, किसी दिन मैं भी सांप न बन जाऊँ...उफ् !' बेचैन होकर बोला शीतल—'मुझे घर जाने दो चमकी ! मुझे शहर तक पहुँचा दो या रास्ता ही दिखा दो..बड़ी मेहरबानी होगी।'

'मेहरबानी तो तुम्हारी चाहिए बाबू !' चमकी के गले पर करुणा आ बैठी।

और शीतल की भूत की स्मृति वर्तमान में पीड़ा बनकर उसके हृदय को दबोच रही थी। वह अपने घर जाना चाहता था।

'तुम्हें मेरा घर नहीं सुहाता छैला ! मेरा साथ तुम्हें पसन्द नहीं...मैं अच्छी नहीं ?'

'नहीं...' सभी का जवाब दो अक्षरों में दिया उसने।

'तो तुम जा सकते हो...' चमकी ने आँखों के सागर को पी डाला। उसकी आवाज अब भींगी थी—'चमकी रोयेगी नहीं तुम्हारे लिए। यहां पत्थरों का ढेर है बाबू। कलेजे पर रखकर सबर कर लूंगी। पहाड़ बनकर अब नहीं रोकूँगी तुम्हें, पगडण्डी बनकर तुम्हें जाने दूँगी। जाओ, चले जाओ।'

आखिरी शब्द कहते-कहते रो पड़ी चमकी।

उसकी आँखों में पत्थर को पिघलाने की ताकत थी। शीतल

तो इन्सान ही था, वह चला ।

'तू रोने लगी चमकी !'

'हां बाबू ! रोने लगी हूं ।' हिचकी लेती हुई बोली वह—'मेरी आंखों का पानी तुम्हें रोक नहीं लेगा परदेसी ! आंसू की एक-एक बूंद फूल बनकर राह में बिछ जायगी । शौक से इसे हंसते-कुचलते चले जाना !'

'चमकी !' शीतल बातों की चोट से तिलमिला उठा । चमकी का हाथ पकड़ लिया उसने ।

'हाथ मत पकड़ो बाबू ! सहारा देने की ताकत तुममें नहीं !' चमकी कहे जा रही थी और शीतल प्रस्तर-प्रतिमा-सा मूक गांव की गोरी को आंसू से नहाते देख रहा था ।

'हंस-हंसकर दिल लगाया था तो रो-रोकर दिल को समझा भी लूंगी । अपनी खुशी के लिए तुम्हारे अरमानों का खून नहीं करेगी चमकी ।'

'रानी !...'

'रानी कहकर जलाओ मत परदेसी !....मेरा नाम चमकी है, चमकी । मेरी नजरों से दूर हो जाओ...जाओ...' ऐसा कह चमकी ने शीतल को पकड़कर घर से बाहर ढकेल दिया ।

चला गया शीतल और चमकी चारपाई पर कटे पेड़-सी गिर पड़ी । आंखों से नदियां बह चलीं और दिल जलता ही रह गया उसका । आंखें बन्द किए वह जाने क्या सोच रही थी ।

'चमकी !' प्यार भरे स्वर से किसी ने पुकारा उसे ।

उसने देखा—'तुम....तुम्हीं तो हो । वापस लौट आये बाबू !' चमकी बोली—'एक बेबस जान का तड़पना देखने आये हो, आग लगाकर लपटें देखने आये हो ? देखो...देख लो जी-भर कर... निहाल कर लो अपनी आंखें ।'

'जाने के लिए नहीं आया हूं । अब नहीं जाऊंगा चमकी !'

'सच ! मेरे छैला ! सच कह रहे हो तुम ?'

चमकी को जैसे सब कुछ मिल गया, हंस पड़ी । उसके गालों

पर लेटी आंसू की लकीरें मुस्कुरा उठीं।

'मेरा तो दिल ही बैठ गया था बाबू ? जाने का नाम न लिया करो कभी। भला क्यों लौट आये तुम ?'

'तुम्हारी आँखों के आकाश-से आंसुओं के कितने ही तारे टूट पड़े थे तो कैसे जा सकता था। तुमने आंसुओं की नदी की वेगवती धारा में मुझे बहा दिया और मझधार में मैं साहिल खो बैठा; भूल गया रास्ता।' हंसता हुआ बोला शीतल।

'जाने वाले अपनी मञ्जिल ढूंढ़ ही लेते हैं बाबू ! तुम जाओ, तुम्हारा शहर तुम्हें खोज रहा होगा।'

'फिर सोच लो, क्या कह रही हो।'

'गांव वाले किसी का अरमान नहीं कुचलते। तुम जाओ।'

'अच्छा तो चला मैं....रोना मत !' और शीतल ने दरवाजे के बाहर पैर रखा।

'जरा रुको !' रोती आवाज निकली चमकी के गले से।

उड़ता परिन्दा रुक गया क्षण भर के लिए।

'क्या है ?'

'अगर चमकी से भूल-चूक हुई हो तो क्षमा कर देना...' कहते-कहते चमकी के गले में आंसू अटक गये—'दरसन की साध लिए तुम्हारा इन्तजार करूँगी....कभी आ सको तो आ ही जाना ....इस घर का दरवाजा हमेशा खुला ही मिलेगा तुमको...' कहकर चमकी शीतल के पैरों पर गिर पड़ी। मगर शीतल पत्थर ही बना रहा। चमकी उसके पैरों की धूल उठाकर मस्तक में लगा ली और तब पैर खींचकर निर्मोही परदेसी, बेदर्द छैला, बेदिल शीतल चला गया। शीतल चला जा रहा था और चमकी देख रही थी कि किस शान से उसके दिल का प्यार, उसकी दुनिया उजाड़ कर चला जा रहा है। थोड़ी देर में ही जङ्गल की छाया के अन्दर शीतल की काया लुप्त हो गई।

● ●

चिकोरा गांव की पगडण्डी पर चला जा रहा था। उसके

चेहरे पर शान्ति थी और आंखें रक्तरंजित....आग के धधकने के पूर्व धुआं उठ रहा था। अपने उस्ताद की बेटी की मौत से बौखला उठा था वह। रह रहकर उसका दिल प्रतिहिंसा की आग में जलने लगता, हाथों की मुट्ठियां बँध जातीं, होंठ फड़कने लगते। गले में लटके विकराल सांप को हाथों में ले लिया उसने। फुफकार उठा भयानक सांप।

'टिकोरा !' उसके होंठ बुदबुदाये—'समझता है दुनिया का हर इन्सान उससे हार मान गया है—गेहुँअन !'

टिकोरा की स्मृति से उसका अन्तर घृणा से भर उठा।

टिकोरा कितना विषैला सर्प है। करैत से भी ज्यादा जहर भरा है उसमें। चिकोरा का मस्तिष्क विचारों का तूफान लिए उड़ा जा रहा था। उसके पग बढ़ते जा रहे थे। हाथ सांप के मुलायम चमड़े पर अविराम गति से दौड़ रहा था। चन्द मिनटों के बाद वह धिमानी की झोपड़ी के सामने था। अन्दर सभी सँपेरे बैठे थे। वह भी अन्दर जाकर, उदास-उदास क्रोधित हो बैठ गया। सभी के चेहरों पर घृणा थी। वहां का प्रत्येक व्यक्ति टिकोरा का विरोधी था। सभी उसकी मृत्यु के बारे में विचार कर रहे थे।

'हम बदला लेंगे बाबा !' एक सँपेरा उठकर खड़ा हो गया—'गांव के कानून के खिलाफ कदम उठाने वाले की गर्दन तोड़ देंगे। हमारी इज्जत जमीन का जर्रा नहीं, जिसे कोई कुचल कर गुजर जाये। ऐसे लोगों की टांग काट लेंगे हम।'

'अपने मन से कोई राजा नहीं बन जाता। हम उसे उस्ताद नहीं मानते ?...शाम को टिकोरा आये और जबाब दे।' दूसरा भी बोलकर बैठ गया। इसी प्रकार सांपों से खेलने वाले सभी सँपेरे दिल का जहर उगलते रहे। धिमानी और सहयोगी पंच चुपचाप नये खून का जोश देख रहे थे। आखिर तय हुआ कि टिकोरा को उनकी बातों का जवाब देना होगा। सभा बरखास्त हो गई। बैठा रहा सिर्फ चिकोरा ! वह नहीं गया। धिमानी की बूढ़ी आंखों ने शाम के धुंधलके में टटोल कर पहिचाना। बोला—

'तू क्यों बैठा है बेटे ! कोई काम है ? कुछ कहना चाहता है ?'

'हां !' छोटा-सा गम्भीर उत्तर दिया चिकोरा ने ।

'बोल, क्या कहना है ?'

'मैना मर गई बाबा ! ' तेज आवाज थी चिकोरा की ।

सुनकर धिमानी काँप उठा । पैरों के नीचे की धरती खिसक गई, बूढ़े तन में सांप लिपट गया जैसे । खड़ा नहीं रह सका तो बैठ गया । चिन्ता से चेहरे की झुर्रियां उभर आईं ।

'चुप क्यों हो गये बाबा ?....' चिकोरा ने सवाल किया ।

'धीरज से काम ले बेटे ! हो सकता है टिकोरा बेगुनाह हो ?'

'सांप बेगुनाह नहीं होता बाबा ! आंखों से देखा है सब कुछ तो झूठ कैसे मान लूं ।'

'मगर किसी काम में जल्दबाजी नहीं की जाती ।' धिमानी की आवाज पहले ही जैसी गंभीर थी ।

'आग को बुझाने में जल्दीबाजी ही बेहतर है; नहीं तो घर जलने का डर रहता है । टिकोरा से डर गये हो बाबा ! तुम बूढ़े भी तो हो चले हो ?' व्यङ्ग करता हुआ बोला चिकोरा ।

सुनकर धिमानी जल उठा । कल के छोकरे को अपने ऊपर कीचड़ उछालते देख सांप बन गया बुजुर्ग ।

'नादान छोकरे ! तू मेरी ताकत देखना चाहता है ! बूढ़ा हो गया हूं तो क्या ? तेरे जैसे सांपों के दांत तोड़ने की ताकत चली नहीं गई है ! देखेगा मेरी ताकत ?' गरजा धिमानी ।

'देखने का वखत नहीं है मेरे पास नहीं तो देख लेता....' उठकर जाने लगा क्रोधित चिकोरा ।

'चुपचाप बैठ !' धिमानी बादलों-सा गरजा—'पहले तहजीब सीख, फिर नसीहत बांट....'

चिकोरा के उठे पांव बैठ गये । बूढ़े का चेहरा क्रोध से तम-तमा उठा था । देखकर सहम गया चिकोरा ।

'मुझे क्षमा कर दो बाबा ! बड़ी भारी गलती हो गई—' धीमें से बोला चिकोरा ।

'अब अकल आई...'

'अकल तो अब आई बाबा ! मगर दुख दूर नहीं हुआ है। तुम टिकोरा को बेगुनाह कहते हो। वह पूरा नाग है बाबा ! ऐसा साँप है वह कि मन्तर से भी बाँधा नहीं जा सकता। साँप के दाँत तोड़े जा सकते हैं, पर टिकोरा के दाँत तो उसके कलेजे में हैं।'

'चुप रह छोरे ! दुनिया में कोई बात मुश्किल नहीं। दिल के दाँत तोड़ने का भी औजार है, प्यार से यह दाँत आसानी से टूट सकता है। टिकोरा को कम मत समझ, बड़ा अक्लमन्द है वह। उस्ताद का एक-एक मन्तर उसके साथ है। जरा सुधर जाय तो ऊपर चढ़ जाय। उस्ताद भी तो यही कहते थे। इसीलिए तो हमेशा छमा किया करते थे। विकराल साँप को वश में करने से ही मणि मिलती है...' कहकर धिमानी थोड़ी देर के लिए साँस लेने लगा।

चिकोरा करुण स्वर में बोला—'मैना का क्या होगा ?'

'भूत की बात भूल जा; जो हो गया सो हो गया। मैना अब नहीं आ सकती।' कहा धिमानी ने। बूढ़े गले में करुणा भर आई-'माना टिकोरा ने मार डाला मैना को, मगर टिकोरा को मारने से वह वापस नहीं आ सकती। टिकोरा की गरदन तराशने से उस्ताद भी लौट नहीं सकते। जा मेरी बात मान।'

चिकोरा चला गया। धिमानी सर पर हाथ रखकर कुछ सोचने लगा। जङ्गल के एकान्त में एक चट्टान की छाती पर बैठा चिकोरा कुछ सोच रहा था; शायद मैना के बारे में ही। वह टिकोरा से बदला लेने की बात सोच रहा था। गले में लिपटे विकराल साँप को हाथ में ले लिया उसने और मन्तर से बाँधकर पृथ्वी पर छोड़ दिया। सिद्धहस्त मदारी का सिखाया साँप फों कर उठा। उसके होंठ मन्तर पढ़ रहे थे; आँखें साँप की आँखों पर ही थीं मगर दिल तूफानों से भरा था। थोड़ी देर पूर्व उसके ऊपर धिमानी की बातों का जो प्रभाव पड़ा था वह अब धीरे-धीरे गायब होता जा रहा था।

उसके दिल की बेचैनी बढ़ती जा रही थी। बीते दिन की घटनायें मन में साँप बनकर रेंग रही थीं। मस्तिष्क के चित्रपट पर उस्ताद फेरई आये और चले गये। चमकू, लजारो, परदेशी सभी आये और रुके नहीं। थोड़ी ही देर में मैना भी आई और रह गई वह—जा नहीं सकी।

'मैना !' चिकोरा का अन्तर चीख पड़ा—'मेरी बहन मैना ! तुझे टिकोरा ने मार डाला। मैं बदला लूंगा तेरे खून का...'

एक क्रूर भाव से उसने अपने चेहरे को चमकाया। खौफनाक मुस्कान उसके भयङ्कर होठों पर खेल उठी और कमर में लटके महुवर को हाथों में लेकर होठों से लगाया उसने।

सुरीली आवाज से जंगल का कोना-कोना मदहोश हो उठा। पत्ता-पत्ता कान खोलकर पीने लगा उस स्वर लहरी को।

एक साँप चिकोरा के शरीर पर आकर गिर पड़ा, काले-काले बदन पर सफेद धारियाँ थीं उसके। मगर चिकोरा चौंका नहीं ! उसकी उँगलियाँ अविराम गति से चलती रहीं? गाल फूलते-पचकते रहे। जमीन पर वह जहरीला सांप झूमता रहा फन उठाये। महुवर बजाते-बजाते चिकोरा का चेहरा तमतमा उठा। कनपटी की नसें फूल आईं।

महुवर की ध्वनि से हवा शान्त हो उठी मगर चिकोरा का अन्तर अशान्त ही बना रहा। चिकोरा बौखला उठा था। जमीन पर पड़े हुए साँप को उठाने के लिए हाथ बढ़ाया।

तभी—किसी ने रस्सी से उसके बदन को कस किया। हिल भी नहीं सका वह...क्रोधित चिकोरा के गुस्से में घी का काम किया उसने। तेजी से जोर लगाकर खड़ा हो गया वह। बदन की तरफ निगाह डाली तो उस रस्सी को देखकर मुँह से चीख निकलते-निकलते भी निकल नहीं पाई। करीब पाँच हाथ का काला-काला सफेद धारियों वाला विकराल साँप उसके बदन को कसे जा रहा था धीरे-धीरे।

गनीमत थी कि उसके दोनों हाथ खुले थे। संयत हो उठा

चिकोरा। उसके होंठ कांपे। मन्तर निकलने लगा। मन्तर पढ़कर चिकोरा जमीन से धूल उठाने के लिए झुकने लगा तो—

'फों!' फुफकार उठा सांप, झुक नहीं सका वह!

और झुक नहीं सका तो कमर से एक कौड़ी निकाली उसने। कौड़ी को सांप के बदन में छुआ दिया। मन्तर से बँधी कौड़ी चिपक गई सांप के मुलायम बदन पर। बेबस हो गया वह। चिकोरा ने उसकी गर्दन पकड़ ली।

'अब कहो?' कहकर गांव की तरफ चल पड़ा चिकोरा।

रास्ते में सम्पू मिला—'कहां जा रहे हो चिकोरा!'

'तुम्हारे बाप का खून पीने! है न मजे में?' तेज स्वर था चिकोरा का।

टेढ़ा जवाब पाकर चुप हो गया सम्पू। वह समझ गया कि 'बाप' से चिकोरा का मतलब टिकोरा से है। तभी नजर नये सांप पर पड़ी, जिसकी गर्दन चिकोरा के हाथ में थी।

'यह सांप तो बड़ा विषैला लगता है। कहाँ पा गये?' पूछा सम्पू ने।

'भगवान ने भेजा है, तुम्हारे बाप को डँसने के लिए...' कहता हुआ आगे बढ़ गया चिकोरा।

सम्पू गांव का ही एक सँपेरा था। टिकोरा का दाहिना हाथ बना था आजकल। क्रोधित चिकोरा आज टिकोरा से लड़ने का इरादा लिए चला जा रहा था।

'चिकोरा!' पीछे से किसी ने आवाज दी।

उसने मुड़कर देखा, धिमानी था। उसकी तरफ खोज भरी आंखों से देख रहा था।

'क्या है बाबा?'

'चला आ मेरे पीछे-पीछे...काम है एक...'बूढ़ी आंखों ने जवान दिल के भावों को पढ़ लिया था।

बिना कुछ कहा-सुनी के चिकोरा पीछे-पीछे चल पड़ा।

उधर चिकोरा के घर में कोई चोर की तरह चौकसा सँभल-

संभल कर डग रखते हुए, शाम के धुँधलके का आवरण बदन पर डाले घुस रहा था। अन्दर चमकी थी किन्तु बेखबर, छैला की याद में बेहोश।

● ●

सड़क की छाती पर कार भागी जा रही थी। आलीशान बँगले पीछे छूटते जा रहे थे। अमीरों की बस्ती, अंग्रेजों और दौलतमन्द सेठों के बँगले से कार भागी जा रही थी। उसी कालोनी के एक बँगले के आगे कार रुक गई। एक नौजवान उतरा। होठों पर मुस्कान की रेखा और चेहरे पर उत्सुकता के चिह्न थे। नौजवान निःसंकोच बँगले में प्रविष्ट हुआ।

बरामदे में आकर उसने कालबेल पर हाथ रखा। तब बेचैनी से भरा स्वर उसके मुँह से फुट पड़ा—'एनी ! मिस एनी !'

अन्दर से कोई आवाज नहीं आई। लेकिन बन्द दरवाजा खुल गया। काली-काली आँखों में शराब की मदहोशी लिए एक हसीन ऐंग्लो-इण्डियन युवती बाहर आई !

'गुड इवनिंग एनी।' युवक ने अपना हाथ आगे बढ़ाया।

मगर एनी मुड़ चुकी थी, अन्दर जाने के लिए। उसने एनी के कन्धे पर हाथ रख दिया लेकिन एनी ने झटक दिया।

'तुम बहुत नाराज हो डियर !' बोला वह दुखी होकर—'मैं तुमसे कुछ बातें करने आया हूँ।',

'I am very Sorry चञ्चल कुँवर ! ममी इस टाइम में बाहर गया है...' कहा एनी ने।

'मुझे तुमसे मतलब है एनी !' चञ्चल आगे बढ़कर एनी के पास आ गया—'मैं तुम्हारा साथ चाहता हूँ...'

'हम आपका साथ नहीं दे सकता छोटी कुँवर। आप जा सकती है !' एनी की आवाज तेज थी।

चञ्चल अपमान से जल उठा। अगर माँ उसे बुलाने के लिए नहीं भेजती तो वह हर्गिज नहीं आता।

बोला—'Keep your temper Anne, I have some

thing to tell you....'

'No, No हम नहीं सुनेगा...हम तुमको जानता है छोटी कुँवर ! तुम दगाबाज है ! ...You want to ruin your family....हम हरगिज साथ नहीं देगा !' एनी बोली और मुड़ कर दूसरे कमरे में जाने लगी।

'गुजरी बातों को भूल जाओ एनी !' बोला चञ्चल एनी के पीछे चलता हुआ—'अब तो भैया भी आ गये हैं।'

'What do you say man !' बड़ी कुँवर आ गई from heavan ?...you want to befool me...' एनी के चेहरे पर अविश्वास खिलखिला रहा था। उसे यकीन नहीं हो रहा था चञ्चल की बातों पर।

'Believe me, मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ...' कहा चंचल ने—'तुम्हें माँ और भाभी ने बुलाया है....'

'तुम True भी बोलती है छोटी कुँवर !...Strange !' व्यंग का तीर चलाती हुई बोली एनी।

चंचल मुड़कर बाहर की तरफ चल पड़ा। वह वहाँ अब अधिक रुकना नहीं चाहता था। आकर वह अपनी कार में बैठ गया। कार उसे लेकर भाग चली शहर की ओर।

समय की गति भी विचित्र है। एनी को एक दिन उसने ठुकरा दिया था और आज एनी ने उसे ठुकराया।

'कितना बुरा हूँ मैं।' मन ही मन सोचकर चंचल ग्लानि से भर उठा। वह भाई की जान लेना चाहता था। भाभी को लूटना चाहता था। जिस भाभी ने उसे माँ-सा प्यार दिया, बेटे की तरह दुलार किया। रियासत की भूख से परेशान चंचल मासूम ललित का भी दुश्मन बन गया था।

'उफ् !' चंचल ने एक हाथ से अपना माथा पकड़ लिया और दूसरे हाथ से स्टेयरिंग। कार टकराते-टकराते बची।

'तू साँप है रे चञ्चल ! भाई की जान लेना चाहता था। दूर हो मेरी नजरों से।' रानी साहिबा की आवाज उसके कानों

में गूँज उठी। उसे दूर बहुत दूर भाग जाना चाहिए। वह सीधे होटल पहुँचा। खूब पी उसने। नशे से उसे थोड़ी राहत मिली। रात काफी गुजर चुकी थी मगर चञ्चल अभी तक होटल में ही था। वारिस ने रात के नौ बजे आकर रानी साहिबा को इत्तला दी—'छोटे कुँवर हवाखोरी करके अभी तक वापस नहीं लौटे हैं, फाटक बन्द होने का समय हो गया।'

उधर चञ्चल शराब के नशे में बुत पड़ा था और इधर घर के लोगों का नशा हिरन हो गया था।

अचल ने सुना तो उसे खोज लाने के लिए तैयार हो गया।

'तू फिकर न कर, सिनेमा देखने चला गया होगा शैतान!' रानी साहिबा बोलीं।

नौ दस और ग्यारह-बारह बज गये....

रानी साहिबा के बूढ़े चेहरे पर चिन्ता के चिन्ह नजर आने लगे। वह टहलती हुईं अचल के कमरे की ओर बढ़ गईं।

'अभी तक नहीं आया चञ्चल!' चिन्तित स्वर था रानी साहिबा का।

वे इस समय अचल के शयनकक्ष में थीं। सुनकर अचल भी सोच में पड़ गया। कविता भी विचारने लगी कुछ।

अचल ने वारिस को आज्ञा दी। रात के सन्नाटे में वफादार नौकर अपने मालिक की खोज में निकल पड़ा, ड्राइवर शंकर के साथ। परिचित होटल के आगे कार रोकी शंकर ने। वह जानता था कि इसके सिवा वह कहीं नहीं होगा। वारिस उतर कर होटल के भीतर गया। उसने देखा—बेहोश पड़ा था चञ्चल! उठाकर कार में डाल लिया। रात के एक-डेढ़ बजे के करीब महल पहुँच गया वारिस चञ्चल को लेकर। रानी माँ को शान्ति मिली। अचल और कविता सोने चले गए।

रात धीरे-धीरे खिसक रही थी। सबेरा होने में घड़ी भर बाकी रह गया था। दम्पत्ति आराम की नींद में बेहोश थे। करवट बदलते जोरों से चीख पड़ा कुँवर।

कविता घबरा कर उठ पड़ी। ललित भी उठ बैठा। वह अचल के पलंग पर दौड़कर आई। हाँफ रहा था कुँवर...कविता ने अपना कोमल हाथ उसके मस्तक पर रख दिया। पूछा—'क्या हुआ आपको ?'

'कुछ नहीं कविता, यों ही...सपना देखकर डर गया।' संयत होकर बोला कुँवर—'बड़ा भयानक स्वप्न था मैं भाग रहा था और उसका साँप मेरे पीछे दौड़ा आ रहा था। साँप मेरे पैरों में आकर लिपट गया, मैं गिर पड़ा और चिल्ला उठा—'

तभी घड़ी का अलार्म घनघना उठा। सुबह के चार बज गये थे। कुँवरानी ललित को लेकर बाहर चली गयी। अचल सपने की बात सोचने लगा। थोड़ी देर बाद वह भी उठा और शौचादि से छुट्टी पाकर बैठक में जा बैठा।

डाक्टर दास आये और घाव की पट्टी बदल कर चले गये।

'वारिस !' कुँवर ने बुलाया।

'हजूर ! 'सुनते ही वारिस आ खड़ा हुआ।

'चञ्चल को बुला लाओ ?'

वारिस ने हुक्म की तामील की। थोडी देर बाद चञ्चल बड़े कुँवर के आगे सर झुकाये उदास-उदास मौन खड़ा था।

'रात को कहाँ रुक गये थे चञ्चल ! बड़ी देर बाद लौटे ?' अचल ने पूछा, स्वर गम्भीर था।

चञ्चल चुप।

'कुछ बोले नहीं चञ्चल।' इस बार हँसकर कुँवर ने कहा-'अरे, तुम खड़े हो, बैठो नऽ !'

चञ्चल गम्भीर बना रहा। सोच रहा था—क्या कारण बताये और वह बताये भी क्यों, सभी तो जान ही चुके हैं।

चञ्चल के मौन से व्यथित-सा हो उठा अचल का हृदय।

'आओ चञ्चल ! तुम्हें बिगड़ने के लिए मैने नहीं बुलाया है। जी ऊब गया था, सोचा तुम्हीं को बुलाकर कुछ बातें कर लूं। कभी कभी आकर बातें कर जाया करो।' कुँवर ने धीरे से गम्भीर

स्वर में कहा ।

चञ्चल उठकर चला गया । उसने सोचा, मजाक उड़ाने का भैया ने नया तरीका निकाला है । अचल के विकल हृदय को परख नहीं सका वह । उसका मन सभी से दूर, जाने के लिए उतावला हो उठा । चञ्चल के व्यवहार से चोट तो लगी अचल को मगर रहा चुप ही....वह नादान नहीं था । चञ्चल को अच्छी तरह समझ सकता था । अचल कमरे में धीरे-धीरे टहल रहा था, टहलते-टहलते ही बोला—'वारिस ! माँ को बुला तो....'

हुक्म पाते ही दौड़ पड़ा वारिस रानी साहिबा को बुलाने । दरवाजे पर पहुँचा ही था कि किसी से टकरा गया । टकराने वाले को देखा वारिस ने तो बोल उठा—'सरकार आप !'

'You ghost ! देखकर नहीं चलती...' जमीन पर गिरे वैनिटी केस को उठाती हुई बोली एनी—'रास्कल !'

'बाईसिकिल कहाँ है हजूर ! यह तो मैं हूँ, मैं—वारिस !' हँसता हुआ बोला वारिस ।

एनी की अस्त-व्यस्त भावभंगी के ऊपर छाये क्रोध और अंग्रेजी जुबान पर फिसलती हिन्दी सुनकर अपने आपको हँसने से रोक नहीं सका वारिस ।

'तुम हँसती है, हमारा चोट देखकर....Blind man !.... थोड़ी एटीकेट भी नहीं जानती...'

'हम नहीं जानती । कुँवर साहिबा जानती...अन्दर हैं ।'

वारिस एनी की भाषा में बोल गया और जल्दी उड़न-छू हो गया । जाते वारिस को एनी ने लाल आँखों से घूरा और दरवाजे का परदा हटाकर अन्दर चली गई । वहाँ अचल को सचमुच देखकर काँप उठी । उसका दोषी मन काँप उठा । चेहरे पर विचित्र भाव नाच उठा । अचल का मुँह दूसरी ओर था । वह एनी को नहीं देख सका था ।

खड़ी-खड़ी एनी पशोपेश में थी । कैसे बोले, क्या करे ?

आखिर हिम्मत बटोर कर धीरे से बोल उठी—'Good

morning बड़ी कुँवर।'

एनी का स्वर सुनकर अचल सजग हो गया। उसकी नजरों ने देखा—खतरनाक सौन्दर्य की गुड़िया उसके समक्ष उपस्थित थी। अपने कातिल को अचल कैसे भूल सकता था।

'बैठिये।' कुर्सी की तरफ इशारा करके कहा अचल ने।

छिपी-छिपी नजरों से कुँवर एनी को परखने लगा। पहले-सा असावधान नहीं रहता था कुँवर अब।

इसी ने तो उसके प्याले में जहर डाला था।

'कहिए कैसे आना हुआ?....कोई नौकरी तो नहीं....'

'No, nothing of this kind....हम आपको देखने आया....' बीच ही में सहमकर बोल पड़ी एनी।

तभी रानी साहिबा आ गईं और पीछे-पीछे कविता भी।

कुँवर और एनी उठकर खड़े हो गये।

'अरे यह कब आई....कल क्यों नहीं आई बेटी?'

'कल के लिए माफी माँगता है हम Mother!'

कविता एनी को लेकर भीतर चली गई। अचल और रानी साहिबा अकेले ही रह गये। कमरे में घुसते ही एनी कविता से लिपट गई। आश्चर्य के साथ बोली—'Sister! बड़ी कुँवर कहाँ से आई, हमसे तो आप बोला था....'

'हाँ! मैंने ठीक कहा था, अजगर के पेट में चले गये थे और निकल भी आये, यही तो ईश्वर की लीला है एनी!'

'My God!....हम तो दङ्ग है!'

कविता ने सारी कहानी एनी को सुनाई।

'तुम इधर क्यों नहीं आती थी?....अरे तुम रो रही हो एनी!—क्यों?' कविता ने देखा, एनी की काली-काली आँखें मोतियाँ उगल रही थीं।

'हम बड़ा दुखी हो रहा है। बड़ी कुँवर को Poison दिया था वह। हम छोटी कुँवर के बात में आ गया था...' दुखी एनी बोली—'हमको माफी बोलो Sister! बोलो न!'

'अच्छा-अच्छा, कर दिया माफ।' कहा कविता ने।

सुनकर एनी आश्वस्त हुई। ग्लानि से भरे हृदय को शान्ति मिली। थोड़ी देर इधर-उधर की बातों से एनी को हँसा कर कविता बोली—'एक बात कहूँ, बुरा तो नहीं मानोगी?'

एनी ने सिर हिलाकर कहा—'नो!'

'तुम चञ्चल से प्रेम करती हो?'

'परेम...You mean Love, perhaps करता था but not these days...छोटी कुँवर दगाबाज है!' एनी के स्वर से घृणा टपक रही थी।

'दगाबाजों से मुहब्बत करना बुरा है?' कविता एनी की ओर देखकर वह बोली।

'Yes! very bad—बहोत खराब।' एनी का जवाब था यह—'Dagger को अपनी heart में हम रखने नहीं मांगता...'

'दिल में खञ्जर रखा भी नहीं जाता एनी! हाथ में रखा जाता है वह तो। और हाथ का खञ्जर घातक नहीं, मुसीबत में सहायक होता है। चञ्चल बुरा था मगर अब तो नहीं है।'

एनी मौन हो गौर से सुन रही थी।

'मुहब्बत सब कुछ कर सकती है एनी!...पुरुष की बुराइयों को नारी अपने आँसू से धोकर पावन बना सकती है।'

कुँवरानी के उपदेशों से एनी प्रभावित होती जा रही थी। उसके चाँदनुमा चेहरे पर पश्चात्ताप के निशान उभर पड़े थे।

'तुमसे मैंने वादा किया था कि तुम्हारे साथ पूरा-पूरा न्याय होगा...किया था न?'

'हूँ!' एनी ने स्वीकारात्मक ढङ्ग से सर हिलाया!

'अब भी सब कुछ करने के लिए तैयार हूँ, सिर्फ तुम्हारे 'हाँ' और 'ना' पर निर्भर है। यह चञ्चल तुम्हें अब भी प्यार करता है, मैंने माता जी से सब कुछ कह दिया है। चंचल अपने महल में है। जाकर मिल लो...' कहकर खड़ी हो गई कुँवरानी।

पशोपेश में पड़ी एनी भी उठ खड़ी हुई और चंचल के महल

की ओर चल पड़ी। रानी साहिबा के बिगड़ने की वजह से पलंग पर बदहवास-सा गिरा पड़ा था चंचल। वह सोच रहा था, दुनिया में उसका कोई नहीं। अपनी माँ ही ठोकर लगा दे तो दूसरों का क्या कहना? उद्भ्रान्त मन को समझाना चाहा चंचल ने मगर समझा नहीं पाया और समझा नहीं सका तो दुनिया से दूर जाकर समझाने की सोचा उसने। चेहरे पर चमक आई—खौफनाक, भयावनी। उठकर खड़ा हो गया। बन्द आलमारी की ओर उसके पाँव बढ़ गये। उसने आलमारी खोली और दराज में से रिवाल्वर निकाल लिया। आज वह चंचल का खात्मा कर देगा, फिर उसे कोई डाँट नहीं सकता, बुरा-भला सुना नहीं सकता।

पागल मस्तिष्क की उलझी विचारधारा तूफान बन गई थी। हृदय में अजीब द्वन्द्व-सा उठ खड़ा हुआ था। जिन्दगी कह रही थी—'जियो!' और मौत थी कि आवाज पर आवाज दे रही थी—'मरकर प्रायश्चित करो, गुनाहों का खून करो।'

'उफ!' बायें हाथ से दुखते दिमाग को पकड़ लिया उसने। दाहिने हाथ के पंजे में पड़ी काली मौत को जोरों से दबाया। उसका रिवाल्वर वाला हाथ मस्तक की ओर बढ़ने लगा।

चारों तरफ की खिड़कियाँ बन्द थीं मगर पीछे का दरवाजा था खुला। खुले दरवाजे से हवा का तेज झोंका आया और...

● ●

घर के अँधेरे में चमकी अपनी चमक खोकर पड़ी थी। दिल के मीठे-मीठे खेल ने तबाह कर दिया चमकी को। अगर वह जानती होती कि मुहब्बत की जुदाई दर्द की कहानी और अश्कों का समन्दर होती है तो वह कभी भी उल्फत की ठण्डक कलेजे में रखकर आग पैदा नहीं करती। जुदाई के सदमें से उसका दिल टूक-टूक हो गया था।

अपने बहते आँसुओं में परदेसी की याद को बहा देना चाहती थी किन्तु बहा नहीं सकी और बहा नहीं सकी तो बेकल निगाहों से रात के अँधेरे में खोजने लगी मोहन की सूरत। अभी-अभी

चिकोरा आयेगा, पूछेगा शीतल के बारे में तो वह क्या जवाब देगी। उसी समय—किसी का प्यार भरा हाथ उसकी पीठ पर पड़ा। स्पर्श से चौंक पड़ी वह। घबराकर उठ खड़ी हुई और अपने भीगे नयनों को पोंछ डाला उसने। अँधेरे में खड़ा व्यक्ति उसके उदास चेहरे को नहीं परख सका।

'चिकोरा ! मेरे राजा !...छैला चला गया...चला गया वह परदेसी !' दौड़कर लिपट गई चमकी चिकोरा से।

'जाने दो रानी ? उसे तो जाना ही था एक न एक दिन, आज ही चला गया—खैर !' चिकोरा का स्वर सुनकर चमकी चौंक पड़ी, छिटक कर दूर हो गई। दौड़कर चकमक रगड़ा उसने और मशाल जलायी। रोशनी से कमरा जगमगा उठा। मशाल की रोशनी में चमकी ने देखा—अपने चाँद को, अपनी खुशी को। दौड़ कर उसके कलेजे से लग गई वह।

'तुम क्यों लौट आये बाबू ?'

'तुम याद जो कर रही थी...कहो तो चला जाऊँ !'

'चमकी ने तुम्हें कब कहा जाने के लिए बेदर्दी !' चमकी के गले में आँसू आकर अटक गये—'मेरे छैला ! तुम चले गये तो रात का अँधेरा दिल में समा गया था। मेरी ओर देखो, कुछ ही देर में तुमने मुझे मार डाला।' कहते-कहते चमकी अपनी बड़ी-बड़ी पुरनम आँखें शीतल के आगे फैला दी।

उसने देखा—जुदाई के कुछ ही घण्टों ने गुलाब के फूल को मसल दिया था। कुछ बोला नहीं शीतल। देखता ही रहा एक-टक चमकी के चेहरे की तरफ।

'ऐसे मत देखो मेरी ओर, तुम्हारी इन्हीं नजरों ने पागल कर दिया है मुझे ! जादू मत करो बाबू ! फेर लो अपना मन्तर !'

शीतल ने नजरें झुकाईं नहीं। देखता रहा और चलता ही रहा जादू। चमकी बेहोश होती गई। उसकी भीगी पलकों के बीच की दूरी धीरे-धीरे कम होने लगी। पलकें बन्द हो गईं। शीतल के अधर चमकी के अधरों की तरफ बढ़े।

'बस करो बाबू ! मुझे सब कुछ मिल गया अब तो...' थरथराता स्वर था चमकी का।

दोनों स्वस्थ होकर चारपाई पर आ बैठे। सांप की चर्बी का मशाल जल रहा था। थोड़ी ही देर में उदास-उदास आया चिकोरा। गले में पड़ी सांप की माला को उतार कर हाथ में ले लिया और चारपाई पर लेट रहा। मन्तर से बँधा सांप जमीन पर कुण्डली मार कर बैठा रहा।

चिकोरा, टिकोरा को मारने का षडयन्त्र रच रहा था। शीतल और चमकी सपनों की दुनिया की सैर में लीन थे।

और टिकोरा ? आंखों में वेदना के आंसू लिए जाग रहा था अपनी झोपड़ी में। मैना को गोद में लिए नम आंखों से देख रहा था उसके भोले चेहरे पर छायी मौत की छाया।

'तुम नहीं बोलोगी मैना ! टिकोरा को हरा दिया तुमने...मेरे मन की न करो रानी ! पर बोलो तो सही ! पीठ में छुरे का घाव किया है तुमने ! लो यह छुरा, एक-दो घाव कलेजे में भी कर दो ताकि देख सकूं उसे...मैना !'

आधी रात हो गई है—भूखा-प्यासा टिकोरा हाथ में विकराल मणिधर लिए मन्तर पढ़ रहा है। कई दिनों के जागरण ने उसे विक्षिप्त बना दिया है। कांपते होंठ क्षण भर के लिए रुक गये। हाथ के सांप को जमीन पर छोड़ दिया उसने। आज टिकोरा जीवन का आखिरी खतरनाक प्रयोग करने जा रहा था। हाथ में सात कौड़ियां ली उसने और बोला—'मैना ! आज उस्ताद का सिखाया आखिरी मन्तर पढ़ रहा हूँ...अपनी जान देकर तुझे जरूर जिन्दा करूँगा रानी।' कहते-कहते उसके चेहरे पर भयानक क्रूरता छा गई।

मन्तर पढ़ा उसने। सातों कौड़ियां जमीन पर पड़े सांप की पीठ से चिपक गईं। निश्चल सांप बौखला उठा। कौड़ी के स्पर्श से सांप के मुलायम चमड़े में आग-सी लग गई। फन उठाकर वह झपटा टिकोरा की ओर। टिकोरा आंखें खोले सांप की आंखों में

देखता रहा और मन ही मन मन्तर पढ़ता रहा ?

काली रात, नीरवता पीकर सायँ-सायँ कर रही थी। बाहर विषैले सांपों की फुत्कार हवा के कलेजे में जहर पैदा कर रही थी। टिकोरा ने चुटकी भर धूल उठाकर सांप पर फेंका।

खुले दरवाजे की राह उड़ चला सांप, जंगल की ओर।

टिकोरा खतरनाक प्रयोग में जीत तो गया मगर मैना की मौत से नहीं ही जीत सका।

तभी बाहर से किसी ने पुकारा—'उस्ताद ! घर में हो।'

मौन रहा टिकोरा। सुना नहीं उसने।

'उस्ताद ! अरे ओ उस्ताद !' हाँक लगाता कोई अन्दर घुस आया। मगर बेखबर रहा टिकोरा। मैना जमीन पर एक तरफ पड़ी थी। आगन्तुक पास आकर खड़ा हो गया था।

'उस्ताद ! यह जो...'

'कौन ? तुम !' पास ही किसी का स्वर सुनकर बोल पड़ा टिकोरा। विचारों की शृंखला टूट गई—'कब आये सम्पू ?'

'अभी ही तो...' कहा सम्पू ने—'यह जो मैना है न उस्ताद ! खराब होने लगी है। अब माथा-पच्ची करना बेकार है...फेंक दो इसे ...गाँव वाले भी डर रहे हैं...'

'क्यों ?'

'कहते हैं मैना भूत बन गई है मर कर।'

'हा-हा-हा।' एक-ब-एक अट्टहास कर उठा टिकोरा। भयभीत हो उठा सम्पू—'हा-हा-हा...गाँव वाले शैतान हैं सम्पू !'

टिकोरा की विकृत भाव-भंगिमा देख काँप उठा सम्पू।

'मैना मरी नहीं सो गई है.... इसे जगाना ही होगा।'

'हाँ उस्ताद, पर....' कहते-कहते रुक गया सम्पू।

'पर क्या ? बोल न !'

'मैना का शरीर नष्ट हो रहा है उस्ताद !...कोई दवा बनाकर लगा दो। बदन सही-सलामत हो जाय....'

'बना दे दवा !...लगा दूंगा; पर इसे मरी मत समझ सम्पू ! मैना जीवित है, मर गया है टिकोरा ! शहर के परदेसी ने टिकोरा की जान ले ली —' कहते-कहते उसके चेहरे पर पैशाचिकता नाच उठी—'परदेसी की जान लेकर ही छोड़ूंगा।'

'मुझे डर लगने लगा है उस्ताद !'

'किससे....किससे डरता है तू ? क्या परदेसी से ?'

'नहीं, गांव वालों से....सभी खिलाफ हैं उस्ताद !'

'किसके ?'

'तुम्हारे !' कहा सम्पू ने।

'हा-हा-हा ... टिकोरा की ताकत इतनी कम नहीं सम्पू ! मुठ्ठी भर गांव वाले कुछ बिगाड़ नहीं सकते मेरा। अभी मन्तर से गांव भर के सांपों को बांध दूं तो पिटारी में छिपे सांप निकल कर एक-एक को डंस लें और कोई उलटी सांस भी न ले सके। किसी की मिहरबानी से उस्ताद नहीं बना हूं...'

'पर तुम्हें उस्ताद तो कोई नहीं मानता।'

'लोग मेरी ताकत भूल गये हैं। उस्ताद भी मुझसे हार कर मर गया तो गांव के इन छोकरों की क्या वकत।'

'आज ही शाम को पंचायत बैठेगी, अगर हार गये तो ?'

'कौन हरायेगा मुझे ! —' थोड़ी देर रुक कर बोला टिकोरा। इस बार उसका स्वर भारी एवं अतिशय गम्भीर था—'यह सब क्या हो रहा है....जानते हो सम्पू ? इसकी वजह है, मैना और परदेसी ! दोनों ने मिलकर मुझे बरबाद कर दिया है। गांव वाले किसके मन्तर पर उछल रहे हैं, जानते हो ?...तुम नहीं जानते होगे; मगर...'

'जानता हूं उस्ताद ! चिकोरा के बल पर...चिकोरा नाग बन गया है, उसी के इशारे पर गांव के सांपों ने फन उठाया है।'

'एक-एक की गर्दन तोड़ दूंगा सम्पू ! जरा मैना को ठीक तो हो जाने दे। सारी बुद्धि तो यही खा गई है मेरी ! ला तेल, इसके बदन पर लगा दूं।' टिकोरा विवश आंखों से मैना को देखने

लगा, जो काली रात की नीरवता पीकर चुप थी।

'इससे कुछ नहीं होगा उस्ताद !'

'मुझसे अधिक जानता है क्या ?' तड़प उठा टिकोरा।

सम्पू सहम गया टिकोरा की बात सुनकर। तेल लाकर मैना के मुर्दा शरीर पर मालिश करने लगा।

साँप का जहरीला तेल, साँप के विष से मरी मैना के शरीर पर चमक लाने लगा। सूखी चमड़ी मुलायम हो चली।

'कल चिकोरा मिला था।'-मालिश के बीच में बोला सम्पू।

'तो ?'

'हाथ में जङ्गली विषधर लिए था। पूछा तो कहने लगा—तुम्हारे बाप का खून पीने जा रहा हूँ। तुम्हीं को कह रहा था।'

सुनकर तमतमा उठा टिकोरा।

'कहाँ है वह गेहुँवन ? कहाँ होगा वह लुच्चा ! चल तो...' चीख पड़ा टिकोरा। क्रोध से काँपता खड़ा हो गया।

'रोक दूँ मालिश !'

टिकोरा की जलती आँखें मैना पर पड़ीं। नशा उखड़ गया मगर खुमारी नहीं उतरी। क्रोध पानी बनकर बह चला। थर-थरा उठे टिकोरा के पैर। उसकी उत्तेजना ठण्ढी हो गई तो धम्म से जमीन पर आ गया और मैना के शरीर पर अपना सर पटक कर आर्तनाद कर उठा—'तू... चुड़ैल बन गई मैना ! टिकोरा को मार ही डालेगी। मगर मरेगा नहीं यह टिकोरा। जी-जीकर तड़पेगा और तड़प-तड़पकर तड़पायेगा तुझे।'

उसके दिमाग पर पागलपन सवार हो गया था। कभी चीख-चीख कर हँसता वह और कभी हँस-हँस कर रोता। अजीब अवस्था होती जा रही थी उसकी।

× × ×

शाम हुई। सभी तैयार होकर आये। बड़े से इमली के पेड़ के नीचे सँपेरों का गिरोह एकत्रित हुआ। प्रत्येक के गले और हाथों में विषैले गेहुँअन, करैत फुत्कार रहे थे। पंच अपने आसन

पर आसीन थे। मशालें जल रही थीं। लोगों की आँखें किसी के आने का इन्तजार कर रही थीं। टिकोरा अभी तक नहीं आया था। अन्त तक वह नहीं ही आया। संपेरों में काना-फूसी होने लगी। किसी ने कहा कि डर गया है वह।

मगर टिकोरा ! पागल, विक्षिप्त भूला-भूला-सा किवाड़ बन्द किये, मैना के पास बैठा...पत्थरों से अपना सर फोड़ रहा था खून बह रहा था उसके सर से, पर जैसे उसे फिकर ही नहीं।

बगल ही में सम्पू आग जलाकर दवा तैयार कर रहा था।

'हा-हा-हा !' टिकोरा अट्टहास कर उठा—'कोई है यहाँ ?—है तो बोलता क्यों नहीं ?'

'उस्ताद !' सहमा-सहमा-सा स्वर था सम्पू का।

'उस्ताद के बच्चे !...लुच्चा, बदजात ! इतनी देर से चीख कर गला फाड़ रहा हूँ और सुनता नहीं है तू ?...कमीना !' फुत्कार उठा टिकोरा कुचले साँप की तरह।

चीख उठा सम्पू; टिकोरा के वज्र सदृश हाथों के थप्पड़ ने जब उसके गालों का आलिङ्गन किया, मगर रहा खामोश।

सम्पू को मारकर अपने सर के बाल नोचने लगा वह। गले के साँप को खींच कर जमीन पर फेंक दिया। उपेक्षा की चोट खाकर मणिधर उदण्ड हो उठा। फुत्कार कर दौड़ा वह टिकोरा की ओर मगर होशियार सम्पू ने दौड़ते साँप को मन्तर से बाँध दिया। बेजान होकर गिर पड़ा वह। पागल टिकोरा उठकर खड़ा हो गया। बढ़कर दरवाजा खोला उसने—बाहर अँधेरा था। आकाश में तारे छिटक चुके थे।

'सम्पू, शाम हो गई...आज परीक्षा है न मेरी चलो चलें...लोग जुट गये होंगे।'

सम्पू के साथ टिकोरा गले में साँप डाले चल पड़ा।

× × ×

और इधर संपेरों का क्रोधित समूह टिकोरा का इन्तजार करते-करते थक गया था। धिमानी सर झुकाये, गम्भीर होकर

कुछ सोच रहा था—'अभी तक आया नहीं टिकोरा !...बुला लाओ कोई ।' धिमानी ने सर उठाकर कहा ।

'डर गया है...वह नहीं आ सकता बाबा ! गुनहगार अपनी सफाई दे भी क्या सकता है ?...बुजदिल !'

'चुप रहो चिकोरा ! हस्ती के बाहर मत बोलो । बुजदिल होने का फैसला तो अभी हो जायगा...' किसी का क्रोधित स्वर सुनकर चौंका चिकोरा । आँखें खोलकर देखा उसने—सामने लाल-लाल लपटों-सा जलता टिकोरा खड़ा था । आगे बढ़ते हुए कहा टिकोरा ने—'लाये हो अपना साँप !...आ जाओ मैदान में ।'

धिमानी कुछ बोले उसके पहले ही सिद्धहस्त सँपेरे मैदान में उतर पड़े बाजी जीतने के लिए । दो काले-काले साँप जमीन की छाती पर रेंग उठे । फुत्कारे तो धरती का कलेजा काँप-काँप कर रह गया । एक था टिकोरा का मणिधर । किसी को काट ले तो उल्टी साँस भी न ले सके...और दूसरा था चिकोरा का सफेद धारियों वाला साँप । जो संयोग से मिल गया था उसे । पाँच हाथ लम्बा, आँखों में क्रोध और बदन में फुर्ती, टिकोरा के विष-धर से कम नहीं । टिकोरा हटकर दूसरी तरफ बैठ गया, भीड़ से दूर । उसका चेहरा तमतमा उठा था । भयानक काँपते होठों पर मन्तर चल रहे थे ।

दोनों साँप तूफान बन गये थे । उलझ गये थे एक-दूसरे से । चिकोरा के साँप ने टिकोरा के साँप को कई जगह काट खाया ।

टिकोरा का मन्तर कमजोर पड़ने लगा । भीड़ में खड़ा सम्पू धीरे-धीरे अन्धकार में छिपते हुए टिकोरा की बगल में जा पहुँचा । धीरे से बोला—'यह क्या उस्ताद ! हार हो रही है यह तो...मणिधर कभी हारा तो नहीं किसी से, आज क्यों ?'

'चुप रह ! आँखें मूँदकर देखता चल जो कुछ हो रहा है ।'

'उस्ताद ! मणिधर भाग गया....देखो, देखो तो आँखें खोलो उस्ताद !' घबड़ाया स्वर था सम्पू का ।

टिकोरा आँखें मूँदे पढ़ रहा था मन्तर । उसका साँप मैदान

छोड़कर भाग गया, पीछे-पीछे चिकोरा का सांप भी दौड़ा।

'हा-हा-हा !' भयानक अट्टहास कर उठा चिकोरा—'टिकोरा आज हार गये तुम। आंखें खोलकर देखो तमाशा....'

'तमाशा देखो तुम...' टिकोरा की आंखें खुल गईं लाल-लाल आंखों में लपटें उठ रही थीं—'जरा-सी जीत कोई जीत नहीं चिकोरा !....अब देखो...'

'देखा है, मगर जरा-सी हार बहुत बड़ी हार...' कहते-कहते रुक गया चिकोरा; जैसे उसकी जुबान को लकवा मार गया हो।

उसने देखा—टिकोरा का सांप उड़ता-उड़ता टिकोरा के सामने आ गिरा था और उसके सांप को एक नेवला टुकड़े-टुकड़े कर खून चाट रहा था मजे से। इतनी जल्दी यह घटना घट गई कि किसी की आंखों ने देखा भी नहीं।

'जी भर कर तमाशा देख लो। अब जा रहा हूं मैं। कल के छोकरे हो तुम चिकोरा ! बहुत छोटे !'

कहकर जाने के लिए तैयार हुआ टिकोरा तो—

'रुको अभी...लौटकर जाने के लिए नहीं आये हो तुम !' कहते-कहते चिकोरा ने अपनी कमर के छूरे को हाथ में ले लिया और टिकोरा के आगे आ खड़ा हुआ—'तुम्हारा मन्तर मेरे सांप को बांध सकता है, इस कटार को नहीं !'

चिकोरा के हाथ में चमकते हुए छुरे को देखकर धिमाबी चकित रह गया और आस-पास खड़े टिकोरा के विरोधी खुश।

पास की झाड़ी में शीतल के साथ छिपी चमकी का कलेजा धड़कने लगा। वह शीतल के पास खिसक आई। चिकोरा दो कदम आगे बढ़ा। टिकोरा खामोश रहा हाथ के सांप को सहलाता हुआ। चिकोरा के हाथ में कटार कांप रही थी। वह बिलकुल पास आ गया टिकोरा के। दोनों के बीच सिर्फ पांच हाथ की दूरी थी।

लोगों की आंखें, होनेवाली घटना का इन्तजार कर रही थीं।

'दुनिया के ऊपर भेज दूंगा तुम्हें....दुनिया में रहने लायक

वहीं हो तुम...नीच !'

'चुप रहो चिकोरा !' गरज उठा टिकोरा। भवें तन गईं उसकी। आँखों में एक खूनी भाव जल उठा।

'तुम चुप रहो ! ...' चीख पड़ा चिकोरा। उसके हाथ का छुरा सजग हुआ। वह झपटा टिकोरा पर और...

● ●

चमकी घर में नहीं थी। एक चट्टान पर बैठकर शीतल धूप खा रहा था और सामने देख रहा था। एक साँप मेढक को निग-लने में व्यस्त था। देखने में तल्लीन था शीतल। उसे आस-पास की सुध तक नहीं थी। कोई आया और पीछे खड़ा हो गया मगर शीतल को कुछ पता नहीं चला। थोड़ी ही देर में मेढक की सारी काया पतले जहरीले साँप के बदन में घुस गई। उसका रोम-रोम भय से काँप उठा।

'बाप रे !' अपने-आप उसके होठों पर से ये शब्द निकल पड़े।

'हा-हा-हा !' कोई भयावनी हँसी हँस पड़ा।

चौंककर शीतल उठ खड़ा हुआ। डर गया था वह अट्टहास सुनकर। मुड़कर देखा—एक अनजान सँपेरा खड़ा था।

'डर गये बाबू ! यह तो एक मामूली खेल था...अजगर को जो आदमी लीलते देख लो तो जान ही निकल जाय....हा-हा-हा !' एक बार पुनः हँस पड़ा सँपेरा।

'कौन हो तुम ?' धीमे से पूछा शीतल ने।

'मैं —मैं सम्पू हूँ....इसी गाँव का...आज अकेले बैठो हो परदेसी ? चमकी कहाँ गई ?'

'मैं नहीं जानता...' छोटा सा उत्तर दिया शीतल ने।

'अच्छी बात है —फिर मिलेंगे....भूल मत जाना...मेरा नाम सम्पू है !....उस्ताद टिकोरा का शागिर्द हूँ मैं !'

कहता हुआ चला गया सम्पू मन्थर गति से। सम्पू चला जा रहा था। तभी उसकी आँखों ने दूर पगडण्डी पर, जङ्गल की ओर चमकी को देखा। लम्बे डग भरता हुआ वह उधर को चला

और पहुँच ही गया वहाँ। बगल से निकलती हुई चमकी को उसने धक्का दिया। जवानी के डगमगाते पाँव लड़खड़ा उठे। गिर पड़ी चमकी। धूल झाड़ती हुई उठ खड़ी हुई। मुँह से निकला—'कमीना, लुच्चा, कुत्ता !'

सुनकर हँस पड़ा सम्पू। बोला—'क्या हो गया रानी जो आशीर्वाद की झड़ी लगा रही हो ? बहुत खुश हो क्या ?'

'देखकर नहीं चलते ...अन्धे !' तड़प उठी चमकी।

'जियो जी जियो....' शरारत से हँसकर बोला सम्पू—'आँखें तो उस्ताद कसम दो हैं मगर तुम्हें देखते ही अन्धी क्यों हो जाती हैं। इसमें मेरा दोष नहीं। तुम्हारी जवानी का कसूर है।'

'चुप रहो जी....' चमकी चीख उठी।

'नागिन बनकर भय मत दिखा चमकी !' सम्पू भी गरम हो गया—'उस्ताद कसम। मुझे किसी का डर नहीं। सीधे-सीधे एक दिन मेरी बन जा....नहीं तो....'

'तेरी बने मेरी जूती...जा, जो करना हो कर लेना...' कहकर चमकी गाँव की ओर चली गई।

सम्पू देखता ही रह गया। हाथ से नागिन निकल गई।

'हूँ !...देखूँगा।' सम्पू के होंठ बुदबुदाये और वह जंगल की तरफ चल पड़ा।

क्रोध से जलती चमकी तेजी में अपने घर की ओर चल पड़ी। तूफानी पैरों ने शीघ्र ही झोपड़े के आगे ला खड़ा किया उसे। हाथ की गठरी फेंक दी उसने नीचे।

'छैला ! कहाँ हो जी ?' तेज स्वर में पुकारा उसने।

'यहीं तो हूँ, दिखाई नहीं देता ?' पास ही लेटा शीतल बोला।

'देता तो है...आँखों में घाम समा गई है सो चौंधिया रही हैं, कहो कैसे हो ?'

'बहुत खराब !...देख लो न !'

'सच !' बोली चमकी और पास आकर शीतल की बगल आबाद की उसने।

'कोई आया था, पूछ रहा था तुम्हें...'

'कौन ?...'

'मैं नहीं जानता....कह रहा था—मेरा नाम सम्पू है !' सहज ही में कहा शीतल ने।

सुनकर चौंक पड़ी चमकी।

बोली—'अच्छा, तो यहाँ भी आया था बेईमान। देखो जी; उससे मत बोला करो....बड़ा खराब आदमी है।'

'अच्छा !' कहा शीतल ने—'चिकोरा नहीं दिखाई पड़ा कल से....कहाँ गया है...जानती हो तुम ?'

'सदमा पहुँचा है उसे, हार गया न ! टिकोरा को कौन पा सकता है। मैंने लाख मना किया कि टिकोरा को मत छेड़ो।' कहते-कहते दुखी हो उठी चमकी—'जङ्गल में जाकर मन्तर जगा रहा है। वहीं तो गई थी, समझाया। आज रात को आयेगा।'

'मन्तर कैसे जगाया जाता है। तुम तो जानती होगी ?' शीतल ने आँखों उत्सुकता लाकर पूछा।

'तुम भी तो जानते हो बाबू ! तुमने तो अपने मन्तर से बेबस कर दिया है...' चमकी ने वासना भरी दृष्टि से देखा।

शीतल ने बात बदल दी।

'चमकी ! अगर चिकोरा छुरे से टिकोरा को मार देता तो।'

'तब तो अमन मिल जाता सारे गाँव को....मगर वह साँप उस्ताद का है, वैसा साँप गाँव में किसी के पास नहीं। हरामी बीच में दीवार बन कर खड़ा हो गया था वरना टिकोरा तो वहीं ही बचता...'

'अजीब है यह देश चमकी ! मुझे शहर पहुँचा दो...लगता है, कुछ दिन यहाँ रहा तो बच नहीं सकूँगा। मौत की बात सोच कर मैं डर जाता हूँ। यहाँ के लोगों की सूरत देखता हूँ तो जैसे काटने दौड़ते हैं और यह सम्पू जो आया था, थोड़ी देर पहले धमकी ही देकर गया है...'

'क्या कहा था हरामी ने।'

'कहता था, भूल मत जाना मुझे परदेसी ! उस्ताद का शागिर्द हूँ मैं !'

'टिकोरा के कारण सम्पू का सर आसमान पर चढ़ गया है... सोचता है, उसका कोई कुछ बिगाड़ ही नहीं सकता...उसके दांत तुड़वा दूंगी ...और देखो बाबू ! जाने का नाम न लिया करो ! मैं जिन्दा न नहीं रह सकूँगी छबीले ! तुम्हें देख-देख कर ही तो जी रही है यह चमकी !'

चमकी और शीतल लेटे पड़े थे। दोनों की उनींदी आँखें चिकोरा का इन्तजार कर रही थीं ! आधी रात के घड़ी भर बाद आया चिकोरा। आकर जमीन पर लेट गया बदहवास-सा। मगर आँखों में नींद की एक झपकी भी नहीं आई।

दूसरे दिन चिकोरा मन ही मन टिकोरा की हत्या का षड्यन्त्र रच रहा था। चमकी और शीतल घर में नहीं थे, शायद जङ्गल गये थे। तभी कोई आया। चिकोरा ने देखा—होठों पर पैशाचिक हँसी लिए सम्पू था। चिकोरा देखकर जल उठा। मगर अपने अन्तर के भावों को छिपाकर पूछा उसने—'कहो, कैसे आये सम्पू। सबेरे-सबेरे कौन-सी जरूरत यहाँ तक खींच लाई ?'

'छैला नजर नहीं आ रहा है और चमकी भी...कहाँ गये हैं दोनों ?' बैठता हुआ बोला सम्पू।

अपने आने का कारण एकदम उड़ा गया वह।

थोड़ी देर ठहर कर बोला—'यह सब ठीक नहीं चिकोरा !'

'क्या ?...ठीक नहीं है ?'

'यही सब, छैला को उसके घर भेज दो। गाँव वाले इसे अच्छा नहीं समझते। ऐसी-वैसी बातें सुनने को मिली हैं मुझे।'

चिकोरा के कान में सम्पू विष घोल रहा था। शङ्का पैदा कर रहा था उसके हृदय में। गाँव में चारों तरफ परदेसी छैला और चमकी के विषय में बातें फैल गई थीं। मगर चिकोरा से तो अभी ही सम्पू ने कहा था। वह तो दुनिया की चहल-पहल से दूर रहकर आज-कल सिर्फ अपने दुश्मन टिकोरा को दफनाने का

उपाय खोज रहा था। सम्पू की बात सुनकर शङ्का की एक तीक्ष्ण लौ चिकोरा के अन्तर में जल उठी किन्तु शीघ्र ही उसका दिमाग कुछ और सोचने लगा। सोचने लगा कि शायद टिकोरा की सीख लेकर आया है यह करैत !

'तुम जा सकते हो सम्पू ? फजूल की बातों के लिए मेरे पास वख्त नहीं....'

'फजूल की बात कहते हो इसे। उसूल के खिलाफ है यह सब। मेरा क्या, पञ्चों के आगे जवाब देना होगा तुम्हें !' कहता हुआ जाने के लिए उठ खड़ा हुआ सम्पू।

'दे लूंगा...'

'उससे पहले उस्ताद को जवाब देना होगा ...' कहकर हँस पड़ा सम्पू।

'चुप रहो ...' इस बार चिकोरा का स्वर घृणा से भरा था—'उस्ताद कौन है इस गाँव में....बता सकते हो तुम...कह देना टिकोरा से, चिकोरा से भिड़ने के लिए तैयार रहे। आमने-सामने की लड़ाई में भले ही जीत ले, धोखे की लड़ाई में तो नहीं ही पार पा सकता—पागल भी तो हो गया है...'

टका-सा जवाब पाकर सम्पू झुंझला उठा और दाँत पीसता, पाँव पटकता चला गया। वह सीधे टिकोरा के पास पहुँचा। टिकोरा अपने काम में व्यस्त रहा। बेजान शरीर की पूजा करने वाला पुजारी सजीव इन्सान की खबर नहीं पा सका।

'तुम तो जीत गये उस्ताद।' खामोशी तोड़ी सम्पू ने।

'हाँ तो...'

'मुझे तो आकाश का तारा मिल गया है उस्ताद ! तुम्हारी कसम, कमाल का मन्तर है तुम्हारे पास...चिकोरा बड़ा शैतान है....' मतलब की बात पर उतर आया सम्पू !

वह टिकोरा और चिकोरा को लड़ाकर चिकोरा को मारना चाहता था और उसके बाद तो रास्ता साफ था उसका ... चमकी उसकी हो ही जायगी। चमकी की निखरती अदा पर कुछ ही

दिनों से फिदा हुआ था वह। और अब तो बीमारी काफी बढ़ गई थी—

'चिकोरा तुम्हें धोखे से मारने को कह रहा था उस्ताद !'

'किसे !' मालिश छोड़कर टिकोरा ने सम्पू की ओर देखा।

'तुम्हें उस्ताद....तुम्हीं को तो...'

थोड़ी देर गुमसुम रहने के बाद टिकोरा खिलखिलाकर हंस पड़ा। फिर गम्भीर होकर उसने सम्पू से पूछा—'गांव में तुमने कुछ देखा है सम्पू !'

'मेरे बाप....देखा है.. बहुत कुछ देखा है। तुम्हें जीतते देखा, लोगों को हारते देखा। तुम्हें उस्ताद बनते देखा और...'

'चुप रह ! खाक देखा तुमने...' बीच ही में रोका टिकोरा ने—'गांव में कोई शहरी आया है ?'

'ओ, हां ! चिकोरा एक परदेसी को लाया है। बड़ा हसीन, खूबसूरत-सा।'

'बस कर ! इस बला को हटाना होगा गांव से। शहरी नाग होते हैं। अगर किसी को डंस लें तो सारे मन्तर छूमन्तर हो जायें। मैना को देख, बरबाद कर दिया एक नाग ने...'

टिकोरा के भयंकर चेहरे पर क्रूर भाव आया।

आंखों में परदेसी की आकृति नाच गई।

हर एक शहरी टिकोरा की नजरों में सांप बन गया था।

'चिकोरा को बुला सम्पू ! गांव के कानून तोड़ने वालों के लिए मेरे पास छमा की कोई गुंआइश नहीं...'

सम्पू चिकोरा के पास पुनः गया और फिर वापस लौट आया।

बोला—'उस्ताद ! नहीं आया वह...बोला, फुरसत मिलने पर मिलूंगा !'

'ठीक है...समझूंगा उससे किसी दिन.. तू जा !'

थोड़ी देर खामोश होकर सम्पू ने एक चाल सोची और चलने के लिए उठ खड़ा हुआ।

● ●

शीतल और चमकी के सम्बन्धों की चर्चा पूरे गाँव में फैल चुकी थी। बूढ़े धिमानी के कानों तक भी बात पहुँची। सभी का भला चाहने वाला बुजुर्ग चिन्तित हो उठा, उसका दिल बेचैन हो उठा। धिमानी ने चिकोरा को बुलाया और पूछा—

'यह कैसा बवाल उठ खड़ा हुआ रे चिकोरा !'

'यह सब टिकोरा की चाल है बाबा ! उसी के मुँहलगे सम्पू ने आग लगाई है !' बोला चिकोरा।

'हो सकता है। सम्पू तो किसी और का नाम बता रहा था।'

'उसकी बातों पर यकीन न करो बाबा ! वह तो लुच्चा है।'

'लुच्चे तो तुम हो चिकोरा !... कोई झूठ तो कहता नहीं। बाबा; मेरी बात गलत निकले तो जान ले लेना....हाँ !' कोई पीछे से आकर गरज उठा। सम्पू ही था वह।

सम्पू को देखकर चिकोरा का खून खौल उठा।

मगर सम्पू बोलता ही गया—'चिकोरा, तुमने अपने घर में भयानक साँप पाल रखा है और उसे दूध भी पिला रहे हो।'

'चिल्ला मत छोरे।' धिमानी गरज उठा—'धीरे से बोल; सँपेरा साँप नहीं पालेगा घर में तो क्या छुछुन्दर पालेगा ?'

'मगर ऐसा साँप तो बहुत खतरनाक होता है बाबा ! जिसके दाँत आदमियों जैसे होते हैं। किसी को डँस लेगा तो...'

'किसी को डँसा तो नहीं न...' धिमानी का स्वर तेज था।

'डँस लिया है उसने बाबा ! मेरे मुँह से सच बात मत निकलवाओ....सच सुनने में कड़वा लग जायगा किसी को...' कहते-कहते सम्पू ने चिकोरा की ओर देखा सहमी नजरों से।

गम्भीर मगर तेज आवाज में पूछा चिकोरा ने—'तुम कहो... किसको डँसा है उसने ?'

'तो सुन ही लो ... चमकी को डँसा है उसने !...'

'चुप रहो सम्पू !' ज्वालामुखी बनकर फट पड़ा चिकोरा; और...चट ! चट !

तमाचा खाकर भी गम्भीर बना रहा सम्पू, बोला—'लग

गया व बुरा....अब आकर डूब मरो चुल्लू भर पानी में कहीं...'

इस बार खामोश रह गया चिकोरा। उसका चेहरा लाल हो उठा था। दिल धू-धू जल रहा था।

'तेरे पास सबूत है छोकरे!'

'हाँ बाबा!....अपनी आँखों से देख सकते हो जाकर...नदी किनारे बैठे हैं दोनों...'

चिकोरा और कुछ नहीं सुन सका, उठकर दौड़ा नदी की ओर। धिमानी रोकता रहा मगर जवानी के तूफान को बूढ़ा पर्वत नहीं ही रोक सका। सम्पू का तीर ठीक निशाने पर बैठा था। चिकोरा सोचता जा रहा था। शीतल को जिन्दगी दी है उसने और वह उसकी इज्जत पर कीचड़ उछाल रहा है। शहरी लोग क्या ऐसे ही होते हैं?

चिकोरा आग बनकर शीतल को जलाने जा रहा था और... शीतल चमकी के प्रेमपाश में दीन-दुनिया की सुध बिसारे सपनों की गोद में सो रहा था। चमकी और शीतल पहाड़ी नदी के कछार पर विहार कर रहे थे।

'बाबू, अगर तुम चले गये तो....' चमकी ने उन्मीलित नेत्रों से शीतल की ओर देखते हुए कहा।

'तो समझ लेना, रात का सपना था टूट गया।' स्वर उन्मत्त था शीतल का भी।

'नहीं मेरे रसिया! सपना बनने की कोशिश न करना। चमकी बेमौत मर जायगी।' विह्वल हो उठी चमकी।

'हमेशा मरने का नाम जबान पर न लाया करो रानी!... जाऊँगा तो तुम्हें भी साथ ले चलूँगा... चलोगी न?'

'मेरे राजा! मुझे कोई एतराज नहीं, मगर चिकोरा?... उसे भी ले चलोगे न अलबेले!'

'फूल का भार कितना भी क्यों न हो मगर मादक और हलका होता है....पहाड़ उठाने की ताकत मुझमें नहीं चमकी।' शीतल ने चमकी के लहराते बालों को हाथों से सहलाया।

'मेरे छैला ! तुम्हारी बात मेरे दिमाग में नहीं समायी.... तनिक सीधी बोली बोला करो नऽ !'

शीतल के स्पर्श ने चमकी पर जादू कर दिया था।

'बोलूंगा, पर अभी नहीं....चलो देर हो गई है रानी !... चिकोरा घर लौट आया होगा।'

'हा-हा-हा !' तभी भयानक रूप से कोई हँस पड़ा।

शीतल और चमकी ने चौंककर देखा, चिकोरा खड़ा था। दोनों बासबान में उड़ते-उड़ते जमीन पर आ गिरे।

'तुम्हारे पास ही आ गया हूँ बाबू !' बोला वह।

'मेरे रसिया। कब आये तुम ?' कहती हुई चमकी चिकोरा की ओर बढ़ी।'

'रसिया !...हा-हा-हा ...रसिया तो तेरा छैला है; कमीनी कहीं की...हट !' कहकर चिकोरा ने एक जोरदार धक्का मारा चमकी को। बेचारी जमीन पर मुंह के बल गिर पड़ी।

चमकी को उपेक्षा से देखता, हुआ बोला चिकोरा—'दगाबाज औरत ! मेरा जिस्म छूकर गन्दा करने की ताकत तुझमें नहीं...सफेद नागिन !'

चमकी की फिकर छोड़कर खूंखार सँपेरा हाथों में विकराल काला-सा सांप लिए शीतल की ओर बढ़ा।

भयभीत हो उठा शीतल, बोला—'चिकोरा भाई !'

'भाई ! परदेसी बाबू ! यह रिश्ता इतना आसान नहीं कि निभा सको तुम ! रिश्ता निभाने की खातिर ही तो रोका था तुम्हें ..मगर तुम...'

चिकोरा शीतल की ओर बढ़ा जा रहा था। दोनों के बीच की दूरी कम होती जा रही थी।

चिकोरा ने हाथ के सांप को सज किया।

'मेरे राजा। गजब मत ढाओ...बेकसूर है छैला !' चीख़ती चमकी और चिकोरा को रोकने के लिए लपकी।

'खबरदार ! पास न आना। छैला नहीं छलिया है यह तो।

यह साँप देखो शीतल बाबू !' कहता हुआ चिकोरा शीतल के बगल में पड़ी चट्टान पर बैठ गया—'बड़ा खतरनाक है ! इसका खेल नहीं देखा है तुमने, देख लो आज...'

शीतल सँपेरे के भावों को पढ़ रहा था। चिकोरा ने साँप को जमीन पर छोड़ा। उसका चेहरा उत्तरोत्तर भयानक होता जा रहा था। उसने नीचे झुककर चुटकी में धूल उठाई तो—

'ऐसा मत करो; छैला चला जायगा आज ही; इसी वक्त !' दौड़कर चिकोरा को पकड़ लिया चमकी ने। चिकोरा ने चमकी की छाती पर एक लात मारी तो गिर पड़ी वह।

चुटकी की धूल पर एक फूँक मारी चिकोरा ने और...किसी की चीख से जङ्गल का कलेजा काँप उठा। जमीन पर पड़ी चमकी ने देखा—शीतल के पैरों में विकराल साँप लिपटा था और उसके पैरों को धीरे-धीरे कसता जा रहा था।

'चिकोरा !' किसी ने पुकारा।

चिकोरा ने चारों ओर देखा, कोई नहीं था। चारों ओर देखकर उसने शीतल पर निगाह डाली तो हक्का-बक्का रह गया। शीतल के पैरों में लिपटा साँप भाग गया था कहीं।

किसी ने साँप पर मन्तर डालकर भगा दिया था। चिकोरा हैरान आँखों से चारो तरफ देखने लगा। उसने देखा कि एक झाड़ी में से कोई हाथ के इशारे से उसे बुला रहा है। दौड़ पड़ा वह उसकी ओर, बेतहाशा ! और जब झाड़ी वाले आदमी के साथ वापस आया तो जगह खाली थी। चमकी और शीतल का नामो-निशान तक बाकी नहीं रह गया था वहाँ।

'भाग गये दोनों !' दाँत पीसता हुआ बोला चिकोरा।

'मगर दुनिया से बाहर नहीं !' साथ वाले आदमी ने कहा।

चिकोरा हैरान-परेशान था, चमकी और शीतल की खोज में।

× × ×

सम्पू के पास बैठा है चिकोरा। दोनों में दोस्ती हो गयी है आज-कल। सम्पू की बात सच निकली तो चिकोरा का विश्वास

दृढ़ हो गया है उसके प्रति। सम्पू चिकनी-चुपड़ी बातों का जहर चिकोरा के हृदय में भर रहा था; अपना रास्ता साफ करने के लिए। चिकोरा को क्या पता कि सम्पू कोई मामूली खिलाड़ी नहीं। वह तो अपना मैदान साफ कर रहा था धीरे-धीरे। सम्पू के मन की ही बातें हो रही थीं मगर चमकी और शीतल के गायब होने से उसके दिल में भी एक भय समा गया था।

'आखिर कहाँ जा सकते हैं दोनों?....कौन है इस गाँव में जिसने मेरे खिलाफ कदम उठाया है?' कुचले साँप की-सी दशा हो रही थी चिकोरा की।

'उसे खोजना ही होगा। नहीं तो सारा खेल ही बिगड़ जायगा।' सम्पू ने कहा।

'तू ही खोज सम्पू। बड़ा एहसान मानूँगा तेरा....उल्टे मैंने तुझ ही मार दिया था कल...मुझे क्षमा कर। परदेसी सचमुच साँप था...' कह रहा था चिकोरा—'उस वक्त तू झाड़ी से न बुलाया होता तो गजब न हुआ होता....खैर...अब भी कहीं से खोज निकाल दोनों को।'

सम्पू मन ही मन मुस्करा रहा था।

'मेरी मति तो भ्रष्ट हो गई है सम्पू! खोजते-खोजते हार गया पर पता नहीं किस खोह में जा छिपे हैं दोनों।' चिकोरा क्रोध भरी आवाज में बोला।

'धीरज रखो भाई! सम्पू कोई कच्चा खिलाड़ी नहीं... उस्ताद कसम! आँख का काजल चुरा कर न ला दूँ तो मेरा नाम सम्पू नहीं।' कहकर उठ पड़ा वह।

हँसते हुए सम्पू ने अपना हाथ चिकोरा के कन्धे पर पटका। सहारा मिल गया चिकोरा को। बैठते दिल को एक शक्ति मिली। बोला—'तो ठीक है।' और आगे कुछ नहीं बोला वह।

दो भयानक दैत्यों की बात-चीत खतम हो गई; दोनों ने अपनी-अपनी राह ली। मगर चमकी और शीतल!

भूले-भटके प्रेमी! राह खोजने में लगे थे। खोज रहे थे उस

देश की राह; जो इस दुनिया से दूर बसा हो, जहाँ इन्सान का नाम; जिन्दगी के कानून और मौत का इन्साफ तक न हो।

गाँव की एक झोपड़ी, जो पता नहीं कब से एक किनारे खड़ी-खड़ी दुःख-सुख की साँस लेते-लेते जीर्ण-शीर्ण होकर जी रही थी; अपनी मौत की जिन्दगी को जिलाती जा रही थी, किसी के जीवन की रक्षा करने के लिए। यह बूढ़े धिमानी की बूढ़ी झोपड़ी थी। उजड़ी झोपड़ी की छाया में दो व्यक्ति बैठकर धीरे-धीरे बातें कर रहे थे। चेहरे पर निराशा और भय के निशान चमक रहे थे। खर-पत्ते की आवाज भी उनको डराने के लिए काफी हो जाती थी। झोपड़ी का द्वार अन्दर से बन्द किये बैठे थे दोनों। दूर से जर्जर और अनुभवी बुढ़ापा लिए धिमानी, अपनी झोपड़ी की ओर आहिस्ता-आहिस्ता आ रहा था। मंजिल समीप देख धिमानी जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाने लगा। तभी—उसे अपनी झोपड़ी के बाहर किसी की आकृति हिलती-डुलती नजर आई। सफेद हुई भौहों पर बल डालकर पहचानने की कोशिश करने लगा धिमानी पर बूढ़ी आँखों की रोशनी ने साथ नहीं दिया उसका। वह जल्दी-जल्दी अपने घर के आगे पहुँचा। मगर तब तक कोई भाग चुका था। धिमानी चिन्ता में डूब गया ! खोज भरी आँखों से चारों ओर निहारने लगा। किसी को देख नहीं पाया तो घर के दरवाजे के सामने आकर खड़ा हो गया।

भीतर से किसी की बात-चीत उसके कानों से टकराई, उसके कान सजग हो गये। ध्यान देकर सुनने लगा वह—

'अब क्या होगा ?' स्वर था किसी पुरुष का विवश, दुखी।

'चलो शहर भाग चलें बाबू ! साँपों के बीच तुम्हारी जिन्दगी जी नहीं सकेगी, छटपटाती ही रहेगी...' औरत की आवाज थी यह, करुण, दर्द भरी।

'रास्ता देखा नहीं है चमकी ! किस रास्ते से चलोगी ?'

'खण्डहर की राह....जिधर से मैना के साथ परदेसी भागा था...' चमकी बोली।

चमकी और शीतल ही थे वे दोनों। दो आकुल प्राण पंछी बन कर उड़ने के लिए पङ्ख फड़फड़ा रहे थे।

'चमकी !' किसी ने बाहर से पुकारा।

चमकी बोली—'बाबा हैं ! डरने की बात नहीं।'

धिमानी भीतर आया। शीतल के पास बैठता हुआ बोला—'कौन आया था, अभी-अभी किसी को बाहर देखा था मैंने !'

'कोई तो नहीं।' चमकी बोल उठी शीतल के पहले ही।

'धोखा हो गया शायद मेरी आँखों को...बूढ़ा हो गया हूँ नऽ !' पसीना पोंछता हुआ बोला धिमानी।

चमकी और शीतल धिमानी के घर में थे। उस दिन क्रोधित टिकोरा के चंगुल से धिमानी ने ही शीतल को अपने मन्तर के जोर से बचाया था और टिकोरा के हटते ही दोनों को अपने घर ले आया था। मगर अभी खतरे कहाँ टले थे। धिमानी के पास इतनी ताकत नहीं कि टिकोरा की जवानी से भिड़ सके।

'बाबा, शहर पहुँचा दो इसे।' कहते-कहते रुक गई चमकी।

वह कह नहीं सकी तो शीतल ने कहा—'मेरे साथ इसे भी जाने दो बाबा ! चमकी को टिकोरा जिन्दा नहीं छोड़ सकता।'

'हाँ बाबा ! मैं नहीं रह सकूँगी छैला के बिना...'

'चुप रह तू...तूने बेकार ही बाबू को फेर में डाल दिया है...' धिमानी था...अजीब उलझन में पड़ गया था बेचारा।

डाँट खाकर रोने लगी चमकी।

रोती-रोती बोली—'तो इसे ही पहुँचा दो बाबा ! पैर पड़ती हूँ... चमकी को मार डालो...चुड़ैल हूँ मैं तो !'

'मैं भी यहाँ नहीं रहना चाहता। तुम दोनों के साथ मैं भी चलूँगा।' धिमानी बोला। चमकी सुनकर खुश हो गई।

'जरा गाँव घूम आऊँ मैं, टिकोरा भी मैना के पीछे पागल हो गया है। जाते-जाते उसे भी समझा-बुझा दूँ, फिर कहाँ मौका मिलेगा ?' कहता हुआ जाने के लिए उठा धिमानी।

और धिमानी चला जा रहा था टिकोरा के घर की ओर।

रास्ता आधा ही तय किया था उसने कि उसकी विवश दृष्टि ने दो अवश जवानों को आपस में बातें करते देखा।

एक था चिकोरा और दूसरा सम्पू! दोनों नागों को फन मिलाये देख धिमानी के दिल में शंका उठ खड़ी हुई। उसने देखा—सम्पू धिमानी की ओर संकेत कर चिकोरा को कुछ बता रहा था, जो दूर रहने से धिमानी सुन नहीं पा रहा था।

चिकोरा के पास नहीं गया वह। उलटे पाँव वापस झोंपड़ी में लौट आया। आकर बाहर एक चट्टान पर बैठ गया। अन्दर शीतल और चमकी शाम होने का इन्तजार कर रहे थे।

'बाबा!' किसी ने पुकारा मीठी आवाज में।

धिमानी का झुका सर ऊपर उठा। बोला—'चमकी तू... क्या है? अन्दर जाकर बैठ! आजकल पेड़-पौधों को भी आँख हो गई है। जानती नहीं!...'

'अच्छा बाबा! देखने आई थी कि साँझ हुई या नहीं...' कहती हुई चमकी फिर भीतर चली गई।

चिन्ता में डूबा धिमानी बैठा था, तभी चिकोरा और सम्पू आते दीख पड़े। सीधे उसी के पास आये।

'आ बैठ चिकोरा! कैसे भूल पड़ा बेटे!'

'मैं बैठने नहीं आया हूँ बाबा!' क्रोधित स्वर में गरज कर बोला चिकोरा—'चमकी और शीतल को जानते हो तुम!' हाथ में साँप लिए धिमानी के सामने आ खड़ा हुआ वह।

'मैं क्या जानूँ!...'

'लेकिन मैं जानता हूँ!' सम्पू बोला।

'क्या इरादा है तेरा?...' धिमानी गरज पड़ा।

अन्दर से जब चमकी और शीतल ने चिकोरा का स्वर सुना तो बेजान हो गये दोनों। मौत आँखों के आगे नाच उठी।

'अभी बताता हूँ...' कहकर चिकोरा ने हाथ के साँप को धिमानी के घर के भीतर फेंक दिया।

'छोकरे!' धिमानी चिल्लाता हुआ भीतर दौड़ा।

'यह साँप मन्तर से बँधा है बाबा ! तुम्हारा मन्तर इसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता । भला चाहते हो रुक जाओ यहीं; नहीं तो जबान हिलाने के पहले ही तुम्हारी जान निकल जायगी ।'

मगर घिसाची ने कुछ सुना नहीं । वह बिना रुके भीतर की ओर दौड़ा । तभी चिकोरा नें इशारे से सम्पू को कुछ कहा ।

सम्पू ने कमर में लटकी कटार हाथों में ली और विद्युत वेग से घिसाची की पीठ में एक-दो-तीन ! तभी एक चीख और निकली जो शीतल के गले की थी । चिकोरा दौड़कर भीतर घुस पड़ा । जमीन पर शीतल के मुर्दे शरीर से लिपटी चमकी के बालों को उसने बेदर्दी से पकड़ लिया । चमकी को घसीटता हुआ चिकोरा घर पहुँचा । उसे रूई को तरह धुनने लगा और सम्पू देखता रहा—चुपचाप । सम्पू की लगाई आग में छैला जल कर राख हो गया था । उसके रास्ते का काँटा वही तो था । और चिकोरा भी उसी के हाथ का पुतला बन गया था । अब क्या है । चमकी को जब चाहे कलेजे से लगाकर अपनी आग बुझा सकता है । चाहता तो अभी ही...मगर किस बात का खौफ है, जो इतनी जल्दी करे ।

दूसरे दिन सम्पू हँसता हुआ हाजिर हुआ ।

चिकोरा ने उसकी बड़ी खातिर की ।

चमकी भीतर बदहवास; अस्त-व्यस्त-सी पड़ी थी । उसकी दुनिया अँधेरी हो गई थी । जीने की तमन्ना मर गयी थी जैसे ।

'सम्पू ! तुम रहो यहाँ — मैं जरा जङ्गल घूम आऊँ....चिड़िया उड़ न जाय—देखना !'

'चिड़िया का पङ्ख तो परदेसी छैला था और वह तो कट चुका है ।' हँसता हुआ बोला सम्पू—'तुम ठाट से जाओ ।'

चिकोरा चला गया तो सम्पू रोती हुई चमकी के पास आकर बैठ गया । कुटिल हँसी हँसकर पूछा उसने—'कैसी तबीयत है भाभी ! देख ली न सम्पू की ताकत !...अब भी मेरी बन जा, चैन से रह लेगी...' सम्पू ने चमकी का हाथ पकड़ लिया ।

हाथ झटक दिया चमकी ने । नागिन की तरह फुफकार कर

बोली—'कमीना; चला जा यहाँ से। तेरी बने मेरी जूती!'

'तुझे जूती ही बना करके छोड़ा है मैंने! पैरों में पहनना तो पड़ेगा ही।' कहते-कहते सम्पू ने चमकी को अपनी बाँहों में कस लिया, जबरदस्ती चूम लिया उसके अधरों को! उसके गालों में उसके तीखे दांत धँस गये। सह न सकी चमकी। उसने भी अपने दाँत सम्पू की बाँह में गड़ा दिये। सम्पू चीख पड़ा मगर छोड़ा नहीं उसने। चोट खाकर वह उत्तेजित हो उठा। उसका बन्धन कसता गया...वासना का भूत सवार था उस पर। चीखती रही चमकी मगर छुड़ा न सकी अपने आपको। और सम्पू! वह तो पागल हो गया था। वासना से वह अन्धा बन गया था। उन्मत्त सम्पू अपनी बाँहों में कसे जा रहा था छटपटाती चमकी को। आज वह अपनी तमन्ना निकाल कर रहेगा। सूना घर, बेबस चमकी और वह!—कोई कुछ कहने वाला नहीं। वह वीभत्स दृश्य दीवार की आँखें भी तो नहीं देख सकीं। चमकी का वह रूप—उफ्। चोली खुलकर जमीन की छाती पर मुँह के बल गिरी थी; अजगर के चमड़े का लहँगा अस्त-व्यस्त हो गया था; उसका सौन्दर्य नग्न होकर दिलफरेब नजर आ रहा था। देखकर सम्पू की आँखों में शैतान जाग पड़ा। वासना की आँधी जोरों से चलने लगी और सम्पू मनमानी करता रहा, चीखती रही चमकी...

तभी किसी की आवाज ने गरज कर पुकारा—'सम्पू!'

चमकी को छोड़कर सम्पू अलग हो गया।

सामने चिकोरा दैत्य बनकर खड़ा था, चेहरा गम्भीर था उसका मगर आँखों में प्रतिहिंसा की आग जल रही थी?

सम्पू सँभल कर बोला—'देखो न, चिड़िया पङ्ख फड़फड़ा रही थी, उड़ने की खातिर....कई जगह काट खाया हरामी ने।'

'चुप रह बदजात! आस्तीन का साँप निकला तू! केवल शहर के लोग ही नाग नहीं होते, गाँव वाले भी जहर उगलना जानते हैं।' चिकोरा का स्वर तेज था—'शक तो पहले ही था तेरी दोस्ती पर; तूने मेरी आँखों में धूल झोंक दी।' कहता हुआ

चिकोरा दो कदम आगे बढ़ा। हाथों की मुठ्ठियां बंध गई थीं।

'आगे मत बढ़ो चिकोरा! तुम मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकते— समझे?' डंसने के बाद भी सांप छाती फुलाये खड़ा था।

'सम्पू!' चिल्लाकर चिकोरा लपका उसकी तरफ।

होशियार सम्पू बगल हट गया तो चिकोरा जमीन पर गिर पड़ा मुंह के बल। सम्पू ने फुर्ती दिखलाई; पास ही पड़े पत्थर को उठाकर उसने चिकोरा के सर पर दे मारा। मारता रहा, जब तक उसे यकीन न हो गया कि वह मर गया। फिर रुका वहीं वहाँ। ऐसा भागा कि पीठ भी नहीं दिखाई पड़ी उसकी।

इधर बलात्कार और जुदाई की चोट खाकर चमकी बेहोश थी और उधर पत्थर की चोट से चिकोरा बेजान-सा पड़ा था।

छोटे से गांव में दुश्मनी का रिवाज-सा चल पड़ा था। सभी एक दूसरे को दबाकर खून पीना चाहते थे। एक दूसरे को अपने कदमों पर झुकाना चाहते थे। और गांव का उस्ताद टिकोरा?— उसे किसी की फिकर नहीं। मैना के सिवा दुनिया में सभी मर गये थे उसके लिए। जड़ ही कमजोर हो गई थी तो ऊपर के डाल-पात किसका हाथ पकड़ कर जिन्दा रहते।

जमीन पर पड़े चिकोरा को जब होश आया तो सर की पीड़ा से कराह उठा वह। बगल में चमकी पूर्ववत् पड़ी थी। उसे हिलाया-डुलाया उसने और नहीं उठी वह तो उपेक्षा से लात मार-कर उठ खड़ा हुआ। हाथ में सांप और कटार सँभाली और दांत पीसता चल पड़ा सम्पू की गर्दन काटने।

थोड़ी देर बाद जब चमकी की चमकहीन आंखें खुलीं तो आस-पास सन्नाटे के सिवा कुछ नहीं था। रात हो गई। गांव सो गया मगर चमकी की आँखों में नींद कहां? करवटें बदल-बदल कर किसी प्रकार रात गुजारी उसने। रोते-रोते थक गई किन्तु आँखों से पानी का बहाव रुका नहीं! अथाह सागर भी कहीं सूख सका है? शीतल की जान लेकर चिकोरा ने अपने दिल की आग बुझाई और शीतल को खोकर चमकी ने अपने कलेजे में

शोला भड़काया। दिन बीत चले। कुछ ही दिनों में लोग धिमाली और शीतल की बात भूल गये मगर चमकी की पलकों की कोरों पर वेदना के आँसू छलकते ही रहे। चमकी को हर बात याद रह गयी। किसी की याद भी कैसी भीषण सजा होती है।

चमकी जङ्गल के एक पेड़ की छाया में बैठी है, आँखों में निराशा की रोशनी और कलेजे में टूटा हुआ दिल लिए। इसी पेड़ की छाया में, छैला के गले में ब. हें डालकर उसने कभी एक नई दुनिया बसाई थी। यहीं पर उसकी मुहब्बत जवान हुई थी और आज अकेली बैठी है।

शाम हो गई। चमकी अभी तक वहीं बैठी है... उसी भयावने जङ्गल में। वह सजग हुई तब, जब पीछे से आकर किसी ने उसके कन्धे पर हाथ रखकर कहा—'चमकी घर चल!'

'मेरे छैला!' चीखकर चमकी ने कन्धे पर के हाथ को पकड़ लिया। पलट कर देखा उसने—सामने चिकोरा खड़ा था।

देखते ही उसकी खुशी ने उदासी का जामा पहन लिया!

'छैला!....उसे भूली नहीं तू!...अब नहीं आ सकता वह!'

घर कर जिन्दा चमकी की लाश, खोई-खोई चल पड़ी चिकोरा के पीछे-पीछे। चिकोरा घर आया और खा-पीकर सो गया। टिकोरा के बारे में सोचता हुआ...सम्पू के विषय में विचारता हुआ। दोनों साँपों को कुचलना है उसे। चमकी ने खाया नहीं, भूखी पड़ी रही। कुछ देर बाद एक काली छाया चिकोरा के घर से निकलती जान पड़ी। वह छाया बाहर थोड़ी देर तक खड़ी रही फिर उसके पाँव जंगल की ओर उठे। थोड़ी देर बाद छाया जंगल के दै.ाकार वृक्षों के साये में खो गई।

रोज-रोज अजीब घटनाओं की सृष्टि हो रही थी, इस पहाड़ी गाँव के दामन में। टिकोरा का मैना की लाश के साथ इश्क? शीतल का मरना...और आज इस छाया की पैदाइश।

पिछली रात की बात दिन की आँखें खुलते ही चारों तरफ धूप की तरह फैल गई। किसी ने उस छाया को देख लिया था

और सभी की जबान पर यही किस्सा मचल रहा था। विचित्र-विचित्र बातें होने लगीं। कोई कहने लगा मैना की रूह थी जो रात में भटकती है। लोग रात होने का इन्तजार करने लगे। सभी मैना की रूह को देखने के लिए उत्सुक हो उठे थे।

रात हुई और वह छाया फिर भटकने लगी गाँव की पगडण्डी पर। पर किसी ने यह नहीं देखा कि एक विचित्र बात और हो गई थी। कल की ही भाँति छाया चिकोरा के घर से निकली। मैना की रूह टिकोरा के घर से नहीं निकली थी।

जब सँपेरों ने देखा तो उनके दिलों में साँप रेंगने लगे। आँखों में मौत नाच उठी। सभी टिकोरा के पास पहुँचे। हाथ जोड़कर विनती की कि मैना को दफना दो नहीं तो गाँव में कोई जिन्दा नहीं बच सकेगा अब। मगर टिकोरा ने डाँटकर सभी को भगा दिया। बोला—'मैना तो मेरे पास है; अगर रूह देखा तुम लोगों ने तो अन्धे होकर, मुझे दिखाओ तो जानें।'

सँपेरे निरुत्तर और भयभीत हो अपने घर लौट आये।

दूसरे दिन सभी मैना की रूह टिकोरा को दिखाने के लिए तैयार हो गये। अगर उनकी बात गलत निकली तो खैरियत नहीं। टिकोरा को छेड़ तो आये लेकिन उसके गुस्से से सभी परिचित थे। मैना की रूह टिकोरा को दिखलानी ही पड़ेगी।

● ●

जागरण का सन्देश लेकर दूर से मुर्गे की आवाज आई। पिछली रात का अँधेरा अभी तक धुँधले आवरण में हिल-डुल रहा था। राजमहल के सामने दूसरे किनारे पर नौकरों के रहने के लिए क्वार्टर बने थे। वारिस रात भर पहरा देने के बाद कन्धे पर वजनी बन्दूक लादे अपने क्वार्टर की तरफ पहुँचा।

'गुलनार!...ओ गुलनार!' दूर से ही वारिस मुर्गे की तरह बाँग देने लगा। जानता है वह कि उसकी चांद-सी हसीन, गुलाब-सी मादक बीवी जब नींद की शराब पीकर मदहोश हो जाती है तो उसकी पलकों की मदहोशी आसानी से नहीं भागती।

कई बार वारिस चीखा।

'या रब! वारिस को बीवी भी मिली तो एक नम्बर की सुतक्कड़...' कहता हुआ वारिस अपने क्वार्टर के बरामदे में हाजिर था—'दरवाजा खोलो मेरी हूर! खैर भई, मत खोलो आँखों का फाटक....खुदा कसम—कुत्ते की तरह भौंकते-भौंकते जान हलक में आकर अटक गई है मेरी बुलबुल!'

कहता हुआ वारिस वहीं जमीन पर बैठने लगा। तभी दरवाजे के दोनों पल्ले झटके के साथ खुले और तब निकली एक मोहिनी प्रतिमा; उनींदी आँखें, बेखबर जवानी, आईने-सी चमकदार सूरत लिए। देखकर वारिस की जान में जान आई।

'जग गई हो मेरी हूर!...मैंने तो अन्दाजा लगा लिया था कि मेरी मलका नींद की दुनिया में ख्वाब की ब्लैकमार्केटिङ्ग करने में मशगूल...'

'हटो जी, सवेरे-सवेरे आये तो लगे मजाक ही उड़ाने...यह कुत्ता-कुत्ती क्या बक रहे थे?'

'खुदा खैर करे!...नींद में भी सुन लेती हो मेरी जान!... वह तो जनाब वारिस अली खाँ कुत्ते की तरह भूँक रहे थे... और उनकी मलका...' अन्दर आते हुए वारिस कह रहा था।

मगर बीच ही में बोल उठी गुलनार—'खुदा के नाम के पहले जबान गन्दी मत करो जी!' और अदा के साथ वह कमरे के भीतर आ गई।

'गुलनार!' वारिस ने हाथ बढ़ाकर गुलनार को अपने पास खींचा। पके आम-सी गुलनार वारिस की गोद में टपक पड़ी। वारिस के अरमान भरे दिल ने गुलनार को अपनी बांहों में भरजोर कस लिया और उसके बेचैन होठों ने उसके गुलाबी गालों पर अंगार-सा रख दिया।

जल उठी गुलनार, बोली—'खैरियत तो है मेरे सरताज!'

'बस, यही तो नहीं है मेरी जान! और सब कुछ है...'

'क्या मतलब!' आँखों में ताज्जुब भरकर बोली गुलनार।

'मतलब तो साफ है चुनमुन की अम्मी !...अरे हाँ, चुनमुन कहाँ है ?'

'छोड़ो भी उसे...वह तो सोया है अभी तक...तुम कहो ?'

'क्या कहूँ, कुछ समझ में नहीं आता !' वारिस कहने लगा—'यह राजमहल क्या है, शैतान भानमती की पिटारी बन गया है....रोज नया किस्सा....कल ही तो देखा तुमने, हमारे छोटे कुँवर पिस्तौल लेकर बहिश्त की तैयारी कर रहे थे...जिन्दगी क्या हुई फुटबाल हो गई....चाहे जब ठोकर मारकर दूर कर दो। यह तो अल्लाह की मरजी से ऐन वक्त पर एनी मेम पहुँच गईं और मौत के मुँह में जाने से रोक लिया, नहीं तो गजब हो गया होता। सभी रानी साहिबा के कलेजे पर लात मार रहे हैं। अगर यह बात बगावत जान ले तो क्या कहे ?...या खुदा, बूढ़ी रानी माँ की किस्मत कैसी लिख दी है तूने...' कहते-कहते वफादार वारिस की आवाज रो-सी पड़ी।

'यह तो बताओ, रानी साहिबा का गठिया कैसा है...ठीक तो है न ?'

'ठीक ही है...बूढ़ी जिन्दगी आफत है गुलनार ! अल्लाह करे किसी को न मिले यह।' बोला वारिस।

'रानी साहिबा की खिदमत में जा रही हूँ...जरा चुनमुन का ख्याल रखना...' और उठकर खड़ी हो गई गुलनार।

वारिस ने सोये चुनमुन पर निगाह डाली और बोला—'चुनमुन भी सुतक्कड़ निकला तुम्हारी ही तरह। ललित को देखो, उठ कर हवा खाने के लिए इन्तजार करता होगा मेरा।'

मगर गुलनार ने सुना नहीं...वह तब तक बाहर निकलकर रानी साहिबा के महल की तरफ कदम बढ़ा चुकी थी। अब रात का बाकी धुँधलका भी छँट गया था।

अजीब चुप्पी छितराई है आज राजमहल के चारों तरफ !...शायद रानी साहिबा की हालत आज नाजुक हो उठी है।

सभी लोग रानी साहिबा की बीमारी से परेशान हो उठे हैं।

अचल और कुँवरानी कविता भी। रात-रात भर दोनों जगकर सेवा में लगे रहते हैं! फेमिली डाक्टर दास भी हमेशा मौजूद रहते हैं। बूढ़ी जिन्दगी के दीए में दवाइयों का तेल डाल-डाल कर उसे हमेशा जलाना चाहते हैं, उसे रोशन देखने की हसरत लिए बैठे हैं।

'कैसी हालत है डाक्टर!' अचल का स्वर-बेचैन था।

'ठीक है, सो गई हैं।' बोले डाक्टर दास अपने चेहरे को ऊपर उठाते हुए। बूढ़ी आँखों में करुणा थी–'इन्हें सोने दीजिए, अभी ठीक हो जायँगी। घबराने की कोई जरूरत नहीं।'

'रात भर आप भी जग गये डाक्टर साहब! अब जाकर आराम कीजिये...जरूरत पड़ने पर वारिस बुला लायेगा...'

डाक्टर दास अपने घर जाने लगे तो बोले—'कोई बात हो तो तुरन्त इनफार्म कीजिएगा...'

डाक्टर के जाने के बाद अचल अकेला हो गया वहाँ।

रानी साहिबा सो रही थीं। बुढ़ापा कितना विवश होता है कि चैन की एक साँस लेना कठिन हो जाता है। जिन्दगी का यह आखिरी सफर कितना खौफनाक है। सोच-सोचकर कुँवर अचल नारायण की उद्विग्नता बढ़ती जा रही थी।

मायूस आँखों से एक टक माँ की तरफ देख रहा था वह। बन्द-सी पलकों के पीछे कितना प्यार और कितनी ममता छिपी है, वह जानता है और उसे तो रानी साहिबा चञ्चल से अधिक प्यार करती हैं। करें भी तो क्यों न? वह भी तो उनके पीछे परेशान रहता है हरदम। कई दिनों से रात-रात भर जाग रहा है, खाने की सुध नहीं, खबर है तो सिर्फ रानी साहिबा की बीमारी की, चिन्ता है तो केवल उनके जीवन की।

और चञ्चल? वह तो आ ही नहीं रहा था अपनी माँ को देखने। अपने कमरे में बन्द होकर पता नहीं क्या करता है हरदम? अचल के अन्तर में तूफान उठ खड़ा हुआ था। मस्तिष्क में काले अँधेरे के सिवा कुछ नहीं था।

आहिस्ते से कोई कमरे में आया और आकर कुँवर की बगल में खड़ा हो गया — चेहरे पर उसके भी उदासी छाई थी। रानी माँ की बीमारी से महल का जर्रा-जर्रा रो रहा था। हवा तक आँसू बहाते-बहाते गीली हो उठी थी।

'सरकार !' किसी ने धीमी और मधुर आवाज में पुकारा।

सुना नहीं अचल ने और उसने सुना नहीं तो उस व्यक्ति ने धीरे से अपने कोमल हाथों से हिलाया कुँवर को। स्पर्श से सजग हो उठा कुँवर। बोला—'कविता।' भीगी आँखें उसकी ओर उठीं—'ओह, तुम !....क्या है....कविता कहाँ है ?'

'कुँवरानी साहिबा महल की देख-रेख कर रही है हजूर !.... राजमिस्त्री ने मालिक को याद फरमाया है —'

सुनकर कुछ बोला नहीं कुँवर। उठ कर खड़ा हो गया जाने के लिए। जाते-जाते उसने कहा—'गुलनार ! माताजी का ध्यान रखना, मैं अभी आता हूँ।'

कहकर कुँवर धीरे-धीरे अपने महल की तरफ चल पड़ा।

आजकल उसके महल के सामने एक स्मारक तैयार हो रहा था, रानी साहिबा की आज्ञा से। उस जगह पर जहाँ टिकोरा के विकराल साँप ने उसे डँसा था। स्मारक उस नारी का था जिसने कुँवर को अपनी जिन्दगी बेजान बनाकर जीवन दिया था।

मैना को एक बार अपनी आँखों से देखने का ख्वाहिशमन्द हो गया था कुँवर। अनिमेष नेत्रों से देख रहा था कारीगरों की उस कला को और उनके छेनी-हथौड़ों को जो बदसूरत और बेढंगे पत्थर के टुकड़ों में चित्ताकर्षक सौन्दर्य भर रहे थे।

स्मारक को देखते-देखते ऊब गया अचल तो उठ खड़ा हुआ। वहाँ भी शान्ति नहीं मिली उसे। जहाँ जाता है वहाँ ही आँसू की नदी और दर्द का पहाड़ सामने आ जाता है।

माँ की बीमारी और मैना की याद से प्रताड़ित भारी मन लिए अचल आकर फौव्वारे पर बैठ गया। एकान्त पाकर उसका विषाद और भी बढ़ने लगा। मैना आँखों की रोशनी बन गई।

अतीत को पाकर वर्तमान की सुध खो बैठा कुँवर। मैना का अन्तिम स्वर उसके कानों में गूँज-सा उठा—'परदेसी ....तुमको ... मैंने ...अपनी ...जान ...दी है ...भूलना .... नहीं ...याद ...करते ... रहना ....मैं ....चली ....'

अव्यक्त स्वर जब उसके अन्तर में बोला तो विचलित हो उठा अचल। उठकर खड़ा हो गया। फूलों की क्यारियों में टहलने लगा। टहलते-टहलते चञ्चल के महल के पास चला आया। दरवाजे के पास ही था कि उसके पाँव ठिठक गये। अन्दर से किसी की बात-चीत बाहर आ रही थी। एक स्वर था मधुर; किसी नारी का और दूसरा था किसी पुरुष का, कुछ भारी। बाहर खड़ा होकर सुनने लगा कुँवर।

क्षण भर के लिए मैना की स्मृति खो बैठा।

'मुझे बार-बार आकर मत छेड़ा करो ....मैं दगाबाज हूँ .... तुम्हारा साथ नहीं दे सकता ....'

'तुम बहुत Angry है चञ्चल कुँवर !' स्वर था किसी नारी का—'हम तुमसे माँफी माँगता है ....'

'मगर तुम क्षमा क्यों माँगती हो एनी !....गलती तो मेरी ही थी। अगर तुम मुझे नहीं बचाती तो, कल मैंने आत्महत्या कर ली होती ....आज मुझे कोई नहीं देख पाता इस दुनिया में ...' इस बार छोटे कुँवर का स्वर पश्चाताप से भरा था—'मगर दुख तो इस बात का है एनी !....मेरे पास कुछ नहीं है तुम्हें ईनाम देने के लिए ....तुमने मेरी आँखें खोल दी हैं ....'

'तुम हमको ईनाम देगी ?' एनी का स्वर था।

'देता तो, पर कुछ नहीं है मेरे पास ...सिर्फ जान है मेरी-ले सको तो ले लो ....'

'थैंक्यू यू !' एनी बोली धीमे से।

आखिरी आवाज बाहर खड़े कुँवर के कानों तक नहीं पहुँच सकी। कुछ देर इन्तजार करने के बाद आयी भी तो चुम्बन की मादक ध्वनि। कुँवर हटने की सोचने लगा तभी—

'तुम जाओ। मुझे अपनी नजरों के आगे आने के लिए रोक लगा दी है माँ ने.... मैं जाऊँगा तो बिगड़ खड़ी होंगी....'

'नहीं बिगड़ेगा — तुम चलती क्यों नहीं...'

अचल ने जब सुना तो वहाँ से हट गया वह। एनी चञ्चल का हाथ पकड़े निकली और रानी साहिबा के महल की तरफ चल पड़ी। इधर रानी साहिबा घण्टे भर सोने के बाद उठ गई थीं। बदन की पीड़ा कम हो चली थी। बूढ़ा बदन हिलने-डुलने लायक हो गया था। कुँवरानी वहीं बैठी थी और धीरे-धीरे किसी तेल की मालिश कर रही थी उनके शरीर की गाँठों पर। तब तक एनी के साथ चञ्चल दरवाजे पर आ चुका था। वह दौड़कर माँ के चरणों के पास जा बैठा।

'माँ!' चञ्चल ने कहा।

'आ गया तू....अच्छा तो है न?' रानी साहिबा के प्यार भरे हाथों ने चञ्चल का सर सहलाया। प्यार की चोट खाकर चञ्चल रो पड़ा। रानी साहिबा ने इधर-उधर देखा—'अरे तू भी आई है!....खड़ी क्यों है एनी। वहाँ कुर्सी पर बैठ....'

'माताजी...' बाहर से किसी ने गम्भीर स्वर में पुकारा।

'अचल है क्या....आ इधर....बूढ़ी आँखें उतनी दूर से तेरी सूरत नहीं देख पातीं बेटा....'

अचल अन्दर आया... पीछे-पीछे डाक्टर दास भी आये। रानी माँ को अच्छा देख सभी खुश थे। अचल की तरफ एकटक निहारने लगीं रानी साहिबा, कुछ देर देखकर बोली—'तू उदास क्यों है अचल! कैसी हालत बना रखी है तूने?'

'मैं कहाँ उदास हूँ।' फीकी हँसी हँसकर कहा कुँवर ने।

'यह तेरे हाथ में क्या है? खत है क्या किसी का?'

'ओह! इसे तो भूल ही गया था... यह पत्र सेवहाँ से आया है....एक लठैत लेकर आया था... बड़े राजा ठाकुर ध्रुवसिंह का जन्मदिवस है...बुलाया है उन्होंने....'

सुनकर रानी साहिबा ने एक ठण्डी साँस ली।

बोलीं—'बड़े भले आदमी हैं राजा साहब !... तुम्हारे पिता से खूब पटती थी उनकी... जाना तो पड़ेगा ही तुम्हें... चञ्चल को भी साथ लिवाते जाना ! कब बुलाया है....'

'कल ही... मगर मैं तो नहीं जा सकूँगा माताजी ! चञ्चल जायगा... आप बीमार हैं, यहाँ मेरा रहना जरूरी है...'

'अच्छा भई, चञ्चल ही चला जायगा... सैदहाँ जङ्गली इलाका है, कहीं फिर तुम अजगर-साँप के चक्कर में न आ जाओ। बड़ा असावधान है यह कुँवर मेरा...' कहकर हँस पड़ीं रानी साहिबा। आगे फिर नहीं बोलीं वे। कुछ थकान की अनुभूति के कारण।

● ●

टिकोरा मैना को नहीं भूल सका है तो परदेसी को भी कहाँ भूल पाया है। परदेसी ने उसे बरबाद कर दिया। अगर मैना जीवित नहीं हो सकती तो परदेसी को भी जीवित नहीं रहने देगा टिकोरा। चारों ओर रात्रि नीरवता बिखेर रही है। ऐसे ही समय में टिकोरा मैना की लाश लेकर निकल पड़ा है।

खण्डहर की तरफ बढ़ता जा रहा है। चारों तरफ सन्नाटा है। मगर टिकोरा तो है अपनी धुन में मस्त। गले में लिपटा मणिधर मुँह बा-बा कर ठण्डी-ठण्डी हवा के झोंकों को पी रहा है। टिकोरा के पीछे-पीछे एक काली छाया भी जा रही है मगर उसको इसकी खबर नहीं। खण्डहर के नजदीक आकर टिकोरा एक चट्टान पर बैठ गया। पीछा करनेवाली छाया एक दरख्त की आड़ में हो गई। थोड़ी देर बैठने के बाद टिकोरा खण्डहर में घुस गया मैना को लेकर। दूर छिपी छाया ने उसे खण्डहर में जाते देखा तो वापस लौट गई। खण्डहर में जाकर टिकोरा ने साँप की मणि से रोशनी की। चारों तरफ हरी-मद्धिम रोशनी की चादर-सी फैल गई। टिकोरा ने सर उठाया तो हलकी रोशनी में उसका-उदास चेहरा झलक उठा। कुछ ही दिनों में बरगद-सी देह सूखकर बाँस हो गई थी।

यह वही गुफा है, जिसमें से मैना और परदेसी शहर गये थे। यह वही जगह है जहाँ मैना ने टिकोरा की पीठ में छुरा भोंका था और परदेसी ने उसके सर पर पत्थर की चोट की थी।

पुरानी बातें टिकोरा की आंखों के सामने घूम रही थीं। थोड़ी देर तक विगत की स्मृति में खो-सा गया वह—मैना का परदेसी के साथ भागना, पीठ में जख्म लेकर उनकी खोज में उसका शहर जाना, मैना को पकड़ना आदि बातें सब याद आ रही थीं उसे। परदेसी से हार कर लौट पड़ा टिकोरा....मामूली शहर के जवान से हार गया वह, मगर उसने अपनी हार कबूल नहीं की। 'मैं हारा नहीं...' सोचते-सोचते सहसा चीख पड़ा विक्षिप्त टिकोरा।

आवेश में भरा टिकोरा उठकर खड़ा हो गया और लपका उधर जिधर से एक बार शहर जा चुका था। वह परदेसी का गला घोंट देगा। अब बच नहीं सकता परदेसी! उत्तेजित, क्रोधित और पागल पहाड़ी-सा दीर्घाकार सँपेरा जब दौड़ता हुआ खण्डहर के दरवाजे के पास पहुँचा तो किसी की चीख से गूँज उठा वहाँ का वातावरण। चीख उसी के गले की थी।

● ●

रात की जवानी ढल चुकी थी। टिकोरा के घर के सामने की चट्टान पर सोया था सम्पू। किसी जङ्गली जानवर की आवाज से उसकी नींद खुल गई। उनींदी आँखों से इधर-उधर देखने लगा। आस-पास उसे कोई जानवर दिखाई नहीं पड़ा। उसकी नजरें जब पगडण्डी की ओर गईं तो चौंक पड़ा। एक काली छाया थी। पगडण्डी की छाती कुचलती हुई चली जा रही थी जङ्गल की तरफ। उसकी चाल में गजब की तेजी थी। थोड़ी देर तक देखता रहा सम्पू फिर लेट गया। उसे इससे क्या मतलब? लेटते ही उसे कोई बात याद आ गई तो उठकर खड़ा हो गया। टिकोरा के घर के आगे आकर बोला—'उस्ताद!...सो गये?' वह दौड़कर अन्दर गया, वहाँ कोई नहीं था, उल्टे पाँव

वापस लौट आया। बुदबुदाया—'तो अभी तक नहीं आये उस्ताद!'

सुबह ही वह टिकोरा की खोज में खण्डहर की ओर चल पड़ा। अन्दर घुसकर उसने देखा....मैना जमीन पर पड़ी थी, पास ही विकराल साँप अपनी मणि के चारों तरफ घेरा डाले बैठा था। लेकिन टिकोरा ?...वह वहाँ नहीं था।

'उस्ताद !' सम्पू ने घबड़ाये स्वर में पुकारा।

उत्तर नहीं मिला तो उसका कलेजा धड़क उठा। व्यग्र हो वह देखने लगा इधर-उधर। कुछ दूर पड़ी एक चीज पर नजर गयी तो एकदम पीछे हट गया वह। मुँह से चीख निकलते-निकलते बची। सहसा उसे अपनी आँखों पर यकीन नहीं हुआ।

साहस करके वह उस डरावनी चीज के नजदीक गया।

बोला कम्पित और भयभीत स्वर में—'उस्ताद !'

टिकोरा ही था वह। गिरा था जमीन पर। आस-पास की जमीन लहू-लुहान थी। सर से खून बहकर उसके भयानक चेहरे पर जम गया था। सम्पू डगमगाते पैरों से टिकोरा के बिलकुल पास गया। काँपते हाथों से उसे स्पर्श किया। उसके बदन को हिलाया-डुलाया भी पर निश्चल रहा टिकोरा। सम्पू ने बेचैनी से जख्मी टिकोरा की छाती पर हाथ रखा तो खुशी से चीख उठा। अभी धड़कन बाकी थी। दौड़कर वह बाहर से पानी ले आया। पानी के छींटे से टिकोरा के मुँह को तर किया उसने।

बेहोश टिकोरा काँपा। उसके मुँह से एक आह निकली।

'उस्ताद ! आँखें खोलो उस्ताद !'

टिकोरा ने आँखें तो खोल दी मगर बोला नहीं कुछ।

पलकें खुलीं तो भीतर से लाल, क्रोध भरी आँखें इधर-उधर देखने लगीं। पास बैठे सम्पू को घूर कर देखने लगा वह।

'परदेसी !' चीख पड़ा टिकोरा। तेजी से उठकर उसने सम्पू का गला पकड़ लिया—'तुमने सोचा था पत्थर मारने से टिकोरा मर जायगा...जरा-सी चोट टिकोरा की जिन्दगी नहीं छीन सकती...हा-हा-हा !' सम्पू का गला कसता जा रहा था टिकोरा।

उसने उसे परदेसी समझ लिया था।

'उस्ताद !... मैं... मैं.... सम्पू हूं उस्ताद !.... छोड़ो...' कहते हुए सम्पू ने गला छुड़ाने की कोशिश की !

'तू भाग नहीं सकता शैतान... तेरा खून पीऊंगा मैं !'

'उस्ताद !— उस्ताद !...यह तो तुम्हारा सम्पू है— मैं...' जोरों से चीख पड़ा सम्पू।

आवाज पहचानी टिकोरा ने तो उसके हाथ का बन्धन ढीला हो गया—'तुम हो...भाग गया परदेसी; सम्पू ! भाग नहीं सकता वह शहरी साँप !— मैं टिकोरा हूं....उसे जिन्दा नहीं छोड़ सकता मैं— ला मेरा साँप—' इतने जोरों से बोला टिकोरा कि खण्डहर की गिरती दीवारों का कलेजा काँप उठा।

सम्पू ने काल-सा विकराल साँप लाकर उसके हाथों में दे दिया। टिकोरा ने साँप को जमीन पर रख दिया।

'यह शहर जायगा सम्पू !....परदेसी को खोजकर डँसेगा... फिर वापस लौट आयगा—हा-हा-हा !' अट्टहास करके टिकोरा मन्तर पढ़ने लगा। मगर यह क्या ?—मन्त्र की चोट खाकर भी साँप हिला तक नहीं, और दिन तो तूफान बन जाता था। साँप को निश्चल देखकर टिकोरा का क्रोध भभक उठा। सम्पू भी चकित आँखों से तमाशा देख रहा था। टिकोरा ने अपना माथा पकड़ लिया। क्या हो गया है उसे ? मन्त्र सोचने लगा तो दिमाग में अँधेरा और तूफान के सिवा कुछ नहीं दिखाई पड़ा उसे।

'उस्ताद ! क्या हो गया है तुम्हें ?' ताज्जुब से बोला वह।

'पागल हो गया मैं सम्पू ! मैं पागल हो गया हूं। टिकोरा को मैन: ने खा लिया फिर भी परदेसी का बच्चा बच नहीं सकता मेरे हाथों से।' उत्तेजित टिकोरा उठकर खड़ा हो गया।

'उस्ताद ! चलो घर चलें।'

'मैं यहाँ से नहीं जा सकता सम्पू....यहाँ राहत मिलती है मेरे दिल को। जानते हो—इसी खण्डहर में मेरा जीवन बरबाद हुआ, यहीं पर मैना ने मेरी पीठ में छुरा भोंका; यहीं पर मैं

पागल हुआ। मैं नहीं जा सकता यहाँ से... यहीं पर मर जाऊँगा मैं। चले जाओ...' चीख पड़ा टिकोरा पागलों की तरह—'तुम जाओ! अगर तुमने मुझे उस्ताद माना है तो मेरा हुक्म सुनो... मेरा नाम लेकर शहरी परदेसी का गला काट लेना ... मेरी रूह को शान्ति मिल जायगी...' कहते-कहते जमीन पर सर पटकने लगा वह। बड़ी मुश्किल से सम्पू ने टिकोरा को काबू में किया। पानी लाकर पिलाया। शीतल जल अन्दर पहुँचा तो टिकोरा की चेतना लौटी। उसने पूछा —'तू यहाँ कैसे आया सम्पू!'

'तुम्हें चोट कैसे लगी उस्ताद!' सम्पू ने पूछा।

'मुझे मालूम नहीं।'

सम्पू बाहर गया और किसी पत्ती का रस लाकर उसने जख्म पर लगा दिया। कुछ आराम मिला टिकोरा को।

'तुम जाओ सम्पू!... मुझे अकेला छोड़ दो...'

सम्पू चला गया।

● ●

पीपल के पेड़ के नीचे सभी सँपेरे एकत्रित हैं। मशालें जल रही हैं। सभी के मुख पर भय की छाया, रात की कालिमा की तरह छा गई है। सामने ही पीपल के वृक्ष के नीचे, चबूतरे पर बेढंगे पत्थर की मूरत रखी है जो सँपेरों के देवता नाग भगवान की है। सभी के हाथ में तुम्बी है। बजा-बजाकर भगवान को रिझा रहे हैं सँपेरे, गाँव से मैना की रूह भागने के लिए।

चिकोरा भी मौजूद है मगर अकेला, चमकी नहीं है उसके साथ। तभी किसी सँपेरे की नजर दूर हिलती-डुलती छाया पर पड़ी। उसके इशारे पर महुवर की आवाज बन्द हो गई। उसी छाया की तरफ देखने लगे सभी। कमजोर दिलवालों का कलेजा धक्-धक् करने लगा।

'मैना की रूह आ गई... टिकोरा भी देख ले अपनी आँखों से अब...' किसी ने चिकोरा के कानों में फुसफुसा कर कहा।

'आज तो देखना ही पड़ेगा... नहीं देखेगा तो जायगा

कहाँ ?... छबीले जाकर तू कह दे टिकोरा से—आकर देख ले अपनी मौत को...' चिकोरा ने एक सँपेरे से कहा।

और उसका हुक्म नहीं टाल सका वह सँपेरा...आजकल गाँव में चिकोरा का रङ्ग था। सभी उसके इशारे पर चलते थे। आज चिकोरा तैयारी करके आया है. या तो खुद रहेगा गाँव में या टिकोरा ही रहेगा। छाया धीरे-धीरे जङ्गल की झाड़ियों की तरफ भागी जा रही थी और सभी सँपेरों के साथ चिकोरा छबीले का इन्तजार कर रहा था बेचैन-सा।

तभी दौड़ा-दौड़ा छबीले आया। हक्का-बक्का था वह। बदहवास होकर बोला—'टिकोरा घर में नहीं है।'

सुनकर अचम्भे में पड़ गया चिकोरा—'क्या कहते हो तुम?'

'मैं ठीक कहता हूँ!'

'और वह सम्पू?...' उठकर चिकोरा खड़ा हो गया।

'वह भी नहीं....'

दोनों के एकाएक ग़ायब हो जाने से सँपेरे चकित हो उठे। उधर मैना की रूह जङ्गल की तरफ बढ़ती ही जा रही थी।

'डर के मारे छिप गया, आओ इस रूह से निपटा जाय।'

गाँव वाले रोकने लगे चिकोरा को।

बोले—'अपनी जान जोखिम में मत डालो भाई!'

मगर चिकोरा ने किसी की नहीं सुनी। उसके पीछे गाँव के हिम्मती सँपेरे दौड़े। चिकोरा छाया से दस कदम पीछे चल रहा था। तेजी से छाया एक झाड़ी में घुस गई। चिकोरा के पाँव थम गये। अब क्या करे वह? उसने हाथ के साँप की ओर देखा।

जमीन पर से चुटकी भर धूल उठाई उसने और उस पर एक फूंक मारी। हाथ का साँप फों कर उठा। मन्त्र से बँधे साँप को झाड़ी में फेंक दिया उसने। गाँव के सँपेरे चुपचाप उसकी लीला देख रहे थे। वे सोच रहे थे—भला रूह का साँप क्या बिगाड़ सकता है? चिकोरा के होंठ बुदबुदा रहे थे। लगातार साँप पर मन्तर फेंककर उसे उत्तेजित कर रहा था वह। तभी—किसी के

गले की चीख से नीरव रात्रि और सुनसान जङ्गल की शान्ति जाग पड़ी। आवाज किसी नारी के गले की थी।

'वह मारा !' खुशी से उछल पड़ा चिकोरा—'आओ टिकोरा की खबर लें। बदजात ! घर के किसी कोने में छिपा होगा...'

मैना की रूह को मिटाने के बाद सँपेरों का सारा भय भाग गया था। नई ताकत आ गई थी उनमें। आवेग और जोश में भरे सभी टिकोरा के घर के आगे उमड़ पड़े थे। चिकोरा और उसके साथियों ने छोटे से घर का जर्रा-जर्रा छान डाला मगर पता नहीं लगा टिकोरा का। लोगों ने उसके घर में आग लगा दी। उधर अपने घर से बेखबर टिकोरा खण्डहर में सम्पू के साथ मैना की लाश देख रहा था।

टिकोरा ने मैना की लाश को दीवार से लगाकर खड़ा कर दिया था। आज मैना को सजाया था उसने ! मैना का बेजान शरीर जङ्गली फूलों से ढंका था।

बोल रहा था टिकोरा—'मैना रानी ! आज तुम मेरे पास हो—तुम्हारा परदेसी बहुत दूर है यहाँ से....कहा था न मैंने—इन्सान जब ताकत से नहीं जीत सकता तो पीछे से वार करता है....धोखा देता है; दगाबाजी पर उतर चलता है....और आज टिकोरा दुनिया से ऊपर है....तुमने खूब सताया मुझे। आँखों की पुतलियाँ राह देखते-देखते थक गई...'

पैशाचिक अट्टहास कर उठा टिकोरा—'देखो यह साँप.... उस्ताद का उड़ने वाला साँप भी मेरे पास है, तुमने कहा था—एक दिन तुम्हीं को काटेगा यह कि साँस भी नहीं ले पाओगे तुम....आज तो यह भी मेरे हुक्म के बगैर फन नहीं फैला सकता—समझी ? आज टिकोरा तुम्हारे साथ खेलेगा...मैं अपनी हसरत पूरी करूँगा। कोई बचा नहीं सकता तुम्हें...'कहता हुआ टिकोरा मैना को अपनी बाँहों में कसने के लिए लपका।

सम्पू वासना की आग में जलते उस्ताद को देख रहा था। एका-एक टिकोरा को मैना की तरफ लपकते देखा उसने; तो

चीख पड़ा । आज क्या करने जा रहा है उसका उस्ताद । बीच ही में उस्ताद फेरई का भयानक साँप फन फैलाये टिकोरा की ओर देख रहा था । मैना की सूरत से प्यास बुझाते-बुझाते उसे 'भूख' लग गई थी । मैना के नजदीक पहुँचा भी नहीं था टिकोरा की आर्तनाद कर उठा वह । जमीन पर लड़खड़ा कर गिर पड़ा भयानक सँपेरा । मणिधर के फन पर पैर पड़ गया था उसका और क्रोध में आकर विकराल साँप ने डँस लिया था उसे ।

टिकोरा फौरन उठ खड़ा हुआ । तब तक सम्पू ने भी साँप को मन्तर से बाँध लिया ।

'अभी नहीं मर सकता मैं....मैना रानी ! काट तो लिया साँप ने मगर टिकोरा की ताकत इतनी कम नहीं कि इस साँप के डँसने से छन भर में मिट्टी बन जाऊँ ..जहरीले साँप से अधिक जहर है मेरे भीतर....आओ चलो....तुम्हारे परदेसी को तुम्हारी आँखों के सामने यह साँप काटेगा—उसे छोड़ नहीं सकता...' टिकोरा ने तेजी से मैना को अपनी थरथराती भुजाओं में कस लिया फिर लड़खड़ाते पैरों से खोह से भयानक अंधेरे की तरफ दौड़ पड़ा फुफकारते हुए ।

टिकोरा को भागते देखा सम्पू ने तो चीखा—'उस्ताद !'

कोई अट्टहास कर उठा उसके पीछे । पलटकर सम्पू ने देखा तो सन्न रह गया—चिकोरा के साथ कितने ही सँपेरे दरार की राह मशाल लिए घुस पड़े थे ।

'यहाँ हो तुम लोग....भागने की कोशिश मत करो सम्पू ?' दो पग आगे बढ़ा चिकोरा—'तुम्हारा उस्ताद गया, हा-हा-हा... पत्थर की चोट भूला नहीं दगाबाज !'

कहते-कहते चिकोरा की नजरें दूर पर रेंगती किसी चीज पर पड़ी तो दौड़कर उठा लिया उसने उसे । बोला—'साँप अपना यहीं छोड़ छोड़ गया करैत ?...चुप क्यों खड़ा है तू !' चिकोरा का स्वर क्रूर हो उठा था । परदेसी को मारने की जल्दी में साँप भी भूल गया था टिकोरा ।

'चिकोरा !' भयभीत सम्पू गिड़गिड़ा उठा—'मुझे माफ करो भाई ! मैं बहक गया था।'

'हा-हा-हा....तो जा उसी के पास....जिसने तुझे बहकाया।' कहकर चिकोरा ने मणिधर को उस ...र पर फेंक दिया।

क्रोधित साँप सम्पू के गले में लिपट गया और....और उसने जहरीले दाँतों को उसकी छाती में गड़ा दिया। दूसरे ही क्षण सम्पू जमीन पर पड़ा था। चिकोरा अपनी विजय पर खिलखिला उठा। आज उसके रास्ते के सभी काँटे हट गये थे अपने आप। बाहर निकला वह तो हुक्म दिया उसने—'इस दरार में पत्थर भर दो ताकि शैतानों की रूह गाँव में न आ सके....'

संपेरों ने ढकेल कर एक भारी चट्टान को दरार में गिरा दिया। रास्ता बन्द हो गया। सभी ने शान्ति की साँस ली।

'आओ जरा मैना की रूह को झाड़ी में देखें, कैसी है...' चिकोरा ने कहा तो उसके पीछे सभी चल पड़े।

मशाल की रोशनी से पूरा जङ्गल दिन-सा प्रकाशित हो उठा था। जब संपेरों का गिरोह झाड़ी के पास पहुँचा तो चिकोरा ने सभी को बाहर ही रोक दिया। खुद झाड़ी में घुस पड़ा, हाथ में मशाल लिए। मैना की रूह पर जब नजर पड़ी तो उसके ऊपर आसमान फट पड़ा—'चमकी !' चीख पड़ा वह। वह चमकी ही थी। छैला की याद ने उसे इतना पागल कर दिया था कि बावरी हो नींद में भी उठकर अपने छैला को खोज रही थी। चिकोरा करुण नेत्रों से चमकी के चेहरे पर छाई खामोशी को देख रहा था। उसने धीरे-धीरे चमकी को उठाया। इस वक्त गम्भीर था वह। उसे उठाकर घने जंगल की ओर चला।

'चिकोरा !' कुछ संपेरे रोकने लगे उसे।

'चिकोरा टिकोरा नहीं, जो चमकी की लाश को कलेजे से लगाकर बेकरारी मोल ले....जाओ तुम लोग... मैं इसे नदी में फेंक कर आता हूँ अभी...' लुटा संपेरा आगे नहीं बोल सका। उसके दिल का दर्द उभर आया मगर था मगर वह चुप ही था।

उसके पाँव धीरे-धीरे चल पड़े नदी की तरफ !

• •

खंडहर से लड़खड़ाता टिकोरा नदी के किनारे निकला। उसके ऊपर विकराल साँप का जहर धीरे-धीरे चढ़ता जा रहा था, मगर कसमसाती जिन्दगी को सँभाले था वह; सिर्फ परदेसी के खून से अपनी प्यास बुझाने की खातिर। मैना उसके कन्धे पर थी। मौत के थपेड़ों को सहता, लड़खड़ाता, जिन्दगी की एक-एक साँस सँभाले बढ़ता जा रहा था टिकोरा। मणिधर का दाहक विष धीरे-धीरे घुल रहा है उसकी छोटी पहाड़ी-सी दीर्घाकार काया में। मरने से पहले वह परदेसी से बदला लेना चाहता है। अगर उसके नाम जिन्दगी नहीं लिखी है तो परदेसी को जिन्दा भला क्यों रहने देगा वह।

'मैना!' उसने टूटती आवाज में पुकारा।

मगर मैना उसके कन्धे से उड़ गई थी। खण्डहर से तो मैना को लेकर चला था वह। कहाँ गई मैना?

टिकोरा परदेसी के घर के बिलकुल पास पहुँच गया है। ज्यों-ज्यों वह अपने बैरी परदेसी के पास पहुँचता जा रहा है; त्यों-त्यों उसके अन्तर की आग लपटें उगलती जा रही है। उसकी भवें तनती जा रही हैं, पाँव बढ़ते जा रहे हैं। लाल-लाल खूनी आँखें परदेसी को खोज रही हैं।

आज नहीं बच सकता मैना का परदेसी! उसे क्या पता है कि थोड़ी देर बाद दुनिया से उसका जनाजा उठ जायगा। वह तो बीमारी की हालत में विक्षिप्त पड़ा है बिस्तर पर। कविता उसके पास है। अचल की विचित्र बीमारी से सभी घबड़ा उठे हैं। डाक्टर दास रोज इन्जेक्शन देकर उसके शरीर को छलनी बनाये दे रहे हैं। फायदे का कोई चिह्न कुँवर के चेहरे पर प्रकट नहीं हो रहा है। रानी माँ कुछ ही स्वस्थ हो पाई हैं। एक तो बूढ़ा शरीर और साथ में गठिया का दर्द—उस पर बेटे की बीमारी की चिन्ता। माता का ममतामय हृदय चोट पर चोट खाकर भी

चुप है और आज तो ठिकोरा कुँवर अचल नारायण के आखिरी दिन का परवाना लेकर आ रहा है ।

कुछ देर जिन्दगी की साँस ले फिर तो....

● ●

पहाड़ी प्रदेश के आँचल में बसा हुआ महुवारी ग्राम जाग उठा है । सूरज की किरणें छोटे-से खुशनुमा गाँव के चप्पे-चप्पे में फैल गयी हैं । घास-फूस से सँवारा महुवारी बड़ा ही मनोहारी है । गाँव के आखिरी छोर पर पश्चिम की ओर एक शिवाला है। शिवाले की बगल में ईंट और पत्थरों के जोड़ पर खड़ा है महल-नुमा एक मकान; जिसे लोग हवेली कहकर सम्बोधित करते हैं। हवेली में रहता है ठाकुर सजीवन सिंह का बेटा सजल नारायण। वही गाँव का राजा है । गाँव वालों की निगाह में अपने राजा के प्रति अत्यधिक आदर और भाव है ।

सजल ! तीस-पैंतीस का जवान ! रोबीला चेहरा, चुस्त और सुडौल अङ्गों में अजीब आकर्षण । उसकी आँखों का संकेत ही यहाँ का कानून है । अपने स्वर्गीय पिता की भाँति ही शिकार का शौकीन ! पत्नी बेचारी तो तभी मुख मोड़ कर चली गई, जब उसके हाथों की मेंहदी भी नहीं छूटी थी । दूसरी शादी करने का शौक नहीं हुआ । छोटा भाई था वह भी जङ्गल में खो गया। बची है सिर्फ छोटी बहन रचना ।

सुबह हो गई है । हवेली का पुराने ढङ्ग का सिंह दरवाजा खुल गया है । अपने राजा का जुहार करने सभी टूट पड़े हैं । रात के पहरे के लठैत आँखों में जगमगाती नींद लिए अपने-अपने घर चले गये तो उनके स्थान पर दूसरे तैनात हो गए हैं ।

रात में शान्त रहने वाला गाँव दिन के उजाले में गतिमान हो उठा है । छोटे और क्या बड़े; सुबह किसी का मुँह देखने के पहले आँखें मलते हुए शिव जी का दर्शन करने मन्दिर में इस तरह टूट पड़े हैं, जैसे लोग किसी अपरिचित और अनोखी चीज को पहली बार देखने के लिए उमड़ पड़ते हैं ।

शिवलिङ्ग के पास ही मन्दिर के पुजारी महोदय नेत्र बन्द किये दाहिने हाथ से घण्टा निनादित करते हुए 'बम-बम-भोले' कर रहे हैं। श्रद्धानवत ग्रामीण अवघड़दानी के चबूतरे पर माथा टेक कर भगवान के चरणों में स्वयं को अर्पित कर रहे हैं।

हर तरह से खुशहाल है ठाकुर सजल नारायण का महुवारी ग्राम। अपने सरल एवं प्रभावशाली व्यक्तित्व का दर्शन देकर सजल अपने खास कमरे में चला गया है। दोनों हाथों की पीठ की ओर बांधे दीवार पर टँगे शेर, चीता, रीछ, अजगर तथा अन्य जङ्गली जानवरों के चमड़े को निहार रहा है। सामने साफ-सुथरी गद्दी लगी है, दो मसनद दीवार से उठँगे हैं। कोने में खड़ी हैं दो बन्दूकें। सजल ने एक बन्दूक उठा ली और उसकी सफाई करने लगा। नली में आँखें डालकर देख ही रहा था कि किसी ने आकर पुकारा—'भैया....!'

'क्या है?' सजल ने पूछा। आँखें बन्दूक की नली से हटकर आवाज की ओर उठीं, देखा—सामने थी रचना! कोयल-सी वाणी और गुलाब-सी देह लिए।

'बोल नऽ...कहना क्या चाहती है तू...!' स्नेहमय स्वर था।

'कहा मानोगे तुम! जाने दो भैया...तुमसे कहना न कहना दोनों बराबर....पानी पर लकीर खींचने से लाभ ही क्या?' कहती वह भीतर चली गई।

'रचना!...सुन तो!' कहता हुआ सजल भी उठ खड़ा हुआ।

सजल की पुकार रचना को रोक नहीं सकी। स्वयं उठकर उसके समीप जाना पड़ा। वह खम्भे के सहारे खड़ी थी। उसने गौर से देखा, रचना का सौम्य मुख-मण्डल उदास था।

'नाराज हो गई रचना!'

'नाराज नहीं हूँ भैया!...रूठ गयी हूँ। अब मनाओ मुझे!...' कहते-कहते रुक गई वह।

'हँसी की बात भी कितनी उदासी भरी होती है तेरी...!' व्यथित होकर कहा सजल ने—'पता नहीं तीन-चार महीनों से

क्या हो गया है तुझे !...'

'मुझे कुछ नहीं हुआ है भैया !....कुछ हो गया है तुम्हारी नजरों को ही....' होठों पर फीकी हँसी लाकर बोली रचना।

'अपनी फिलासफी अपने पास रख। शहर में पढ़ क्या आयी बहस करने की लत लग गई। अच्छा अब मतलब की बात कर... क्या कह रही थी तू ! मुझे बहुत काम करना है।'

'मतलब की बात तुम्हीं करते हो....मैं तो नहीं करती—तुम बड़े मतलबी हो भैया ?'

'अरी रचना !...क्या बकझक लगा रखी है तूने...एँ !... क्यों दिक कर रही है अपने भैया को,...हाय राम-हाय सीता ! यह लड़की तो न अपने चुप रहेगी न दूसरे को दम लेने देगी... तू खड़ा क्यों है बेटा !...बैठ नऽ !'

'मैं कोई बूढ़ा थोड़े ही हूँ दादी कि कमर दुखने लगे, मुझे वसूली के लिए पहाड़पुर जाना है...' कहकर जाने लगा सजल।

'सुन सजल !' परोसन ने आदेश एवं प्यार से कहा—'मत जा तू वसूली के लिए, मुन्शी कारिन्दे क्या मर गये हैं सब...'

'अभी तो जी रहे हैं सभी...' हँस कर कहा सजल ने।

'जी रहे हैं तो वही जायेंगे। खिला-पिलाकर हाथी बनायेगा क्या ?...हाय राम हाय-सीता ! लड़के की अकल मारी गई।'

'गलती करने वाले के लिए मेरे पास कोई क्षमा नहीं दादी... एक-एक को गोली मार दूँगा ?' कहता हुआ तेजी से बाहर चला गया सजल।

'तुम्हारी नहीं सुनेंगे दादी ! भैया अपने मन के हैं...आह !' रचना के गले से कराह निकली।

'क्या हुआ रे !' आह सुनकर चौंक पड़ी परोसन।

'पेट में दर्द उठा है दादी !...आओ घर के भीतर....' दोनों हाथ से पेट दाबे रचना पलंग पर आकर बैठ गई !

'हाय राम...कौन-सा रोग पाल लिया तूने !...जब से शहर से आई है...कभी चैन से नहीं रहती—कभी सर दर्द तो कभी

पेट दर्द...' बोली परोसन।

रचना की पीड़ा बढ़ती जा रही थी। रेत पर पड़ी मछली की तरह छटपटा रही थी। करवटें बदल कर आराम हासिल करना चाहती थी, किन्तु पेट का दर्द था कि कम होने का नाम नहीं ले रहा था। रचना की परेशानी देखकर परोसन दादी को कुछ सूझ ही नहीं रहा था। चेहरे पर 'हाय राम-हाय सीता' का भाव उग-मिट रहा था। थोड़ी देर बाद स्वस्थ हुई रचना।

'दादी !...जरा पानी पिला दो !'

दौड़कर गिलास में पानी ले आयी परोसन दादी। रचना ने ठण्डे जल का पान किया। पानी पीते ही मिचली आने लगी। ओक्-ओक् करती पनारे पर जा बैठी। उसके इस रोग का क्रम महीनों से जारी था। अपनी इस विचित्र बीमारी को रचना हमेशा तरह देती आई है। रचना के लिए यह बात महत्व भले ही न रखती हो किन्तु ममतामयी परोसन को तो एक चिन्ता ने आ जकड़ा। पहली बार तो देखा था परोसन दादी ने पेट दर्द। सर दर्द तो जानती थी वह लेकिन कै की बात तो बिल्कुल नई थी उसके लिए।

इतने दिन से रचना सभी से अपना रोग छिपाती जा रही है। यहाँ तक की सजल को भी अब तक नहीं बताया है उसने।

थोड़ी देर हँसने-बोलने के बाद रचना के पेट में पीड़ा पुनः होने लगी। परोसन रचना की बेचैनी इस बार चुपचाप देखती नहीं रही। उसके बूढ़े हाथ-रचना के पेट को भी सहलाने के लिए दौड़ पड़े ! रचना की पड़ोसिन दादी, जो हमेशा सजल और रचना पर अपनी ममता लुटाने के लिए उद्यत रहती है; जिसने माँ के मर जाने पर रचना को अपनी बूढ़ी पलकों की सेज पर सुलाया था...जिसने दुःख-सुख के पीछे आराम की जिन्दगी की साँस को दम नहीं लेने दिया। जिसने प्यार भरे तमाचे की चोट से तराश कर रचना जैसी प्रतिमा का निर्माण किया; वही परोसन दादी ! चौंक पड़ी, उसकी आँखें आश्चर्य से फैल गयीं।

उसने रचना के पेट पर से अपना हाथ हटा लिया। रचना छटपटाती रही। उसने रचना का पेट उघार दिया। बूढ़ी आंखों की तितर-बितर रोशनी बटोर कर ध्यान से उसके पेट को निहारने लगी। कुछ देर तक निहारती रही। यह क्या देख रही है परोसन ! रचना का पेट फूला क्यों है ? क्या है रचना के पेट में.... विचित्र-विचित्र शङ्काएँ परोसन के मन में सांप की तरह फन उठा कर फुँफकारने लगीं। परोसन का बूढ़ा दिल धड़क उठा। रचना तो ऐसी नहीं थी। जरूर यह पाप शहर का है और गांव की स्वच्छ हवा, शीतल जल, पान करके विशाल हो रहा है। जब रचना को पढ़ने भेजा जा रहा था तभी परोसन ने अपत्ति की थी। उसने शहर की गन्दगी के बारे में अपने पति से सुना था और उसका सर भन्ना उठा था।

शुरु से ही शहर की विरोधी रही है परोसन ! इस परिवार के दो दीपकों की रोशनी बुझा दिया शहर की विषैली हवा ने। छोटे ठाकुर साहब का अनुज शहर की कोठी में ही बिगड़ कर घाटी हो गया था। रामगढ़ जङ्गल में शिकार खेलने गया तो फिर वापस नहीं लौटा। रचना शहर की दूषित हवा से अपनी सुरक्षा नहीं कर सकी। अपनी और अपने खानदान की नाक ही कटा दी। आज ही परोसन शहर की कोठी बेच देने की सलाह देगी। सोचते-सोचते उसकी आंखों की पुतलियों की छाया में जवानी के दिन भी हँस पड़े।

उस वक्त जवान थी परोसन। पैर जमीन पर तो पड़ने का नाम ही नहीं लेते थे। किन्तु हाय री किस्मत। जवानी के दिन तो आँखों में ही गुजर गये। यौवन की आग बुझ गयी तो उसने एक बच्चे की भीख भगवान से मांगी। पत्थर के भगवान को मनाती रही वह, मगर उसकी गोद विधवा की मांग की भांति खाली ही रह गई। हवेली में आना-जाना रहता था उसका। उसने अपना सारा प्यार, सारी ममता एकत्र करके ठकुराइन की सन्तान को देना प्रारम्भ किया। उसे असीम आनन्द का अनुभव

होता। दिन गुजरे, बच्चे अनाथ हो गये। पहले ठकुराइन चली गई, फिर ठाकुर भी.... उस समय लड़के तो बड़े हो चुके थे; किन्तु रचना, उस उद्यान की पहली कली थी जिसे हवा का झोंका स्पर्श भी नहीं कर पाया था। परोसन ने उसे अपने आंचल में जगह दी। रचना बढ़ने लगी; मां की कमी उसे कभी खटकी नहीं। किन्तु—वही रचना; अपने खानदान की मर्यादा भूल बैठी।

अपने मन की शान्ति के लिये उसने सूरज से चमकते दिवंगत पुरखों के मुख पर कालिख पोत दी। दुनिया सुनेगी तो क्या कहेगी? सजल की ओर लोग बिजली की तरह उँगलियां उठायेंगे और वह देखता रह जायगा? नहीं, इसके पहले कि खानदान की इज्जत धूल बने, वह मसल देगा रचना को। अपना सर उठाने के लिए रचना का सर काट लेगा वह। परोसन के मन में आया कि सजल को सारी बातें बता दें; किन्तु जब उसने काफी गौर से सोचा तो कहना उचित नहीं समझा। लेकिन परोसन कब तक रचना का पाप छिपायेगी? क्या करे परोसन, कुछ सोच नहीं पा रही थी। कुछ तो करना ही पड़ेगा। उसके सिवा इस स्थिति में रचना का सहायक कोई नहीं! कितनी खतरनाक भूल कर बैठी है रचना, जवानी की उमंग में।

'नानी, क्या हो गया नानी मुझे?' रचना ने गम्भीर परोसन को ना‌नी कहकर हँसाना चाहा।

परोसन क्या बोलती? भला कैसे बताये वह कुछ ही दिनों में मां बनने वाली है।

'सुन रचना!... तूने भारी भूल कर दी है....'

'कैसी भूल नानी...किसी का खून तो नहीं किया मैंने?'

'कैसे बताऊँ तुझे...तूने अपना खून किया है...पुरखों के मुंह पर कालिख पोत दी है तूने!...' कहकर रोने लगी परोसन। उसका दिल वज्रपात से टूक-टूक हो गया था। जब रचना की आंखें उठकर अपनी दादी के चेहरे पर टिकीं तो स्तब्ध रह गई। सचमुच रो रही थी परोसन! उसकी बूढ़ी पलकें जवान बूंदें

ढुलका रही थीं। रचना की सारी हँसी उड़ गई।

उसने जीवन में दूसरी बार परोसन की आँखों में आंसू देखा था। पहली मरतबा तब रोई थी उसकी दादी, जब वह शहर पढ़ने जा रही थी। परोसन उसे घण्टों कलेजे की हड्डियों में बांधे रोती रही। वह जान गई थी कि तीव्र पीड़ा के आघात से ही परोसन दादी आंसू बहाती हैं। छोटा-मोटा दुःख तो उनके जीवन में मामूली बात है। अवश्य कोई गम्भीर बात हुई है। रचना गम्भीर हो उठी—'तुम रो क्यों रही हो दादी ?'

'रोती कहां हूँ ?' अपनी आंखें पोंछ ली परोसन ने।

'मेरा दर्द देखकर ही तो ... पता नहीं मुझे क्या हो गया है दादी !...लगता है, पेट में कोई जानवर चलता हो। तुम चिन्ता न करो, ठीक हो जायगा....मगर तुम रोया न करो, तुम्हें रोती देखकर मुझे भी रोना आ जाता है।'

परोसन रचना के भोले चेहरे की ओर देख रही थी। कितनी निश्छल है रचना, किन्तु छल ली गई।

'एक बात बतायेगी तू ?' परोसन ने गम्भीर होकर पूछा।

'तुमसे कुछ छिपाया है दादी !...पूछो !'

'बता रचना ! तेरी इज्जत का पापड़ किसने बेला है ?...'

'मेरी समझ में तो खाक-पत्थर कुछ नहीं आता — क्या कहवाना चाहती हो दादी ? तुम तो पहेली बन रही हो आज।' रचना खीझ भरे स्वर में बोली।

'तो सुन ले...औरत भले ही अपने पेट में कोशिश करके बात छिपा ले, किन्तु पाप नहीं छिपा सकती...अपने पेट पर हाथ रख कर देख। देख कि पका फोड़ा होता जा रहा है....' कहते-कहते रुक कर परोसन ने रचना का चेहरा पढ़ा।

रचना का मुख-मण्डल भावहीन था।

'लड़की तो भोली बनी है। जवान हो गई पर इशारा भी नहीं समझती ..अरी बन्नो ! तू मां बनने वाली है....!'

'मैं मां बनकर क्या करूँगी दादी। भैया सुनेंगे तो क्या

कहेंगे ? डूब मरूंगी कहीं जाकर मगर खानदान पर आंच न आने दूंगी।' रो पड़ी रचना। उसके ऊपर आसमान फट पड़ा।

'चुप रह, गलती की है तो हिम्मत से काम ले...'

'मैं निर्दोष हूं दादी! मुझे पता नहीं यह सब कैसे हुआ?'

'यह सब मदहोशी का परदा पड़ जाने से होता है बेटी!'

'चाहे जो कह लो...' रचना सिसक पड़ी।

उसकी अन्तर-वेदना फूट पड़ी। वह तो हमेशा सजग रही। सपने में भी उसकी आंखें खुली रहती थीं। जवानी का हर कदम फूंक-फूंक कर रखती थी। गिरता तो वही है जो आसमान देख-कर चलता है या आंखें मूंद कर...रचना ने तो न कभी आकाश विहारा न पलकें ही झपकायीं; तो हो कैसे गया यह सब?

विकट प्रश्न रचना के दिमाग में उठ रहा था।

● ●

आज सजल को वसूली के लिए पहाड़पुर जाना है। सुबह से ही तैयारी कर रहा है। वसूली तो होगी ही! हो सका तो शिकार भी खेलेगा। आहट सुनकर चौंक पड़ा सजल।

'तुम हो दादी!'

'हां; कहीं जा रहा है तू!'

'पहाड़पुर वसूली के लिए, बताया तो था तुम्हें, भूल गई?'

'भूल गई बेटा! बुढ़ापे ने मति भ्रष्ट कर दी है।'

'आज रचना नहीं दीख पड़ी। सोयी है क्या अब तक? आज तो जगाने भी नहीं आई मुझे...' कहते-कहते कुछ गम्भीर हो गया वह। फिर बोला—'एक बात है दादी। मगर...'

'अगर-मगर क्या बेटा!....कहो न साफ-साफ। कोई भेद की बात होगी तो अपने बुढ़ापे की तरह सँभाल रखूंगी...औरतों की जबान बेलगाम होती है लेकिन मैं तो तेरी मां हूं बेटा!—'

वह सजल के पास खिसक आई। ध्यान से सुनने लगी।

'रचना तो जवान हो गई अब?'

'तब क्या बच्ची ही रहेगी हमेशा? मतलब क्या है तेरा?'

'यहाँ की जवान नारी घर की लाज होती है। नारी की लाज दूसरे के घर में ही शोभा धारण करती है अपने घर में तो काँटा बनकर दुनिया की नजरों में गड़ जाती है — उसे कौन-सा रोग लग गया है ? तुम जानती हो दादी ?' सजल ने सर उठा खुली आँखों से परोसन दादी को देखा।

रोग के बारे में सजल के मुख से सुनकर घबड़ा उठी वह।

परोसन को चुप देखकर पूछा सजल ने—'कौन-सी बीमारी है दादी, पूछा है कभी तुमने ?...पूछकर बताओ !...उसे मनहूस देखकर मेरा दिल बैठने लगता है।'

'बच्चों की बीमारी तो ओस होती है, दिन चढ़ते ही सूख जायगी।' परोसन ने सान्त्वना दी। आश्वस्त भी हुई यह जानकर कि रचना की बीमारी के बारे में अनभिज्ञ है सजल।

'रचना को बुलाओ दादी ! जरा देख लूँ....बाहर जा रहा हूँ न ? आवश्यक कार्य पड़ जाने पर शायद कल न आ सकूँ।'

परोसन दादी रचना को बुलाने चल पड़ी।

और रचना ! जब से उसने सुना है अपनी दादी के मुख से कि उसे गर्भ है तब से उस पर पहाड़ टूट पड़ा है। उससे यह भूल कैसे हुई ? कब हुई ? ऐसी स्थिति में क्या करे वह ?

मौत की ओर कदम बढ़ाती है तो भैया की आवाज उसके पैरों को पकड़ लेती है। उसे कितना प्यार करता है सजल।

अगर सजल को उसके पेट के पाप के बारे में मालूम हो जाय तो....तो क्या रचना को कभी प्यार करेगा। सजल ठाकुर अपना अपमान नहीं सह सकेगा। फिर क्या करे रचना ? वह तो कहीं की नहीं रही अब। तभी—चौंक पड़ी वह किसी के पैरों की आहट सुनकर। उसने देखा, सामने परोसन दादी थी।

'चल बेटी ! तुझे ठाकुर बेटा बुला रहा है...हाय राम, हाय सीता ? — यह क्या हालत बना रखी है तू ?' रचना के उदास मुख को देखकर बोली परोसन दादी—'पागल मत बनो रचना !... मैं सारा इन्तजाम कर दूँगी...'

बिना उत्तर दिये रचना परोसन दादी के पीछे हो ली। परोसन दादी को देखकर उसके दिल को सहारा मिल जाता है। लेकिन दादी बार-बार उसे दोषी क्यों बनाती हैं? उसे तो यह भी नहीं पता कि गर्भ कैसे ठहर गया है। दूर दूर में उसका कोई पुरुष साथी रहे था नहीं और नर-नारी के सम्पर्क के बगैर यह असम्भव है...इतना वह जानती है! अजीब उलझन है। उदास चेहरा लिए रचना सजल ठाकुर के सामने खड़ी हो गई।

'पास आ रचना!' सजल ने स्निग्ध वाणी में कहा—'इतनी दूर खड़ी है कि राखी की गाँठ भी नहीं बाँध सकती...'

'क्या कहते हो भैया तुम?' काँपते स्वर को सँभाल कर बोली रचना। मुस्कुराने का व्यर्थ प्रयास भी किया।

'झूठ तो कहता नहीं कल से मुँह भी नहीं दिखाया तूने?...कटी पतंग की तरह साथ ही छोड़ देना चाहती है?' असीम व्यथा निहित थी सजल के स्वर में।

रचना पास आकर खड़ी हो गई। उसकी आँखें ज़मीन की छाती पर कुछ खोज रही थीं। रचना को लगा कि उसके ठाकुर भैया की दृष्टि उसके पेट के पाप को देख रही है—एक टक!

पेट का पाप हिल उठा। रचना पेट थाम कर जमीन पर बैठ गई। पूर्ववत् पीड़ा होने लगी और लगी छटपटाने।

'रचना!...क्या हो गया तुझे?'

'कुछ नहीं भैया, कुछ नहीं...?' कहँरती हुई बोली रचना।

'बहाना बनाती है तू!...मेरी आँखें अन्धी नहीं..दिनोंदिन तेरी हालत पुरानी इमारत की तरह ढहती जा रही है...'

'सरकार! मुन्शीजी दो-चार लठैतों के सङ्ग बाहर दरवाजे पर आपकी राह देख रहे हैं।' एक लठैत ने आकर कहा।

'दादी रचना को बाहर ले जाओ। मैं पहाड़पुर जा रहा हूँ, उधर से आते समय किसी डाक्टर को लेता आऊँगा...'

सजल चिन्तित हो हवेली के बाहर आया। अपने घोड़े की पीठ पर बैठ गया। एँड़ लगाते ही घोड़ा हवा से बातें करने

लगा। मुन्शी-कारिन्दा पहले ही प्रस्थान कर चुके थे।

● ●

जीवन से निराश रचना ने मरने का बहुत मौका खोजा, किन्तु उसे हर तरफ से निराशा ही मिली। परोसन रचना से जोंक की तरह लगी रहती है। रचना गमगीन होकर खिड़की पर बैठी है। सोच रही है—अगर खिड़की में छड़ नहीं लगे होते तो कूद ही पड़ती वह। जमीन पर परोसन दादी बैठी हैं। कटोरी में किसी चीज का घोल तैयार कर रही हैं। शायद कोई दवा होगी। घोल तैयार कर उसने रचना की ओर बढ़ाया।

'मैं नहीं पीती दादी !...कल से ही कितनी तरह की दवा पिला चुकी हो तुम मगर फायदा कुछ होता नहीं....कहती हूं कि जहर लाकर दे दो पर सुनती नहीं...'

'हाय राम-हाय सीता !' कहकर कपार पीट लिया परोसन दादी ने—'यह लड़की तो मरने की ही बात करती है; अरे हरामी, हाथ में घाव हो जाने से उसे काट कर फेंक थोड़े देता है कोई ?...पी ले, सब ठीक हो जायगा।'

'बदनामी से बचाना चाहती हो तो मार डालो दादी ! कल भैया डाक्टर लेकर कहीं आ गए तो क्या छिपा रहेगा कुछ...पर मेरी समझ में नहीं आता दादी कि किसी मर्द के सम्पर्क के बिना यह सब कैसे हो गया।'

'क्या कहती है तू ?...तूने किसी से प्रेम नहीं किया ?' आश्चर्य से परोसन दादी की आँखें फट पड़ीं।

'नहीं, लेकिन तुम्हें यकीन नहीं; होगा कैसे बताऊं तुम्हें ?'

'बता बेटी !'

'जाने दो दादी !...अब कुछ बताने की जरूरत नहीं। कल तो डाक्टर आ ही रहा है। सब कुछ बता देगा....भैया का सर नीचा होगा। लोग मुझ पर थूकेंगे। भैया मेरा गला घोंट देंगे... इतना ही तो...मैं मर जाऊँगी...मरना तो चाहती ही हूँ...' रचना भारी गले से बोली।

परोसव दादी ने किसी प्रकार रचना को दवा पिला दी। कुछ राहत मिल गई उसे। पहले तो रुक-रुककर पीड़ा से चीत्कार कर उठती थी। किन्तु यह दवा पीये एक घण्टे से ऊपर हो गया अभी दर्द नहीं उठा है। इससे रचना को भविष्य के अन्धकार में क्षीण प्रकाश की रेखा दिखाई पड़ने लगी है।

● ●

'मुन्शीजी! गाँव के मुखिया को बुलाओ।'

पास ऊँघते मुन्शीजी हड़बड़ा कर सामने आ खड़े हुए हाथ जोड़े। बोले—'अभी बड़े राजा! अरे ओ महँगू!'

पुकार लगाने लगे मुन्शीजी।

'जरा धीरे से मुन्शी बाबू! अभी जिन्दा हूँ भाई-बाप!' महँगू पास ही खड़ा था।

'समझे कि नहीं?....कहाँ हो....मुखिया को बुलाओ।'

'हम हाजिर हैं हजूर!' एक बूढ़ा सामने आकर बोला।

'हम वसूली के लिए आये हैं मुखियाजी!' मुन्शीजी बोले—'जितनी जल्दी हो, उतनी जल्दी हम लोग निपटना चाहते हैं; समझे कि नहीं?...' मुन्शीजी की झड़प से मुखिया सिटपिटा गया बेचारा। सजल होंठों में ही मुस्कुराया।

तीसरे पहर वसूली समाप्त हो गई। सजल ने सोचा, खाली बैठने से अच्छा तो यही होगा कि जङ्गल में शिकार ही खेल आये। वह तैयार हो गया। महँगू और एक लठैत को लेकर वह जङ्गल की सघनता की ओर बढ़ा। एकाएक उसके विचारों में रचना आई, फिर रामगढ़ के जङ्गल में शिकार खेलते-खेलते शिकार हो गया भाई, विचलित हो उठा वह।

'सरकार! कोई जानवर नहीं दीख पड़ता...शाम भी हो गई...लौटते-लौटते अँधेरा हो जायगा हजूर।' महँगू बोला।

'थोड़ी दूर और चलो।'

वे लोग थोड़ी ही दूर चले थे कि सघन जङ्गल के किसी कोने से एक चीख सुनाई दी। वह तेजी से उस ओर बढ़ा; जिधर से

अभी-अभी हवा के साथ किसी के गले से मौत की चीख आई थी। घटनास्थल पर पहुँच कर जो कुछ देखा सबल ने उसे देख-कर स्तब्ध रह गया। उसकी समझ में ही नहीं आया कि क्या करे और क्या न करे। बड़ा खौफनाक दृश्य था वह। एक व्यक्ति का आधा शरीर मानव-भक्षी अजगर के मुख में था; दूसरा जमीन पर था होठों में कुछ बुदबुदाता और हाथ के छुरे से अजगर के शरीर पर वार करता। लेकिन अजगर था कि उस पर उसके तेज छुरे का कुछ भी असर नहीं। वह मुँह में पड़े व्यक्ति को धीरे-धीरे निगल रहा था। दूसरा व्यक्ति क्रोधावेश में करता जा रहा था छुरे का वार। विचित्र पोशाक थी उनकी—अजगर के चमड़े की ही तो थी। देखते-देखते अजगर के भयानक मुँह के बाहर निकले पैर भी लुप्त हो गये।

'उस्ताद!' दूसरा व्यक्ति चीख पड़ा। क्रोध में जलकर उसने अपना छुरा अजगर के मस्तक में घोंप दिया।

क्रोधित अजगर फुफकार कर झपटा उसकी ओर, और—

'गोली मार दो सरकार!!' महँगू चीखा।

बन्दूक तनी और...धायँ...धायँ

• •

जो कुछ सुना है सजल ने उस पर विश्वास कर ले? वह एकटक पहाड़ की ओर निहार रहा है। इस जंगल की सघनता के पीछे एक ऐसी दुनिया है जहाँ के निवासी सँपेरे हैं। साँपों से खेलते हैं, साँपों को खाते हैं। मन्त्र के बल पर साँप काटे आदमी को जिन्दा कर लेते हैं। लेकिन इससे भी बढ़कर तो मुखिया के मुख की बात है। अभी तक उसकी बात कानों में गूँज रही है; उसी चीख की तरह जो उसने जंगल में सुनी थी।

'सरकार! तन्त्र-मन्त्र की बात छोड़िये। सेदहाँ गाँव में जो लोग साँप काटे आदमी को छूकर जिन्दा कर लेते हैं।'

ये सब फालतू बातें हैं। इस पर सोचने-विचारने से उसका कोई लाभ नहीं और बेकार की बातें सोचकर करेगा ही क्या?

वह उठकर टहलने लगा। देखा; कुछ दूर पर बैठे मुन्शीजी सँपेरे में काफी दिलचस्पी ले रहे हैं।

'यह तुम्हारे हाथ में क्या है जी ?' मुन्शीजी ने पूछा। इस तरह देख रहे थे कि मस्तक की रेखायें उग आई थीं।

'यह महुवर है सरकार ?' सँपेरा बोला।

'महुवर !...समझा ? साँप नाचता है बऽ इसकी आवाज पर; वही महुवर है नऽ ?" चश्मा कोठरी में है; नहीं तो पहचान ही जाता !...सुनाओ जरा ....सुना है बड़ा मीठा स्वर होता है इसका; मगर अभी तक सुनने का मौका नहीं मिला ... कलम का खिलाड़ी हूँ...समझे कि नहीं ?....सो महुवर से मतलब ही क्या ?'

'सुनोगे सरकार ?'

'कैसे हो जी तुम, समझे कि नहीं ? कहा तो सुनाओ.... लेकिन भई, साँप-वाँप मत बुला लेना, नहीं तो मेरी नानी इस बुढ़ापे में ही मर जायगी....समझे कि नहीं ?'

'समझ गया सरकार !'

सँपेरे ने होठों पर महुवर रखी। फूंक मारी। एक मादक स्वर-लहरी वातावरण में तैर उठी। बूढ़े मुन्शीजी उकड़ूँ बैठे थे। उनके दोनों हाथ घुटने का चुम्बन कर रहे थे और सँपेरे के गाल फूल-पचक रहे थे। जादू भरी उँगलियाँ महुवर के छिद्रों पर उठ-गिरकर स्वर में सम्मोहन पैदा कर रही थीं।

'भई, वाह ! कमाल का बजाते हो !' हर्षातिरेक से विह्वल आवाज थी मुन्शीजी की—'जी चाहता है नाचने लगूँ उठकर।'

'तो नाचो न मुन्शी बाबू !...सच जानो सोने में सुगन्ध आ जायगी।' पास बैठे महँगू ने कहा।

'महँगू !' पुकारा सजल ने तो मुंशीजी का पिंड छोड़ चला गया वह। मुंशीजी को फुरसत मिली !

'भई संपेरे...बजाते च ओ...अरे !' चौंक पड़े मुंशीजी—'क...क....कहाँ चले गये भाई तु ? समझे कि नहीं ?'

'मैं यहीं हूं सरकार !'

सँपेरा मुंशीजी को पहँगू से बातें करता देखकर चुप हो गया था। उसके खामोश चेहरे पर गम की लकीरें उभरी थीं।

'तुम चुप क्यों हो गये भाई! बोलो भी तो; समझे कि नहीं? कि बोलना ही नहीं आता अधिक!...महुवर बजाते हो तो मुँह भी बजाना सीखो... घर की याद सता रही है क्या!'

'याद तो आती ही रहती है सरकार! ...उसे रोकने की ताकत किसमें है भला...' उदास वाणी थी सँपेरे की।

'रोती आवाज में मत बोलो भाई! ...अभी तो खासे जवान हो, जरा तड़प कर बोला करो....मुझे देखो, बूढ़ा हो गया हूँ, मगर जबान में लगाम नहीं लगा सका...बोलने लगता हूँ तो समझे कि नहीं?...जबान घोड़ा हो जाती है...कोई दुःख है तुम्हें?' मुंशीजी सहानुभूति प्रदर्शित करने लगे।

'एक दुःख हो तो बताऊँ सरकार!...यहाँ तो जिन्दगी ही गम बन गई है।' दिल का दर्द स्वर में भरकर बोला सँपेरा।

'यहाँ रहोगे तो सारा दुःख दूर हो जायगा....हाँ; यह तो बताओ जिसे अजगर ने निगल लिया, वह कौन था तुम्हारा?'

'मेरा उस्ताद था सरकार!'

'तुम्हारा उस्ताद अजगर के पेट में कैसा चला गया। वह तो जन्तर-मन्तर जानता रहा होगा? क्या वह भी सँपेरा था।' मुंशीजी उत्सुक आँखों से उसकी ओर देखने लगे।

'जब मौत आ जाती है सरकार, तो किसी का बस नहीं चलता; सारी उस्तादी धरी रह जाती है।'

'ठीक कहते हो तुम!...ससुरी कहकर भी तो नहीं आती... मगर तुम तो थे, क्यों नहीं मन्तर पढ़ने लगे?'

'क्या कहूँ, मति भ्रष्ट हो गयी थी।' सँपेरा बोला।

'आगे क्या इरादा है तुम्हारा?'

'कोई साध बाकी नहीं रही सरकार?...जिन्दगी में कोई उम्मीद नहीं अब तो...राजा साहब कल जंगल में नहीं पहुँचते तो मेरा भी क्या हाल होता, कौन जाने?'

'तुम भई ! बड़े कमजोर दिल के आदमी हो...समझे कि नहीं ?....कैसे रह सकोगे यहाँ ? हिम्मत से काम लो जरा !... कमजोर आदमी को दुनिया दबाती है—समझे....' मुन्शीजी गम्भीर होकर उपदेश दे रहे थे।

'दिल कमजोर हो सकता है मुंशी बाबू ! हाथों की ताकत जिन्दा है ..और जिसके पास जिस्मानी ताकत है दुनिया उसका बाल भी टेढ़ा नहीं कर सकती...तुम लोगों पर भार बनकर नहीं रहूँगा सरकार !...मन्तर पढ़-पढ़ कर लोगों को जिन्दगी दूँगा ... लोग बदले में दुआएँ देने लगेंगे तो इस पापी पेट के लिए खाना भी माँग लूँगा।' सँपेरे के स्वर में दृढ़ता आ गई।

'अपने घर नहीं जाओगे कभी ?'

'घर में तो आग लग गई सरकार !...वहाँ रखा ही क्या होगा; राख ही तो—सभी से नाता तोड़ आया; यहाँ तक कि हमदर्दी देने वाला कोई नहीं बचा—बूढ़ी माँ है....उसे गाँव वाले सहारा दे ही देंगे।' वेदना थी सँपेरे की आवाज में।

'क्यों भाई, तुम्हें अपनी माँ से प्यार नहीं ?'

'है क्यों नहीं मुन्शी सरकार !...कभी-कभी फर्ज के आगे अपने को भुलाना ही पड़ता है।' कहते-कहते सँपेरे को अपनी माँ की याद आ गई तो चुप हो गया।

थोड़ी देर बाद—'एक बात है सरकार !...पूँछूँ।'

'हाँ...हाँ, बेखटक हो के पूछो ?....समझे की नहीं ?'

'ये राजा साहब हैं न ।...' कहना शुरू किया संपेरे ने—

'इनकी सूरत मेरे छैला से मिलती है बाबूजी !...अजीब बात है ! चाल-ढाल, शकल-सूरत, सभी कुछ एक-सी...दुनिया में एक चेहरे के दो पुतले ! कुछ समझ में नहीं आता।'

'समझे कि नहीं ? यही तो ईश्वर की माया है भाई !...कहीं धूप कहीं छाया !...यह छैला कौन था तुम्हारा ?...हम तो नाचने वाले को छैला कहते हैं...' मुन्शीजी ने सवाल किया और अपनी आँखें पोंछ कर उसकी ओर देखने लगे।

'मुन्शी बाबू !...बड़े राजा बुला रहे हैं तुम्हें...आओ...' आकर महँगू ने कहा।

मुन्शीजी को महँगू का आना बड़ा बुरा लगा; किन्तु बड़े राजा की आज्ञा टालने की क्षमता उनमें नहीं थी। वे सजल के सामने खड़े हो गये। बोले—'आपने बुलाया सरकार !'

'हाँ, मुन्शी दादा !...तुम सँपेरे को लेकर हवेली चलो... शाम तक पहुँच जाओगे।' कहा सजल ने गम्भीर होकर।

'और आप अन्नदाता !'

'मैं शहर जाऊँगा। मेरे साथ महँगू रहेगा...किसी अनुभवी डाक्टर को लेकर कल सवेरे आऊँगा मैं !'

'जैसी आज्ञा !' मुन्शीजी के दोनों हाथ जुड़ गये।

'मैंने लाख बार कहा मुन्शी दादा कि आप बुजुर्ग हैं; आज्ञा मत माँगा कीजिए...'

'आदत है ठाकुर बेटा ! समझे कि नहीं !...तोते की तरह याद हो गया है यह तो...आगे से ध्यान रखूँगा...'

घण्टे भर बाद मुन्शीजी, सँपेरे के साथ महुवारी इलाके की ओर चल पड़े। बैलगाड़ी कच्ची सड़क की लीक पर 'चर्र चों' का संगीत सुनाती चली जा रही थी। सँपेरा चारों ओर बिखरी सुषमा निहार रहा था विभोर होकर ! मुन्शीजी ठण्ढी-ठण्ढी हवा की थपकी से ऊँघ रहे थे। उनकी पलकों के परदे पर दूसरी शादी की सुहागरात के फूल खिल रहे थे।

• • •

महुवारी रियासत के मुन्शी गिरधारी चरण को अपने भविष्य की बात नहीं मालूम। बुढ़ापे की लात खाकर कमर कमान की तरह झुक गई है, किन्तु जीने का सपना नींद में भी देखना नहीं भूलते। उन्हें पता नहीं कि साँस का तीर कमर की कमान पर चढ़कर कब छूट जाय। मगर मुन्शीजी तो कहते हैं—जान भले ही निकल जाय, किन्तु इन्सान होने के नाते शान से जीना चाहिए ताकि मरने के बाद लोग इज्जत से नाम लें।

अंधेरा अट्टहास कर उठा है। गाड़ी 'चर्र-चों' का पुराना राग अलापती थके मुसाफिर की तरह धीरे-धीरे बढ़ती जा रही है। पहिये जब कभी राह में पड़े किसी रोड़े पर चढ़ जाते हैं तो गाड़ी में एक दोल पैदा हो जाती है। उनका सुनहला सपना धक्का खाकर टूट जाता है। चेहरे की झुर्रियों पर निराशा, विस्मय एवं भय के चिह्न उभित हो जाते हैं।

बोल उठते हैं—'भई गाड़ीवान ! जरा सँभल कर चलाओ गाड़ी....समझे कि नहीं ? तुम्हारी गाड़ी के पहिये तो नवेली दुलहिन की तरह नखरे दिखा रहे हैं !...बाप रे बाप !...जरा धीरे-धीरे भाई !' मुन्शीजी गाड़ी के हिचकोले से चीख पड़े—'मुन्शिआइन कसम ! तुम्हारे बैल तो बिलकुल बैल ही हैं... दौड़ते हैं तो ऐसे कि कलेजे पर ही खुर पड़ते हैं...गर्दभदेव की दुलत्ती भी मात इस चाल के आगे, समझे कि नहीं ?'

गाड़ी जब ठीक से चलने लगी तो मुन्शीजी दूसरी ओर मुखातिब हुए—'भाई सँपेरे।....सोने लगे क्या ?'

'नहीं सरकार ?...अभी तो जाग रहा हूँ।' बोला सँपेरा।

'जागते ही रहो भाई !...डगर बड़ी ऊँची-नीची है। कहीं बैल बिदक गये तो जमीन सूँघने लगोगे। बेहतर है कि आंखों की खिड़की खोलकर ही चलो नहीं तो सांस का पंछी बेपर का ही उड़ जायगा, समझे कि नहीं ? भूख तो नहीं लगी है ?'

'भूख-प्यास तो आपकी हमदर्दी से ही मिट गई सरकार ! किरपा बनाये रहें यही बहुत है !' आदर के साथ बोला सँपेरा।

बैलों के गले में बँधी घण्टी का टनमन-टुन स्वर सुनसान घाटी में गूँज उठा। दौड़ती हुई गाड़ी किसी पेड़ के नीचे से गुजरी। दैत्याकार पेड़ की काली आकृति देखकर मुन्शीजी की सांस नीचे-ऊपर होने लगी ! शायद डर लग गया उन्हें। पेड़ के नीचे पड़े सूखे पत्तों पर जब पहिये दौड़े तो विचित्र तरह का स्वर पैदा हुआ। मुन्शीजी भय एवं विस्मय से पत्थर हो गये।

पेड़ का साया छोड़कर गाड़ी जब खुले आकाश के नीचे आई

तो वे चैतन्य हुए। बोले—'पेड़ के नीचे से गाड़ी मत ले जाया करो, समझे कि नहीं ?...रात में पेड़ के नीचे देवता सोते हैं।'

'देवता तो नहीं भूत-परेत जरूर जागते हैं।' गाड़ीवान था।

'चुप रहो जी, समझे कि नहीं ?...तुम्हारा किराया काट लूंगा अगर रात के समय इन लोगों का नाम लोगे तो ...' कहने के साथ ही मुन्शीजी खिसककर सँपेरे के पास आ गये।

'डर लगता है सरकार !'

'न...नहीं....नहीं...ड...डर कहाँ रहा हूँ...डरें मेरे दुश्मन...समझे कि नहीं ?.. मुझे ऐसा-वैसा समझ लिया है क्या ?....ठाकुरों के बीच में बाल सफेद हुए हैं, जो अपनी जान हथेली पर लेकर चलते हैं तलवारों की लड़ाई देखते-देखते दिल मजबूत हो गया है...समझे कि नहीं ?....'

'समझ रहा हूँ सरकार !' गाड़ीवान बोला।

'चुप रहो !' मुन्शीजी की डांट से गाड़ीवान बैलों की पूंछ हाथ में लेकर जरा और तेज चलने के लिए पुचकारता रहा।

तभी, बहुत दूर से रात के अँधेरे को चीरती हुई किसी चीख की आवाज मुन्शीजी के कानों से टकराई। चौंक पड़े वे। मिरजई की जेब से पुराना चश्मा निकाला उन्होंने जिसकी कमानी न जाने कब, कहां गिर चुकी थी और मुन्शीजी ने उसमें धागा बांध दिया था। बेढंगे चश्मे को हाथों से बीच नाक पर चढ़ाया। झपकती-झिलमिलाती नजरों से वे देखने लगे।

थोड़ी देर बाद घोड़े की टाप सुनाई पड़ी।

'समझे कि नहीं ? रोक दो गाड़ी।' चीख पड़े मुन्शीजी। उनका स्वर भय से कांप रहा था।

'क्यों सरकार !...कोई हाजत-वाजत ?' गाड़ीवान ने पूछा।

'धत्त तेरे की ...हाजत के बच्चे ! समझे कि नहीं ?...कोई आ रहा है उधर...वह देखो...भू....भू...भूत !' मुँह से लड़खड़ाती आवाज निकली मुन्शी जी की। उनका चश्मा छटककर नाक की नोक पर अटक गया। गाड़ीवान ने गाड़ी रोक दी।

मुन्शीजी भय से प्रायः बेहोश हो गये थे। उनकी सारी देह भूकम्प के धक्के से डोलती धरती की तरह हिल रही थी।

सँपेरे ने मुन्शीजी को सहारा देना चाहा। उसके हाथों के स्पर्श से तेजी-से मुन्शीजी चीख पड़े। घोड़े पर चढ़ा सवार जब नजदीक आया तो उसकी काली छाया दिखाई पड़ने लगी। वह सवार तेजी से गाड़ी की ओर बढ़ता आ रहा था। गाड़ीवान ने भी देखा—भय तो उसे भी लगा, किन्तु मुकाबले के लिए तैयार हो गया। खुद बर्छी लेकर खड़ा हो गया और सँपेरे को गड़ासा थमाकर उत्साहित किया। सवार तेजी से पास आता जा रहा था। जब फासला बीस कदम रह गया तो गाड़ीवाले ने कड़ककर पूछा—'कौन हो?...वहीं खड़े हो जाओ!'

'मैं हूँ!' इतना ही बोला सवार।

और गाड़ीवान के हाथ का बर्छा नीचे झुक गया। पता नहीं कौन-सा जादू भरा था उस—'मैं हूँ' में। सवार गाड़ी के पास आकर रुक गया। बोला—'सँपेरे! मेरे साथ आओ।'

और उसकी आज्ञा के साथ ही सँपेरा घोड़े की पीठ पर सवार हो गया, ठीक उसके पीछे। सवार ने घोड़े को एँड़ लगाई। घोड़ा आँधी की तरह भाग चला महुआरी गाँव की ओर।

गाड़ीवान से कुछ करते न बना। सँपेरे को लेकर सवार अँधेरे में खो गया। गाड़ीवान मुंशीजी की परिचर्या करने लगा।

'मुन्शी बाबू! अरे ओ मुंशी बाबू!....उठो भी!' हाथों से गठरी हुए मुंशीजी को सीधा करने लगा गाड़ीवान।

'अरे! भई, भु....भु....भू....भूत....अरे, मु....मु....मुझे नहीं; किसी और को...किसी और को...समझे कि नहीं?...?...मैं तो बूढ़ा हूँ।' मुन्शीजी आँखें बन्द किये ही बोले। लग रहा था कि भूत ने ही आकर पकड़ रक्खा है उन्हें।

'उठो भी सरकार! आधी रात हो गई; सुबह-सुबह बड़े राजा हवेली में नहीं देखेंगे तो फाँसी पर लटका देंगे। समझे कि नहीं?'

किसी प्रकार मुंशी ने डरते-काँपते अपनी आँखें खोलीं। देखा

तो सामने गाड़ीवान खड़ा था। जान में जान आई।

'समझे कि नहीं?' मुंशीजी के गले से निकला—'अरे कहाँ गया सँपेरा का बच्चा!...समझे कि नहीं?'

'उसे तो भूत ले गया माई-बाप!....बहुत मुश्किल करके बचाया...तुम्हें?' बोला गाड़ीवान।

'चलो बड़ा अच्छा किया तुमने; समझे कि नहीं?...तुम्हें ईनाम दूँगा....वह तो खुद मरना चाहता था!...चीखा भी था इतने जोर से कि मैं बेहोश हो गया।'

'चीखे तो तुम थे सरकार!'

'समझे कि नहीं?....झूठ मत बोलो....भला मैं क्यों चीखने लगा?' मुन्शीजी शान से बोले मानों शेर का शिकार करने आये हों। किन्तु अभी उनके अन्तर में भय तम्बू ताने बैठा था—'जरा जल्दी ले चलो; समझे कि नहीं?—नहीं तो उल्लू का पट्ठा कहीं फिर न आ जाय।'

'लो सरकार! वह तो फिर आ गया। भला तुम बुलाओ और भूत न आये....क्या कहने!' सामने की ओर उँगली से दिखाता हुआ बोला गाड़ीवान। मुंशीजी के कान खड़े हो गये।

'बाप रे बाप...समझे कि नहीं?...जल्दी से कोई उपाय करो।' मुंशीजी की छाती भरने लगी।

वह सवार इस बार आया तो रुका नहीं। तेजी से पहाड़पुर की ओर भाग गया। सँपेरा अब तक उसकी पीठ के पीछे था।

इस बार गाड़ीवाले ने मुन्शीजी को जगाया नहीं।

गाड़ी धीरे-धीरे चलती रही। सन्नाटे को चीरकर कभी-कभी किसी बिरही पपीहे की दर्द भरी चीख सुनाई पड़ जाती थी।

● ●

रचना आशान्वित हो उठी है। अब उसे आराम है। उसका दर्द कम हो गया है, किन्तु पेट का पाप मस्तक उठाये खड़ा है। रचना के मन की व्यग्रता कम नहीं हुई है। डाक्टर के साथ अजय मैरा कल आ जायेंगे और जो बात सिर्फ परोसन जाती

जानती है वह दो व्यक्तियों के चार कानों में पड़ जायगी।

भैया भले ही उसके पाप के बारे में सुनकर चुप भी रह जायँ मगर डाक्टर भला क्यों चुप रहेगा ? डाक्टर से बचने का उपाय क्या हो सकता है ? एक-आध रोज और डाक्टर नहीं आये तो कितना अच्छा रहे। वहीं परोसन दादी ने दो-चार खुराक और दवा पिलायी कि पाप का मस्तक कटकर नीचे गिर जायगा।

तभी परोसन दादी कटोरी में कुछ लेकर उपस्थित हो गई।

'क्या है दादी ! जहर तो नहीं ?'

'अच्छी बात क्यों बोलती है री !' प्यार की झिड़की देकर कहा परोसन दादी ने—'ले; दूध के साथ बुढ़िया की गोली मिला दी है मैंने... पी ले... सारा किस्सा समाप्त हो जायगा...'

'तुम बुढ़िया की गोली पिलाओ दादी ! कल भैया आकर बन्दूक की गोली दागेंगे...' बोली वह।

'मेरे रहते किसकी मजाल कि तेरी जान ले ले। मुँह नोंच लूंगी मैं उसका...' एक ही साँस में कह गई परोसन दादी ! उसका चेहरा तमतमा उठा था।

'तुम ऐसा नहीं कर सकती।' उसके स्वर में सन्देह था।

'कैसे भला ?'

'इसलिए कि जितना तुम मुझको चाहती हो उससे अधिक भैया को चाहती हो... भैया ही तो गोली मारेंगे !...'

'लड़की; तू तो पागल हो गई है। भाई कहीं बहन की जान ले सकता है।' कहा परोसन ने—'ले पी ले दवा।'

परोसन के आश्वासन से उत्साहित होकर रचना दवा पी गई। किन्तु डाक्टर का भय सताता ही रहा उसे।

जब वह गम्भीर होकर अपने अतीत के विषय में सोचने लगती है तो कुछ दिखाई नहीं पड़ता। जब वर्तमान पर गौर करती है तो उसका छोटा-सा मासूम दिल करुणा से भर उठता है और उज्ज्वल भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होने लगता है। कितनी जटिल उलझन रचना के मस्तिष्क में समा गई है कि

सुलझाना चाहती है तो उलझती ही जाती है। परोसन दादी बराबर शादी की बात करती हैं, शादी के नाम से जितना उसे सुख मिलता है उतना ही भय भी होता है। होने वाले पति को अगर उसके पाप की बात मालूम हो जायगी तो क्या वह अपनायेगा ? रचना की गम्भीरता बढ़ने लगी। उसके शान्त मुख-मण्डल के पीछे एक भयानक तूफान की सृष्टि होने लगी। उद्वेग से मस्तिष्क फटने लगा। जिधर देखती उधर ही अमा की रात काला मुँह बाये गला घोंटने के लिए तैयार दीखती।

'चुप क्यों हो गई तू...शादी की बात से लजाने लग गई लाजवन्ती !...कौन जिन्दा रहेगा तेरी इस अदा पर !'

'चुप रहो दादी ! चुप रहो...मैं नहीं सुनना चाहती यह सब !' असीम वेदना निहित थी रचना की आवाज में, जिसे परोसन दादी समझ न सकी—'दादी मैं, अकेली रहना चाहती हूँ—मेरा सर फटने लगा है।'

'तू तो पागल है।'

'पागल भी हो जाती तो अच्छी रहती दादी !...कम से कम सारा दुःख भूल तो जाती।'

वह पलंग पर विक्षिप्त होकर पड़ी रही। आँखों से गरम-गरम आँसू की बूँदें लुढ़क कर उसके कोमल-कपोल को नहलाने लगीं। गले पर हिचकियों का दर्द भरा सरगम भी छिड़ गया। हिचकी की आवाज ने परोसन दादी के मन में अशान्ति भर दी।

समय धीरे-धीरे खिसकने लगा। रचना कब सो गई पता नहीं। परोसन दादी सर पर हाथ रखे कुछ सोचती रही।

दिन की धूल उड़ते ही शाम गोधूलि बन गई। शिवालय के घण्टे-घड़ियाल घनघना-टनटना उठे। सान्ध्य दीप की आँखें खुल गईं...पर रचना आँखें बन्द किये पड़ी रही। धीरे-धीरे रात हो गई। परोसन दादी ने लालटेन जलाई। लालटेन की फीकी रोशनी में देखा परोसन ने, बेखबर सोई थी रचना।

साँस की हर लहर पर छाती नीचे-ऊपर हो रही थीं। गालों

पर आंसू की सूखी लकीरें करुण अदा से मुस्करा रही थीं, बालू पर खींची पानी की लकीर की भांति।

परोसन ने धीरे से पुकारा। एक ही पुकार में रचना जाग गई। और दिन तो घण्टों जगाने पर भी नहीं जागती थी वह—

'चल उठ, बाहर बाग में बैठ तनिक—भीतर रहते-रहते मन ऊब गया होगा!' परोसन दादी सहारा देकर उठाने लगी उसे।

बाग में आकर पत्थर के चबूतरे पर बैठ गई वह। चारों तरफ से सौरभ भरा पवन उठ-उठकर वातावरण को सुगन्धित कर रहा था किन्तु रचना को कोई रस नहीं मिला उसमें।

फुलवारी छोड़कर उठ खड़ी हुई वह। उठकर पत्थर से बने कुएँ की जगत पर आ बैठी। आँखें गड़ाकर गहरे कुएँ के भीतर काँपते अन्धकार को निहारने लगी। उसके अन्तर में एक भाव उदित हुआ। अगर कुएँ में कूद पड़े तो?

● ●

महुवारी गाँव दिन भर की थकान के पश्चात् आँखों में नींद का काजल लगाकर सो रहा है। जाग रहे हैं तो सिर्फ वे जिन्हें रात को पहरा देने के लिए सजल ने तैनात किया है।

ऐसे ही वक्त में—गाँव के दूसरे छोर से कुत्तों के भौंकने की आवाज-रह-रहकर आने लगी। पहरे पर के लठैत सावधान हो गये। तभी —घोड़े की टाप सुनाई पड़ी और उसके पीछे दौड़ते कुत्तों की आवाज। घोड़ा दौड़ता हुआ हवेली के फाटक पर रुका। लठैत ने हुक्म भरे लहजे में पूछा—'कौन?...'

'मैं हूँ!' कहते-कहते घोड़े पर चढ़ा आदमी उसके पास आ गया—'फाटक खोलो, जरूरी काम है।'

फाटक खुल गया। सवार उतर पड़ा। एक व्यक्ति और था उसके साथ। दोनों व्यक्ति हवेली के भीतर प्रविष्ट हुए।

घर का दरवाजा पहले व्यक्ति ने खटखटाया।

भीतर सो रही थी परोसन दादी और रचना।

परोसन दादी की नाक फों-फों कर रही थी किन्तु रचना अब तक बेचैनी से करवट बदल रही थी। किवाड़ खटखटाने की आवाज जब उसके कानों के पर्दों से टकराई तो चौंक पड़ी वह।

उसका नाम लेकर किसी ने पुकारा भी। स्वर परिचित था। और अपने परिचित से भला कैसा डर? चाहे रात में चोर की तरह आये या दिन के उजाले में शरीफ बनकर।

रचना ने दरवाजा खोला। हाथ की लालटेन नीचे रख दी। अपने परिचित को देखकर बोली—'तुम!'

वह बोला— 'मैं ही हूँ रचना!' घबड़ाया स्वर था उसका।

'इतनी रात को...और भैया?'

'कुछ मत पूछो?—ठाकुर साहब की जिन्दगी और मौत का सवाल है....वक्त कम है और सफर लम्बा....थोड़े में जल्दी से सुनो।' कहने लगा वह धीरे-धीरे।

रचना ने सुना तो उसके पैर के नीचे की धरती खिसक गई और अधिक नहीं सुन सकी वह। उधर वह व्यक्ति रचना से बातें बताता जा रहा था। वह बाहर के अँधेरे में खड़ा था इसलिए उसकी आकृति अस्पष्ट थी। जो कुछ कहा उस व्यक्ति ने सुनकर रचना घबड़ा उठी। कुछ ऐसी बात थी कि रचना के दिल की धड़कन और बढ़ गई। पेट का दर्द फिर उठकर खड़ा हो गया। अथवा पेट थाम जमीन पर बैठ गई वह। उसके होठों से नैराश्य-पूर्ण, बोझिल स्वर निकला—'अब क्या होगा।'

'जो भगवान चाहेगा?...बड़े राजा की जिन्दगी उस पर निर्भर है...अगर वह चाहे तो बचेंगे नहीं तो मरे तो हैं ही...मैं जाता हूँ अब!...मुझे पहाड़पुर पहुँचना है।'

'कौन है वह?'

'आने पर बताऊँगा—अभी समय नहीं है।' कहकर विचित्र व्यक्ति बाहर निकला, घोड़े पर सवार हुआ और उसके साथ का आदमी उसके पीछे बैठ गया। घोड़ा दौड़ चला।

रचना के मुख से चीख निकली। जैसे उसका गला दबा

दिया हो किसी ने। परोसन ने सुना तो वह दौड़कर पास आई। रचना पेट दाबे आहें भर रही थी।

'क्या हुआ रे रचना....यहाँ क्या कर रही है इतनी रात को ?...' बोली परोसन।

'दादी ! भीतर ले चलो...लगता है अब प्राण निकले। दादी मैं नहीं बचूंगी। पेट फटा जा रहा है...दादी !' लड़खड़ाती आवाज थी रचना की। कुछ देर बाद फिर कहने लगी—'भैया को साँप ने काट लिया...वे नहीं बचेंगे...अब....उन्हीं की आज्ञा से यहाँ इतनी रात को...आया था...वह।'

परोसन पर हिमालय का एक टुकड़ा आ गिरा। सजल को साँप काटने की बात ने और इधर रचना के पेट दर्द ने हैरान कर दिया उसे। कितनी बड़ी आफत थी यह बूढ़े दिल के लिए !

एक ही तीर में दो शिकार खेलना चाहती है मौत ?

रचना बेहोश हो गई। परोसन को होश रहते बेहोशी आ गई। अब क्या करे बेचारी, सिर्फ रचना का पेट सहला रही थी। हाहाकार आँखों में आँसू लिए बूढ़ी परोसन दादी अत्यधिक विकल हो उठी थी। क्या करे वह, किसको पुकारे ?

किसी को पुकारना तो पड़ेगा ही, नहीं तो रचना की हालत सुधरेगी कैसे ? आज जो होना है होगा ही। बदनामी ही सही। परोसन डगमगाते पगों से किसी को पुकारने के लिए बाहर निकलने लगी। तभी—'समझे कि नहीं ?...अरे रे !...भौंक-भौंक के कान क्यों फाड़े जा रहा है...पाजी कहीं का ?...कुत्ता, कुत्ता ही रह गया....रुको भाई गाड़ी वाले ! यह तो काट खायेगा मुझे... सालों को इतना खाना मिल जाता है कि आँखों पर चर्बी बढ़ती जा रही है, समझे कि नहीं ?...अपने बाप को भी नहीं पहचानते....दीनू, चतुरिया, ठींगू !...कोई नहीं...अबे सबके सब मर गये क्या था जो भी रहा है कोई ?....' मुन्शीजी का बेढंगा ताँगा देखकर कुत्ते भौंकना बन्द नहीं कर रहे थे। बार-बार डंडे से कुत्तों को धमका रहे थे। लठैतों ने अपना-अपना दाम

सुना तो हाथ जोड़े सामने आकर खड़े हो गए ।

'सब के सब मर गये थे या कान में तेल डाल कर सो रहे थे ?...सबकी तनखवाह काट लूंगा समझे कि नहीं !' मुन्शीजी क्रोध से बिगड़ते हुए बोले ।

'माफ करो मुन्शी बाबू ! जरा झपकी लग गई थी माई-बाप !....सुनते ही भागा आया हूँ सरकार ! तुम्हारी कलम की कसम । खाली पैर उड़ता आया हूँ !'

'उड़ने की आदत बहुत बुरी है, समझे कि नहीं ?...'

'मुन्शी लाला !' तभी किसी ने चीखकर पुकारा ।

मुन्शीजी चीत्कार सुनकर नीचे से लेकर ऊपर तक सिहर उठे ! देखा उन्होंने, बरामदे में खड़ी थी परोसन !

'भाभी ! इतनी जोर से चीखती हो सबेरे-सबेरे कि आसमान ही फट जाय, समझे कि नहीं ?...जरा धीरे-धीरे ।' मुन्शीजी कहते हुए परोसन की ओर बढ़े ।

'आसमान तो फट ही गया मुन्शी लाला ! अब तो जमीन भी फटने वाली है...हाय राम-हाय सीता !' कांपने लगी थी बेचारी—'ठाकुर बेटा का हाल तो कहो कुछ, कैसा है ?...कहाँ है ?' एक ही साँस में पूछ बैठी ।

'अजीब सवाल है, समझे कि नहीं ? ...पहाडपुर में हैं...ठीक हैं और कैसे हैं ?' मुंशीजी ने सरल भाव से कहा ।

'अरे उसे तो साँप ने डँस लिया मुंशी लाला !...अभी-अभी पहुँगू आया था । वही कह गया है...रचना भी पेट-पीड़ा से बेहोश हो गयी है—घर उजड़ना चाहता है मुंशी !'

सुना मुंशीजी ने तो उनके पैरों के नीचे की जमीन भागने लगी । खड़े नहीं रह सके तो धीरे से जमीन पर बैठ गये ।

'कोई इन्तजाम करो; शहर जाकर डाक्टर बुला लाओ.... रचना की उम्मीद टूटती जा रही है...उसे बचा लो...'

'क्या बकती हो भाभी !...समझे कि नहीं ?...तुमने सपना तो नहीं देखा है...समझे कि....'

'नहीं मुन्शी लाला ! ... भीतर जाकर देखो तो...'

'अपने को सँभालो भाभी ! समझे कि नहीं....तुम्हीं होश खो बैठोगी तो रचना को कौन सहारा देगा । मैं डाक्टर लेकर अभी आता हूँ...गाड़ी वाले शहर ले चलो....अभी इसी बखत ।'

कहते-कहते तेजी से उछलकर गाड़ी पर बैठ गये मुन्शीजी ! उनकी फुर्ती देखने लायक थी इस समय ।

महुवारी से शहर करीब डेढ़ मील दूर था । गाड़ी भाग चली शहर की ओर । मुन्शीजी जोश दिलाते जा रहे थे ।

'क्या बात है सरकार !' साहस करके गाड़ीवान ने पूछा ।

'बात को मारो गोली...समझे कि नहीं ?... तुम हाँकते चलो...आँधी की तरह चलो....आँधी की तरह लौट आओ... समझे कि नहीं ?...तुम्हें ईनाम दूँगा...'

मुँह अँधेरे ही मुंशीजी शहर से डाक्टर लेकर लौटे ।

डाक्टर ने रचना को देखा । उसकी नाड़ी देखी । गति में विशेष अन्तर नहीं था । बेहोशी को दूर करने की दवा दी । चैतन्य हुई रचना तो चीख पड़ी—'भैया ।' मगर भैया की जगह मिला डाक्टर, चकित रह गई ! अगल-बगल झांका । एक तरफ मुन्शीजी मुँह लटकाये, चेहरे पर 'समझे कि नहीं' का भाव लिए, दूसरी तरफ परोसन दादी 'हाय राम-हाय सीता' की गम्भीर मुद्रा बनाये खड़े थे । रचना परिस्थिति समझ गई । सामने डाक्टर बैठा था । अब तो उसके पाप का भण्डा फूटेगा ।

'जीभ दिखाओ बेटी !' बूढ़े डाक्टर का गम्भीर स्वर था ।

'पहले भैया को देखिये डाक्टर साहब...वे मर रहे हैं... उनके बगैर मैं जी नहीं सकती ।'

'वे ठीक हैं बेटी !' डाक्टर ने झूठी तसल्ली दी ।

रचना ने अपनी जीभ बाहर निकाल दी । आँखें बन्द कर ली ! डाक्टर ने 'पाकेट टार्च' की रोशनी में निहारा तो चौंक पड़े । उनके चेहरे पर की गम्भीरता और भी गहरी हो उठी । रचना की जीभ के ऊपर चितकबरे चिन्ह बने थे ।

जीभ के बाद डाक्टर ने पेट दिखाने को कहा। रचना पशोपेश में पड़ गई। अब उसका पाप बुनिया के सामने आकर बोल उठेगा। उसने आँखें मूँद ली, निचले होठों को दाँतों के बीच दबा लिया जैसे साहस बटोर रही हो वह। डाक्टर ने पेट पर का कपड़ा हटाकर देखना प्रारम्भ किया। जीभ जैसा निशान पेट पर भी हलकी आभा लिए उगा था।

'ठीक है' कहकर डाक्टर फारिग हो गये। वे बैठक में आए। परोसन और मुन्शीजी भी वहीं थे।

'क्या बात है डाक्टर साहब ! आप साफ-साफ कह जाइए।'

'बच्ची के पेट में तो साँप है...'

'क्या ?—' मुन्शीजी और परोसन आश्चर्य से भर उठे।

'जी हाँ, उसके पेट में साँप है....पेट का आपरेशन करना पड़ेगा....नहीं तो खून खराब हो जाने का भय है—जल्दी नहीं की जायगी तो मौत !...लीजिए यह दवा कुछ फायदा करेगी...' कहकर डाक्टर चलने के लिए उठे।

परोसन दादी और मुन्शी का दिमाग चक्कर खाने लगा। पेट में साँप का बच्चा होने की घटना उनके लिए बिलकुल नवीन थी। पूर्वाकाश पर सुबह की लाली छा रही थी और इधर हवेली में अँधेरा छाता जा रहा था।

● ●

मँहगू सँपेरे को लेकर पहाड़पुर पहुँचा, किन्तु दोनों के पहुँचने के पूर्व ही गाँव के लोग सजल को सेदही ले जा चुके थे। जहाँ साँपों का विष सिर्फ छूकर ही उतार दिया जाता था। सँपेरा खुश हो रहा था कि राजा साहब की सेवा का मौका तो मिला उसे, मगर यहाँ आने पर बड़ी निराशा मिली।

'सेवा का बखत आया तो समय ही बीत गया। उस्ताद कसम बड़ा अभागा हूँ मैं !...,' बोला सँपेरा—'सेदही ले चलो भाई... मैं भी देखूँ कि बिना मन्तर पढ़े वहाँ जहर उतरता कैसे है... अगर साँस का पक्षी उड़ा नहीं होगा तो बचा लूँगा मैं...'

महेंगू का घोड़ा तीर की तरह सेदहाँ की ओर दौड़ पड़ा।

दो आदमियों का बोझ लादे घोड़े की चाल धीमी होने लगी मगर महेंगू को इसकी परवाह नहीं। शिथिल घोड़े को कोड़े मार-मार कर उत्तेजित करता रहा। इस समय घोड़े के जान की कीमत उसके समक्ष कुछ भी नहीं थी।

⊠ ⊠ ⊠

नाम तो छोटी पहाड़ी, किन्तु देखने में इतनी विशाल कि कुछ पूछना ही नहीं। दूर से देखने में आकर्षक, मनोहारी, लेकिन बड़ी भयानक, बहुत खतरनाक है। शिकार के शौकीन शिकार खेलने यहाँ बराबर आते हैं। इस पहाड़ी को दो भागों में विभाजित करती है एक नदी, जिसका उद्गम किसी को मालूम नहीं। ढाल पर काफी चौड़ी हो गई है यह चंचल सरिता। इठलाती-बलखाती नदी लाखों की प्यास बुझाती रहती है। इन्सान तो इन्सान, आस-पास की धरती भी अपनी तृष्णा बुझाते-बुझाते अघा जाती है। इसी नदी की एक भुजा पर बसा है सेदहाँ।

एक छोटी-सी रियासत। वहाँ से करीब दस मील का फासला तय करने के बाद शहर की आबादी शुरू होती है। शहर की सभ्यता धीरे-धीरे इस गाँव में अपना प्रभुत्व, अपना स्वत्व जमा रही है। इसकी दाहिनी तरफ रामगढ़ रियासत है।

चारों ओर हरे-भरे खेत हैं। दक्षिण की ओर घनी अमराई। आम की सघनता में कोयल की टीस-भरी कूक, झुकी हुई डालियों पर पड़े झूले और उस पर दीन-दुनिया की सुध बिसारे झूलते गाँव के छोकरे! खेतों में ग्रामीण युवतियाँ! और उनके कोकिल कण्ठों से निकलते हुए ये सम्मोहक स्वर—

आइल पुरवइया के लहरा,
नाचै मन का मोर रे!...

कैसा अनोखा दर्द अन्तर्निहित है इन ग्रामीण कजलियों में कि कान सुने तो दिल बिहाल हो जाय। ऐसा ही है यह सेदहाँ। यहाँ की धरती सोने की, पानी अमृत जैसा और लहराते स्वच्छ

वायु में है संजीवनी। एक बार मुर्दे भी साँस लें तो जी उठें। छोटी पहाड़ी के उस पार के जङ्गल में सँपेरों की दुनिया है; जहाँ के लोग असभ्य हैं; किन्तु मानवता से अछूते नहीं! वे सांप काटे मनुष्य को जिन्दा कर लेते हैं। हाथ के स्पर्श से नहीं, जादू-मन्तर की कठोर साधना की शक्ति से किन्तु छोटी पहाड़ी के इस पार आधुनिक ढंग से बसे सेदहाँ के लोग सांप काटे इन्सान को हाथों के स्पर्श से ही जीवित कर लेते हैं।* सेदहाँ के इस चमत्कारी उपचार के पीछे एक अनोखा इतिहास है।

सेदहाँ की गोद में सबेरा मुस्करा उठा है। रात की खुमारी लिए दूबों पर ओस की बूंदें अँगड़ाई ले रही हैं। नींद की चादर फेंककर सारा गांव जाग पड़ा है। अपने-अपने कामों में व्यस्त हो गये हैं सभी और आज तो अजीब रौनक बिखरी है सेदहाँ में।

लाल-पीली झण्डियां साज-सजावट। ठाकुर ध्रुवसिंह की हवेली तो नवेली दुलहन बन गई है सज-धज कर।

कच्ची सड़क पर पेड़ की छाया में घरौंदे से खेलते नन्हें-मुन्ने बालक चिल्लाकर एक ओर दौड़े। बड़े प्रसन्न हैं सभी। धूल भरी देह कितनी आकर्षक लग रही है।

'मोहन भैया ... वह देखो पालकी !....' छोटी-छोटी उंगलियों से एक ओर इशारा करता हुआ बोला रवि।

'कहाँ रे !...'

'उधर नहीं...उधर मोहन भैया !...तुम्हें दिखाई नहीं पड़ता....चलो न दुलहन देख आवें।' मचल पड़े सभी बालक।

'अरे, दुलहन नहीं है उसमें। कोई सांप काटा आदमी होगा बेचारा !' बोला मोहन—'देखते नहीं, खेलावन बाबा के चौरे की ओर जा रही है पालकी।'

---

*सेदहाँ शाहाबाद जिले के अन्तर्गत एक गांव है। यहां की यह कहानी मस्तिष्क की कल्पना नहीं। अब भी सांप काटे व्यक्ति का उपचार इसी विधि से होता है। विश्वास न हो तो वहां जाकर देखें ?
—लेखक

खेलावन बाबा का चौरा गाँव के किनारे वट-वृक्ष के नीचे है। वहीं पर साँप काटे इन्सान को जान मिलती है। पहले लोग आदमी को छूकर ही जिन्दा करते थे। किन्तु आजकल तो बिना छूये ही मन्दिर में बन्द कर देते हैं, फिर 'खेलावन बाबा की जय' बोलकर ठीक कर लेते हैं। इसकी भी कहानी है अजीब-सी।

'चलो न भैया !...देखें कौन है ?'

'भाग शैतान !...देखा नहीं है क्या ?...कोई आदमी ही तो होगा...हमारी ही तरह।' डाँटा मोहन ने तो सिटपिटा कर लड़के पुनः अपने घरौंदे के पास चले गये।

पालकी खेलावन बाबा के चौरे की ओर चली गई।

मोहन लौटकर पेड़ की छाया में, बैठी युवती के समीप बैठ गया। युवती गुम-सुम होकर आँसू बहा रही थी। पता नहीं कौन-सी पीड़ा काट रही थी उसे।

'देखो जी ! इतना-इतना मत रोओ...तुम्हारे आँसू मुझसे नहीं देखे जाते...कह तो दिया, जो मर जाता है फिर वापस नहीं आता...भला तुम्हारा छैला कैसे आ सकता है अब।' आठ साल का भोला मोहन बोला।

'मैं अकेली जिन्दा रहकर क्या करूँगी ? मुझे नदी में डूब मरने दो भाई !...' बोली वह युवती। उसका स्वर मार्मिक था। हवा तक सिहर उठी उसकी व्यथा सुनकर।

'चुप रहो जी, यहाँ के लोग लोगों को जिन्दा करते हैं, मारते नहीं...मरना ही था तो कलेजे में धड़कन बाँधे नदी किनारे क्यों आ लगी थी ?' नन्हें मोहन ने सवाल किया।

'मुझे तो मालूम ही नहीं कि यहाँ कैसे आई !'

'मालूम क्यों नहीं। नदी में कूदी थी तो मरने के लिए ही न ऽ ! बाबा कहते हैं जब तक भगवान की मरजी नहीं होती, मरता नहीं है कोई। विश्वास न हो तो बाबा से पूछ लेना। चलो अब ! बाबा इन्तजार करते होंगे...मौत आयेगी तो चली जाना।'

दोनों उठकर एक ओर चल पड़े। मोहन के अङ्गों पर मैले-

कुचैले देहाती ढंग के कपड़े थे, और युवती की पोशाक तो अजीब थी, छाती पर साँप की चोली और कमर में चमड़े का लहँगा।

उधर पालकी खेलावन बाबा के चौरे पर आकर रुकी। जीवन देनेवाले ग्रामीण एकत्र हो गये! पालकी का परदा हटाया गया। उसमें से एक नौजवान का खूबसूरत शरीर निकाला गया जो इस वक्त विकृत हो रहा था। चेहरा कुछ काला और गोरा-गोरा शरीर हल्दी की तरह पीला हो गया था। मुँह से झाग बह रही थी। साँप डँसे नौजवान को खेलावन बाबा के मन्दिर में डाल दिया गया। मन्दिर के भीतर कौन था, कुछ पता नहीं। बाहर से मन्दिर का दरवाजा बन्द कर दिया गया। गाँव के लोग एक स्वर से आकाश की ओर निहार कर चिल्ला उठे—'खेलावन बाबा की जय!' जयकार के उद्घोष से शून्य गगन गुञ्जरित हो उठा। दो-चार बार यही क्रिया सम्पन्न हुई। और तब—हवा का एक तीव्र झोंका आया।

थोड़ी देर बाद ही मन्दिर के भीतर से किसी ने चिल्लाकर दरवाजा खटखटाया—'खोलो।...खोलो दरवाजा!'

साँप के जहर से मृत नौजवान, जिन्दगी की साँस सँभाले सामने खड़ा था! उसका शरीर पीला नहीं था अब। चेहरे की स्याही मिट चली थी। मुँह से झाग का बहना बन्द हो गया था। यही तो था सेंदही का दैवी चमत्कार। उसी समय कोई घुड़सवार आँधी की तेजी से आया वहाँ। कूद पड़ा घोड़े से और दौड़ा नौजवान की ओर—पता नहीं क्यों? सभी चकित थे!

× × ×

महँगू का घोड़ा तीर की तरह सरपट भागा जा रहा था। अब वह सेंदही के इलाके में प्रविष्ट हो चुका था। खेत-खलिहान रौंदता महँगू का घोड़ा दौड़ रहा था बेतहाशा। दौड़ते-दौड़ते घोड़ा कच्ची सड़क पर आ गया जो रमजानपुर की ओर गई थी।

सामने से दो व्यक्ति आपस में बात करते जा रहे थे। एक था आठ साल का बच्चा और दूसरी थी युवती। दोनों बातें करते

में इतने तल्लीन थे कि पीछे से आते घोड़े की सुध भी नहीं थी।

'यह तो अजीब बात है। लोग कैसे ठीक कर लेते हैं साँप डँसे आदमी को ...मन्तर भी तो नहीं पढ़ते !' युवती थी।

'तुम क्या जानो ?...बाबा कहते हैं, खेलावन बाबा भगवान हैं...उनकी महिमा अपार है....' बालक था।

'खेलावन बाबा थे कौन ?'

'भगवान थे ...विश्वास न हो तो बाबा से पूछ कर देखो।'

युवती बालक की ऊँगली थामे उसके भोले चेहरे को देख रही थी और बालक कौतूहल से उसे देख रहा था।

दोनों बातें करने में भूले थे। उधर महँगू का घोड़ा आ रहा था पीछे से। महँगू अन्धा बनकर घोड़ा दौड़ा रहा था। उसे सिर्फ दिखाई पड़ रही थी सजल की मौत। अपने मालिक की जिन्दगी के लिए परेशान था वह। रास्ते में कौन मरता है कौन जीता है, उसे फिकर नहीं। यहाँ तक कि अपनी सुध भी नहीं थी उसे। घोड़ा बिलकुल करीब आ गया था दोनों के।

'अरे, मोहन का बच्चा ! जान भारी हो गई है क्या तेरी....भाग-भाग, पीछे घोड़ा आ रहा है...कैसा अन्धा सवार है...' खेत में काम करती किसी महिला ने चीखकर कहा।

सुना मोहन ने तो सजग हो उठा। फिर कर देखा उसने; घोड़ा सर पर आ गया था। उसका दिमाग चकरा गया आकस्मिक विपत्ति देखकर। वह युवती से लिपट गया भय के मारे। किधर भागे, किधर नहीं भागे; शीघ्रता से युवती भी नहीं समझ सकी और घोड़ा आगे निकल गया।

दोनों के मुख से चीख निकल पड़ी। घोड़ा दोनों को ढकेलता आगे बढ़ गया। खेत की मजदूरिन दोनों के पास दौड़ी गई।

महँगू के पीछे बैठा सँपेरा चीख की आवाज सुनकर सजग हो गया। उसने पीछे मुड़कर देखा और उसके मुँह से निकला—

'महँगू, घोड़ा रोक दो...गजब हो गया।'

'गजब हो गया है तभी तो घोड़ा दौड़ा रहा हूँ....चुपचाप

बैठे रहो...हवा रुक सकती है, घोड़ा नहीं रुक सकता ...'

'तुम्हारे घोड़े ने जान ले ली; खून हो गया महँगू भाई !'

खैर ! जो हो गया सो हो गया मगर रुक नहीं सकता वह... और घोड़े की चाल कम नहीं हो सकती। घोड़ा रुका तो खेलावन बाबा के चौरे पर ही आकर। घोड़े पर से उतरा महँगू।

महँगू ठीक उसी समय पहुँचा था वहाँ जब मन्दिर का दरवाजा खोला था लोगों ने और मौत की नींद त्याग कर सजल ने जीवन की आँखों से बाहर झाँका था। उसने मालिक को बरकरार देखकर महँगू की खुशी आसमान चूमने लगी।

कुछ क्रोधित उत्तेजित भीड़ वहाँ आई। वे लोग बोले—'यही है वह घुड़सवार !....क्यों जी, घोड़े पर चढ़कर अन्धे हो गए थे क्या ? या आसमान पर उड़ने लगे थे ?...कभी तुम्हारे बाप ने भी सवारी की थी या तुम्हीं कर रहे हो ?—इधर देखो तो जरा।'

जरा-सा ही तो देखा महँगू ने उधर। किन्तु देखने के बाद उसकी जान सूख गई। खून पानी होने लगा। मोहन के साथ वाली युवती थी वह। सर से खून बह रहा था उसके।

'चमकी !' जब सँपेरे की निगाह उस पर पड़ी तो चीख पड़ा वह। आगे बढ़कर युवती को बाहुओं में बाँध लिया—'क्या मेरी आँखें सपना देख रही हैं। यह क्या देख रहा हूँ मैं।'

चमकी ही थी वह। मगर सँपेरे को यकीन नहीं हो रहा था। चमकी को तो साँप ने डंस लिया था। चिकोरा ने उसे नदी में बहा दिया था। पुकार सुनकर युवती की आँखें खुल गईं ! उसने सँपेरे को देखा तो देखती रह गई। कुछ देर तक पहचानने के पश्चात् होंठों से बोल फूटे—'छबीले भैया !'

छबीले ही था वह सँपेरा। चिकोरा का शागिर्द।

दोनों एक-दूसरे के गले मिलकर सिसकने लगे। अपने छोटे से जीवन की लम्बी कहानी एक-दूसरे की ओर देख-देखकर सुनाने लगे। दोनों की जबान चुप थी किन्तु आँखें बोल रही थीं।

'छबीले ?' चमकी के होंठ फड़के।

'चमकी !...मेरी बहन...य क्या देख रही हैं मेरी आँखें.... कहाँ भयानक साँप के विष से मरी चमकी ! कहाँ जिन्दगी लेकर हंसती तुम ?...मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा है...उस्ताद कसम ! बताओ जल्दी...नहीं तो पागल हो जाऊँगा मैं !'

'तुम ठीक देख रहे हो छबीले भैया !... तुम्हारे सामने वही चमकी है...यह गाँव जिन्दगी देता है...नहीं जानते ?'

'हाँ चमकी !...देख न राजा साहब को।' कहकर सजल की ओर देखा छबीले ने।

चमकी की नजर भी उधर उठी—'अरे !' चौंक पड़ी वह। आज क्या-क्या देखने को मिल रहा है उसे। यह तो वही है, ठीक वही शहरी छैला ! उसकी आँखों का सपना।

'छैला !...मेरे बाबू !...' कहकर चमकी सजल की ओर दौड़ी। दौड़कर उसने अपना सर उसके पावों पर पटक दिया।

आस-पास खड़े ग्रामीण भी आश्चर्यचकित से दोनों का मिलन देखते रहे। महँगू भी काठ बनकर विस्फारित नयनों से देखता रहा। माजरा किसी की समझ में नहीं आया।

चमकी विभोर थी और उसका छैला चकित। चमकी के हृदय में मिलन की आग जल रही थी। उसकी आँखों के आँसू बह-बहकर चिर-वियोग के घावों पर मरहम लगा रहे थे।

अमराई के झुरमुट से दर्दीली आवाज उठकर खुले आकाश की छाती में वेदना-रस घोल रहा थी—

> नीचे उठत रे लपट अगिन की,
> ऊपर बदर की छइयाँ !...
> रे बेदरदी सइयाँ !

● ●

सजल ठाकुर को जब देखा चमकी ने तो उसे जिन्दगी मिल गई। मगर लोगों ने जब बताया उसे कि वह 'वह' नहीं है, जो वह समझ रही है तो उसके दिल के अरमान एक ही ठोकर से धूल-धूसरित हो गये। वह आकाश में उड़ती पतंग की तरह

अभिलाषा लिए मंडरा रही थी, किन्तु बीच ही में डोर टूट गई और लड़खड़ा कर जमीन पर आ रही। कितनी अभागिन है चमकी। जब-जब उसने अपने छैला को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया, तब-तब प्यार की अभिलाषिनी नारी के करों में खार ही चुभे। कलेजे पर पत्थर रखकर उसने एक बार फिर निहारा सजल की ओर, और देखती रह गई। भींगी भींगी आँखों में वेदना के आँसू भरे, उसने पहचाना। वह सचमुच वह नहीं था मगर था उसी का प्रतिरूप। भगवान भी मजाक उड़ाने के लिए कभी-कभी कैसा निर्माण कर देता है।

'मुझे माफ करना बाबू !....मेरी आँखें अन्धी हैं...और अन्धी आँखें अंधेरा ही देखती हैं हमेशा...मुझे धोखा हुआ सरकार! एक मुद्दत से धोखा ही खाती रही हूँ।'

और सजल समझ नहीं पा रहा था, आखिर यह सब हो क्यों रहा है? वह आश्चर्य से भरे नयनों से सबको बारी-बारी से देख रहा था। उसके चकित नयनों में प्रश्न डोल रहे थे।

अपने को नई जगह में पाकर तो ऐसे ही ज्ञान खो बैठा था।

'कौन है यह लड़की !' उसने सामने खड़े महँगू से पूछा।

'यह मेरी बहन है हजूर !...इसकी गुस्ताखी माफ करें....' सँपेरा बोल उठा—'आओ चमकी !...इधर आओ ?'

चमकी छबीले के समीप जाकर खड़ी हो गई।

छैला नहीं मिला उसे मगर छबीले तो मिल गया। दूर देश में अपना दुश्मन भी मित्र बन जाता है। कम से कम छबीले उसको सहानुभूति तो देगा ही। उसी समय भीड़ चीरकर एक व्यक्ति आया और बोला—'ठाकुर साहब ! आपको राजा साहब याद फरमा रहे हैं...' कोई लठैत था वह।

राजा साहब से उसका मतलब सेदही के स्वत्वाधिकारी ठाकुर ध्रुव सिंह से था। राजा साहब को जब महुवारी के ठाकुर सजल के आने की खबर मिली तो उन्होंने सत्कार करना उचित समझा। सजल थोड़ी ही देर बाद ध्रुव सिंह के सामने था। राजा साहब

के रोबीले व्यक्तित्व से वह बहुत प्रभावित हुआ।

ठाकुर ध्रुवसिंह की वर्षगांठ थी आज। गाँव की रियाया तारों के समूह की तरह हवेली में छाई थी। शहर के भी विशिष्ट पधारे थे, सहृदय ठाकुर साहब की लम्बी जिन्दगी की शुभकामना के साथ। लोग उठ-उठकर ठाकुर साहब की अभ्यर्थना कर रहे थे। सजल भी भेंट करने उठा; किन्तु खाली हाथ ही—

'बड़े राजा! आपके पैरों की धूल हूं मैं तो...आपके गाँव में मुझे जिन्दगी मिली है। आप महान हैं और आपका गाँव भी।'

कहकर सजल ठाकुर ध्रुवसिंह के पैरों पर झुक पड़ा। बीच ही में ठाकुर साहब ने पकड़कर सजल को हृदय से लगा लिया।

सजल धन्य हो उठा। सूरज पहाड़ी के उस पार उतरने लगा। चारों ओर धुंधलका छा गया। हवेली में गैस जल उठे। तीव्र प्रकाश से हवेली आलोकित हो उठी। कुछ मेहमान तो शाम की ठण्डी हवा खाने और ग्रामीण दृश्यों का अवलोकन करते निकल पड़े, मगर सजल नहीं गया। वह ठाकुर साहब और अन्य मेहमानों के पास ही बैठा रहा। सजल के बगल में एक नौजवान बैठा था। व्यक्तित्व आकर्षक एवं प्रभावशाली था।

'आपका परिचय जान सकता हूं?' सजल ने पूछा।

'इन्हें नहीं जानते, ये हैं रामगढ़ रियासत के छोटे कुंवर चंचल, अचलजी के अनुज—वे अस्वस्थ हैं...अजगर के पेट में चले गये थे और फिर वापस आ गये—इनके पिता से खूब पटती थी मेरी।' ठाकुर साहब बीच ही में बोल उठे।

'यही बात सँपेरा भी कह रहा था।' सजल ने कहा।

'सँपेरा कौन...कैसी बात?' चञ्चल उत्सुक हो उठा।

'यही कि उसके गाँव का कोई टिकोरा अजगर ले आया था...उसके पेट से एक परदेसी निकला, आदि-आदि।...जाने दीजिए...मुझे उसकी बातों पर पहले विश्वास नहीं हुआ, किन्तु आपके भाई ही परदेसी हैं जानकर आश्चर्य हो रहा है।'

'कहाँ है वह सँपेरा!...मैं उससे मिलना चाहता हूं।'

'वह तो मेरे गाँव चला गया ! ...' कहा सजल ने और उसने संपेरिन लड़की के बारे में भी बताया ।

लड़की के बारे में सुनकर चञ्चल सोचने लगा—कहीं मैना ही तो नहीं है वह लड़की, तभी तो परदेसी छैला कहकर सजल के पैरों से लिपट गई थी । तो क्या टिकोरा ने मैना को जिन्दा कर लिया वेदही लाकर ।

'उस लड़की का नाम क्या है ?'

'नाम तो याद नहीं आ रहा है मुझे । संपेरा कह रहा था, वह उसकी बहन है । शायद वह भी उसके साथ ही गाँव गई ।'

'मैं उससे मिलूँगा; कब चल रहे हैं आप ?'

'कल सुबह ।'

'ठीक है ...मैं भी चलूँगा, आपको कोई एतराज तो...'

'एतराज ...मेरे लिए तो सौभाग्य की बात होगी ।'

एक लठैत आया और उसने ठाकुर साहब के हाथ में एक चिट्ठी थमा दी । लिफाफे पर लिखा था—'चञ्चल' !

ठाकुर साहब ने वह खत चञ्चल को दे दिया । व्यग्रता के साथ उसने वह खत खोलकर पढ़ा ।

चंचल !

तुम्हारे भैया की हालत नाजुक है । किन्तु घबड़ाने की बात नहीं । शीघ्र आ सको तो उत्तम...

तुम्हारी—भाभी

'बाबूजी !' चञ्चल ने ठाकुर साहब को सम्बोधित कर कहा-'मैं जाऊँगा अभी ...भैया की तबीयत ठीक नहीं है ..' चञ्चल के स्वर में गम्भीरता थी, मगर अन्तर में थी हलचल ।

पत्र ठाकुर साहब के हाथों में दे दिया उसने ।

चञ्चल रात को ही जाने के लिए तैयार हो गया । रास्ते की भयानकता उसके लिए अवरोध नहीं बन सकी । अपने जीवन की महत्ता उसके लिए कुछ नहीं । उसे अपने भाई की जिन्दगी अधिक मूल्यवान प्रतीत हो रही थी इस समय । रात के अँधेरे में चञ्चल

भारी मन लिए रामगढ़ की ओर चल पड़ा। मोटर भाग रही थी। पहाड़ी और खतरनाक रास्ते से गुजर रही थी मोटर। जरा भी चूकने पर मौत! लेकिन चञ्चल के आगे मौत का नहीं कुँवर की जिन्दगी को सवाल था और उधर सजल, ठाकुर ध्रुवसिंह से बातें करने में विभोर था। वह जीवन देनेवाले गाँव के विषय में विस्तृत जानकारी हासिल करना चाहता था।

जब सजल ने वहाँ के इस दैवी चमत्कार के इतिहास के बारे में पूछा तो ठाकुर साहब बोले—'इसके पीछे एक अनोखी कहानी है बेटा!...बड़ी दर्दीली—आँसु से लबरेज...उस वक्त मेरा जन्म भी नहीं हुआ था...इस गाँव के एक किनारे....'

• •

पूर्व की ओर एक पुराने ढङ्ग का खपरैल। ईंट-पत्थरों के जोड़ पर खड़ी, खून-पसीने के त्याग एवं अभाव के दुलार से निर्मित—मकान के भीतर एक परिवार रो-गाकर जीवन यापन करता था। पेट के लिए मेहनत करने वाले चार भाई।

तीन की शादी हो चुकी थी। फूल जैसे बच्चे और सुशील पत्नियाँ...सबसे छोटे की शादी अभी नहीं हुई थी। छोटे भाई का नाम था खेलावन! बीस-बाइस का हीरा जवान! बदन गठीला! कसरत की कसौटी पर कसे अंग। होठों पर भिनती मूँछें, जवानी की परिचायक। आँखों में लाल-लाल डोरे। आँखें दिन में नई चमक देखतीं और रात को नींद में मादक सपने।

साल भर बाद खेलावन की शादी हो गई। शहनाई बजी। खेलावन रात दिन अपने मन में एक मीठी हलचल लिए सुहाग-रात का इन्तजार करने लगा। उसकी साध पूरी हुई किन्तु अर-मान अधूरे रह गये। जीवन का यह नया मोड़ उसे उमंगों से भरा मालूम पड़ा। किसी काम में उसका जी नहीं लगता। सिर्फ पत्नी से बातें करने में, उसके सम्पर्क की मादकता लूटने में असीम आनन्द की अनुभूति होती।

रोज अपने भाइयों के साथ खेत पर जाता। पर उसका मन

पङ्ख लगाकर कहीं और उड़ता रहता, हाथ कहीं और चलते। कोयल की कूँक, पपीहे की पुकार, बाँसुरी का स्वर, चिड़ियों की चहक, पेड़ की ठण्डी छाँव, अन्न के दाने, पानी के कतरे और चञ्चल नदी की शोख लहरों में एक अजीब आकर्षण, विचित्र परिवर्तन दीखने लगा था उसे। पूरा दिन तड़पन की ज्वाला में जलते बीत जाता। शाम आती और घर पहुँच जाता; तब कहीं उसके बेताब दिल को करार हासिल होता। उसकी कुछ बोलती निगाहों को राहत मिलती।

घर जाने पर उसकी आँखों को झलक तो मिल ही जाती, लेकिन घर के बड़ों के सामने जुबान कुछ नहीं कह पाती। संकोच की अर्गला होठों पर लगी रहती। जवानी की रातें उसे बहुत छोटी लगतीं। प्रत्येक दिन उसे आगामी रात की प्रतीक्षा रहती। उधर खेलावन के खेत में मकई और बाजरे के पौधे जवान होने लगे और इधर उसके मन की साध भी अँगड़ाई लेने लगी। वह रोज रात में खेत के मचान पर जाकर सोता लेकिन जागकर करवटें बदलता रहता। उसकी बेचैनी बढ़ती जाती और इस तरह सबेरा हो जाता।

उसके भाई उसकी मजबूरी पर ध्यान नहीं देते। पता नहीं वे कभी जवान हुए थे या नहीं। उनके मन में हिलोरें उठती थीं या नहीं। अगर उठती थीं तो घायल की गति घायल क्यों नहीं जानता? उसे अपने भाइयों पर क्रोध आता, किन्तु विवश होकर रह जाता। मगर आज वह विद्रोह करेगा। रात को खेत न जाने पर तुल गया वह। शाम हुई और फिर रात!!

'खेलावन ?' बड़े भाई की आवाज थी।

'भैया !' गम्भीर स्वर में वेदना का सम्मिश्रण था।

'चलो खेत पर ?'

'भैया !' आगे कुछ नहीं कह सका वह। उसके मन की साध मन ही में रह गई। साहस नहीं कर सका खेलावन कि कुछ कहे। कुछ कहकर उदण्ड बनना नहीं चाहता था। मन मारे पीछे-पीछे

चल पड़ा। एक ओर भाई के आदर का प्रश्न था, दूसरी ओर दिल की आवाज थी। द्वन्द्व मच रहा था उसके मन में।

'भैया! सिर में दर्द हो रहा है।' हिम्मत कर कहा उसने।

'चल-चल! भरी जवानी माझा ढील ... बहाना बनाता है। हम भी जवान थे। मगर सर में दर्द तो कभी नहीं हुआ....यह दिल का दर्द है....यह सब ठीक नहीं। अभी बच्चे हो तुम।'

खेलावन का अनुरोध भी अस्वीकृत हो गया। मूक, पीछे-पीछे चलता रहा वह। कुछ ही दूर चलने पर चीख पड़ा खेलावन। पैर पकड़ कर बैठ गया वहीं जमीन पर।

'भैया! किसी कीड़े ने काट लिया मुझे!' खेलावन बोला।

'चल-चल, समझता हूँ तेरी चालबाजी....कहाँ सोना चाहता है!....मैंने कहा न, बुरी बात है यह सब।' बड़े भाई ने डाँटा।

फिर कुछ बोला नहीं खेलावन। विक्षुब्ध होकर मन में पीर की कसक और तीर की चुभन लिए चुपचाप मचान पर जाकर सो रहा। उसका बड़ा भाई खेत के दूसरी ओर मचान पर खर्राटे भरने लगा। तभी किसी कोने से देहाती तराने की स्वर-लहरी वातावरण में एक मदहोशी घोल गई।

घेरि-घेरि आवे घटा घोर मन मोर नाचे!
रसे-रसे बहेला बयार!
बिछुआ तऽ मारे रामा अँगुरी के पोरवा!
रग-रग टीसेला हमार!

हवा सिहर उठी। सियारों के स्वर ने ताल दिया उसमें। खेलावन ने सुना, सुनता रहा—न जाने कब तक।

ओस चाट-चाट कर रात की रानी जवान हो रही थी। ठंडी-ठंडी हवा के हल्के झोंके खेलावन को लू जैसे लग रहे थे। दिन को जगाकर रात सो गई। अभी कुछ-कुछ ही उजाला हुआ था। नीचे से खेलावन को किसी ने पुकारा। खेलावन ने उत्तर नहीं दिया। वह सोया था दिल में आग लेकर। किसी के प्रश्न का उत्तर नहीं देना चाहता वह। समस्या तो उसकी जटिल थी। जो

अपना हल नहीं पा सकता, दूसरे का समाधान कैसे कर सकता है।

'अरे ओ खेलावन !...रात भर सोया, नींद नहीं पूरी हुई क्या !...खेलावन !' शायद खेलावन के बड़े भाई ही थे।

जवानी की नींद तो हिमालय की तरह होती है; भला क्यों डिगने लगी। खेलावन जागा नहीं तो उसका भाई मचान पर चढ़ा। हाथ से हिलाया-डुलाया। फिर भी नहीं जगा वह।

'खेलावन !' कहते-कहते जब बड़े भाई ने उसके चेहरे की ओर देखा तो चौंक पड़ा।

देखा—खेलावन के मुँह से सफेद-सफेद साबुन के फेन की तरह कोई चीज निकल कर बह चली थी। चेहरा विकृत, शरीर स्याह और आँखें पथराई थीं। बड़े भाई का दिल धड़का।

मचान से उतारने पर पता चला कि साँप ने डँस लिया है उसे। रात की घटना ख्याल आई बड़े भाई को। सर पर हाथ रखकर रह गया वह। रो उठा सारा परिवार। नवेली दुल्हन की माँग का सुहाग आकस्मिक विपत्ति ने पोंछ दिया, गोरी-गोरी कलाइयों में खनक पैदा करनेवाली चूड़ियाँ टूटकर बिखर पड़ीं।

कितनी बड़ी भूल की थी बड़े भाई ने। लेकिन अब क्या था। खाली पिंजड़ा ही तो था। कहने-सुनने के लिए कहानी ही तो रह गई थी। भोली नारी के पैरों का महावर अभी तक चमक रहा था। किन्तु माँग का सिन्दूर गर्दिश में उड़ चुका था।

दिन बीत चले। घर वाले भूल गये खेलावन को किन्तु भोली नारी पति की याद में घुलती रही। घुलते-घुलते बिलकुल घुल गई ! एक दिन बीमार पड़ी वह ? दो-चार दिन बुखार आया। पति के वियोग में जलने वाली नारी एक दिन सबको मोह-माया त्याग चिता पर जाकर सो गई। धरती का आधार पाकर जो आपस में मिल न सके, वही निराधार आकाश में एक हो गये।

महीने भर बाद ! एक रात गाँव के किसी व्यक्ति को स्वप्न हुआ। उसने सपने में खेलावन को देखा, उससे बातें की।

खेलावन ने कहा—'मैं साँप के जहर से मर गया लेकिन

आज दुनिया का कोई भी विषैला साँप किसी को भी क्षति नहीं पहुंचा सकता। साँप ने मुझे डंसा, अब मैं साँप का दुश्मन बन गया हूं। जाओ तुम, ठाकुर साहब की गोशाला में; गाय को करैत ने डंस लिया है, मैं जैसे बताता हूं करना, अभी जाओ।'

और तब वह उठा जाने के लिए तो उसकी नींद खुल गई। अपनी मूर्खता पर उसे हँसी आई! रात के अँधेरे में खेलावन की बात उसके कानों में गूंजती रही। आँखें बन्द कर फिर सो गया वह। अभी झपकी ही आई थी कि हवा का तीव्र झोंका आया, उठँगे दरवाजे खुल गये, किसी छाया ने प्रवेश किया। छाया सोये व्यक्ति के सिरहाने आकर खड़ी हो गई। उसके हाथ उठे और एक चपत! चीखकर जाग उठा वह, अपना गाल सहलाता हुआ। लालटेन जलाई उसने। इधर-उधर देखा, लेकिन कोई हो तो दीख पड़े। सोचा सपने में सब कुछ हुआ है। फिर सो गया। फिर वही घटना। वह जाग पड़ा। उसे लगा जैसे कोई जबरदस्ती गोशाले की ओर खींचे लिए जा रहा हो।

खेलावन की आवाज अब तक उसके कानों में गूंज रही थी।

अव्यक्त शक्ति की प्रेरणा के वशीभूत होकर वह पहुँचा गोशाले में। उसने जो देखा चकित रह गया। चार-पाँच ग्वाले खड़े थे। गाय जमीन पर हुंकारी भर-भर कर तड़प रही थी।

सपना उसे सत्य के रूप में मिला। सपने में बताई विधि द्वारा गाय का उपचार करने लगा वह। उसकी विचित्र अवस्था हो रही थी। लगता था जैसे उसके मन में बैठा कोई आदेश दे रहा हो वैसा करने के लिए। वह अर्द्धविक्षिप्त-सा हो उठा था। गाय के निकट पहुँचा और चिल्लाया—'खेलावन बाबा की जय!'

उसके हाथ ऊपर उठे और तड़ाक!... गाय के जिस अङ्ग में साँप ने डँसा था उसी जगह पर उसका हाथ दो-तीन बार गिरा। वह धीरे-धीरे बेहोश होने लगा, छटपटाने लगा ठीक गाय की तरह, लेकिन गाय ठीक होने लगी। गाय का जहर उस पर चढ़ने लगा था। लोग-विस्मय-विभोर होकर देख रहे थे सब कुछ।

'पानी !...' उसके मुख से निकला।

पानी आया। पीने लगा वह और पी गया पूरी बाल्टी। तब कहीं उसकी छटपटाहट शान्त हुई। धीरे-धीरे स्वस्थ हो गया वह।

'उसी दिन से यह गांव जीवन देने लगा... गांव का प्रत्येक व्यक्ति खेलावन बाबा को बुलाकर सांप का विष उतारने में सफल होने लगा।' करुण स्वर में बोले ठाकुर ध्रुवसिंह—'मगर अफसोस खेलावन बाबा के खानदान में से अगर कोई पुकारता है तो नहीं आते ...उन्हें अपने परिवार से नफरत है। वह तो घर ही बरबाद हो गया है। जिस घर का दीया ही बुझ गया, वहां अंधेरा न होगा तो और क्या होगा...इसके आगे भी कहानी है बेटा !....तुम्हें नींद तो नहीं आ रही है ?'

'नहीं...यहां के लोग मौत की नींद तोड़ सकते हैं....यह तो रात की नींद है...आप आगे कहिए !' सजल तकिये को कुहनी के नीचे दबाकर सुनने के लिए उत्सुक हो उठा।

'जहां पर आजकल खेलावन बाबा का मन्दिर बना है वहीं पर स्वप्न देखने वाले व्यक्ति का घर था। समय के साथ-साथ उसका निशान मिट गया और उसकी जगह बरगद का पेड़ निकल आया। लोग उसे 'चौरा' कहने लगे। यह नाम कैसे पड़ा—पता नहीं....बरगद की जड़ों पर अनन्त चतुर्दशी के रोज एक आदमी बैठा था। किसी राही ने उससे आकर पूछा—

× × ×

'यह कौन गांव है भाई !'

'सेवही !' सुनकर परदेसी बैठ गया; बरगद की छांव में सुस्ताने के लिए।

'क्या नाम है तुम्हारा ?' परदेसी ने पूछा !

'खेलावन।' खेतों की ओर देखता हुआ बोला वह व्यक्ति।

कुछ देर तक दोनों में बातें होती रहीं, फिर उठकर चल पड़े गांव की ओर। पगडण्डी पर चलते-चलते परदेसी ने फिर पूछा—

'क्या नाम बताया था भाई तुमने ?'

'भिखारी !'

'अजी, वहाँ तो कुछ और बताया था तुमने ?'

'तुम्हें याद नहीं होगा...'

राही उसे पागल समझ बैठा।

× × ×

'उसी दिन से लोगों को यह पता लगा कि जो अनन्त चतुर्दशी के रोज बरगद की जड़ पर बैठता है उसमें खेलावन बाबा की आत्मा प्रवेश कर जाती है...उसे लोग खेलावन बाबा ही सम्बोधित करके कोई प्रश्न करते हैं, सभी प्रश्नों का उचित उत्तर देते हैं वे। आज भी यह घटना पूर्ववत् होती है...शंका की तनिक भी गुञ्जाइश नहीं इसमें...'

'अगर किसी को, जो विदेश में हो, साँप काट ले तो खेलावन बाबा बुलाने पर वहाँ पहुँच जायेंगे ?' सजल बोला।

'अवश्य ! वे कहते हैं, मेरी गति मन की तरह है लेकिन पुकारने वाला सेदहाँ का ही होना चाहिए।' ठाकुर साहब ने कहा।

'इस विधि से तो काफी धन एकत्र किया जा सकता है।'

'नहीं...खेलावन बाबा का आदेश है, जिस दिन इस भलाई की खातिर एक पैसा भी किसी ने लिया, उसी दिन वे गाँव छोड़ कर चले जायेंगे वे...इसी भय की वजह से तो उन्होंने मन्दिर बनवाने की आज्ञा दी। अब तो मन्दिर के भीतर आदमी बन्द करते ही स्वस्थ हो जाता है...अन्दर शेषनाग की प्रतिमा रखी है।'

'यह तो मुझे मालूम है जब मैं होश में आया तो मुझे लगा कि मेरे साथ कोठरी में कोई और है...शायद उन्हीं की पवित्र आत्मा रही होगी...' सजल ने कहा।

'हो सकता है !' ठाकुर साहब ने कहा—'यही इतिहास है इस दैवी चमत्कार का...कल्पना से भी अधिक आश्चर्यमय है यह, पर है सत्य...अब सो जाओ, रात काफी बीत गई।'

लेकिन सजल को नींद नहीं आई उस रात। कभी खेलावन बाबा की बात को, कभी चमकी के बारे में और कभी घर पर

रचना के लिए व्यग्र हो उठता। थोड़ी देर के लिए आँख झपकी भी तो पलकों की छाया में विचित्र-विचित्र सपने जाग पड़े।

दूसरे दिन अचल पहुवारी के लिए रवाना हुआ।

● ●

रानी साहिबा ठीक हो गई हैं। चञ्चल भी सिदहाँ चला गया है। किन्तु अचल बीमार है। उसकी हालत दिनोंदिन बदतर होती जा रही है। आजकल कुँवर बुखार एवं मानसिक व्यथा से पीड़ित है। मैना की याद, माँ की बीमारी के पीछे रात-रात भर का जागरण और उपवास ने उसे मरीज बना दिया है।

अचल के चेहरे पर अजीब किस्म का रंग चढ़ रहा है आजकल। हमेशा सर में पीड़ा और दिल में बेचैनी छाई रहती है। उदास-उदास आँखें किसी को खोजती रहती हैं। किसी से अधिक बोलना नहीं सुहाता है उसे; इसलिए बेचैन पड़ा रहता है। कभी हँसता भी नहीं, मानो दुनिया की सारी खुशी, सारी रंगीनी उसकी दृष्टि में गुनाह हो। कविता हमेशा कुँवर के पास बनी रहती है। उससे भी प्रेम की बातें नहीं करता वह। हरदम विक्षिप्त होकर कुछ सोचता रहता है। आँखें खुलती हैं, मगर कविता को नहीं देखतीं; देखती हैं तो सिर्फ छत। कुँवरानी पति का यह व्यवहार देखकर विचलित हो उठती है। पर अपने हृदय की व्यथा को होठों से बाहर नहीं निकलने देती। मूक साधना में रत कुँवर के अधर कभी हिलते हैं; जबान किसी को पुकारती भी है, किन्तु जो वाणी निकलती है, उसमें कुँवरानी कविता नाम नहीं रहता। रहता है तो सिर्फ मैना का।

मानसिक अवस्था ठीक न होने के कारण वह कभी-कभी झुँझला पड़ता है, क्रोधित हो उठता है। यहाँ तक कि वफादार वारिस भी उसके क्रोध का शिकार हो जाता है, क्योंकि वह हमेशा उसकी खिदमत में हाजिर रहता है। कुँवर एकान्त का अभिलाषी है, पर लोग उसे तनहाई में छोड़ते नहीं।

उसके अन्तर को कहीं राहत मिलती है तो सिर्फ मैना के

स्मारक के पास। वह स्मारक के पास बैठता है...बैठा रहता है। खुली-खुली आँखों में वेदना के कुछ आंसू लिए निहारता रहता है। अपार दौलत के अधिपति को भी दुःख हो सकता है; कोई समझ नहीं पाता। यह तो सिर्फ कविता समझती है और समझते हैं डाक्टर दास ! और कुछ-कुछ वारिस भी। वही लोग तो हमेशा अचल की गतिविधि पर निगाह रखते हैं। रानी माँ भी जानती हैं किन्तु कहती कुछ नहीं।

कोई अचल की बीमारी की दवा नहीं ला सकता। कविता भी पड़ी-पड़ी अपने पति की पीड़ा देखती रहती है। जीवन में पति के दुःख-सुख की भागिनी नारी अपने पति के दुःख में भी हाथ नहीं बँटा पाती है। कोई नहीं जानता कि कुँवर का डग-मगाता उदित जीवन कब लड़खड़ा कर अस्त हो जायगा।

अचल की बीमारी बढ़ती जा रही है।

रात हो गई है। बाहर ठण्डी हवा सनसना रही है। कुँवर को बेखबर नींद में लीन देख रही है कविता। देख रही है कि कुछ ही दिनों में कैसा हो गया है कुँवर। गुलाब जैसे चेहरे पर हल्दी जैसा पीलापन छितरा गया है। कविता की वेदना बढ़ने लगी है। उसकी आँखें रोने को आतुर हो उठी हैं।

जब कभी कविता कुछ पूछती है तो अचल जवाब नहीं देता। कभी-कभी अन्तर की पीड़ा कसक जाती है तो पति की खामोशी से प्रताड़ित नारी, महल के किसी कोने में जाकर दो-चार आँसू बहा लेती है। कुँवर सोया है अभी। कविता उठकर बाहर आ गयी है। इधर-उधर देखकर अपने दुख को दूर करना चाहती है। चबूतरे पर बैठकर फाटक की ओर देखने लगी है। लोहे के फाटक पर चढ़कर ललित झूल रहा है। अपने बच्चे के साथ गुलनार भी वहीं है। कविता आजकल छोटे ललित को भी प्यार नहीं कर पाती। ललित भी आजकल उसकी ओर आक-र्षित नहीं होता। अब तो काफी बड़ा हो गया है। कुछ सोचने की शक्ति भी आ गई है। अपनी ओर से माँ को विराग देख

उसने भी मुख मोड़ लिया है। वह तो बच्चा है, माँ की ममता न सही; किसी और के प्यार से ही सन्तुष्ट हो जाता है। अधिकतर रावी माँ के पास ही बना रहता है। रावी माँ भी पड़ी-पड़ी अपना वक्त काट लेती हैं।

कविता ही कभी-कभी ललित के लिए लालायित हो उठती है। फाटक से खेलते ललित पर उसकी दृष्टि पड़ी तो उसका कुछ दुःख दूर हो गया। ललित को बुलाया कविता ने। वह नहीं आया। कविता खुद उसके पास चली। ललित भाग चला।

'देखो...आगे पत्थर है...तेज मत भागो बेटा !...नहीं तो चोट लग जायगी।'

लेकिन ललित धुन का पक्का है। बोलता है—'पहले पकलो तो छही।' उसकी तुतलाने की आदत अभी भी बनी है। सामने से कोई नवीन निहारता आ रहा है और ललित भी बेखबर है। वह नहीं चाहता कि रुककर माँ की पकड़ में आ जाय।

भागता ललित थोड़ी ही दूर आगे बढ़ा था कि आने वाले व्यक्ति से टकरा गया। कविता घबड़ा उठी। मगर गिरा नहीं ललित। वह आने वाले व्यक्ति के पैरों से लिपट गया। बोला—'आन्टी ! हमको बचाओ।' दौड़ने के कारण हाँफ रहा था वह।

'जरूर बचायेगा' कहते-कहते उसकी नजर कविता पर पड़ी।

'एनी ! इसने मुझे थका डाला।' कविता पास आकर बोली।

एनी ही थी वह। ललित एनी को आन्टी ही कहा करता है। एनी अधिकतर महल में ही रहती अब। कभी-कभी अपने घर चली जाती है। चम्पा से जुदा होने की तमन्ना नहीं उसकी।

'हमको Kiss देगी ?' एनी ने ललित से पूछा।

'यछ !' कहकर ललित ने अपना मुँह एनी के रक्तिम अधरों से सटा दिया।

'और मुझे ?' कविता ने माँगा।

'नो !' ललित बोला।

'यस' और 'नो' एनी ने पढ़ाया है उसे।

'रात में हमको अपने पास क्यों नहीं सुलाती ?'

कविता कैसे समझाती अपनी विवशता।

'आज सुलाऊँगी — राजा-रानी की कहानी भी सुनाऊँगी... मुझे दो।' कहकर कविता ने अपना मुँह ललित को चूमने के लिए बढ़ाया। तभी—'गजब हो गया सरकार !...हजूर कुँवर साहिब अपना सर फोड़ रहे हैं !'

कुँवरानी ने सुना और रानी ने भी ! बदहवास होकर दोनों दौड़ पड़ीं महल की ओर। देखा कुँवरानी ने ! पागल-सा अचल मैना के स्मारक पर अपना सर पटक रहा है। कई जगह से खून झाँकने लगा है। उसने दौड़कर पकड़ लिया अचल को। कुँवर ने विक्षिप्त आँखों से कविता की ओर देखा। चिल्ला उठा—'मैना ! मेरी मैना ?....तू आ गई....'

आवेश में कुंवरानी को मैना समझकर अचल ने अपने आलिंगन में जकड़ लिया उसे !

कितना सुख मिला कविता को। काश वह मैना बन पाती। आँखों से आँसू बह चले। पता नहीं खुशी के या गम के। अचल के कानों में जब कविता का स्वर गया तो उसकी चेतना लौटी, ज्ञानतन्तु सजग हो उठे। उसने मैना की जगह कविता को पाया।

कविता ने कुँवर को पलंग पर लाकर लिटाया। थोड़ी ही देर में वारिस डाक्टर दास को लेकर आया। रानी माँ भी आयीं।

अचल अर्द्ध पागल-सा सबको घूर-घूर कर देख रहा है।

रानी माँ, कविता और डाक्टर साहब अचल के पास बैठे हैं। पास ही खड़ा वारिस अपने आपको अपने मालिक की जान पर कुर्बान करने को तत्पर है।

'इसे क्या हो गया है डाक्टर ! कुछ पता नहीं चलता...'

रानी साहिबा की आवाज असह्य करुणा से भीगी थी।

'घबड़ाने की बात नहीं—कोई खास बीमारी नहीं है।' सांत्वना देने के ख्याल से बोला डाक्टर।

कुंवर आँखें बन्द किए पड़ा रहा। इन लोगों की बातें भी

सुबता रहा और मैना को याद भी करता रहा। डाक्टर दास दवा देकर चलने लगे तो रानी साहिबा भी उनके साथ बाहर आयी।

आधे घण्टे बाद कुँवर की आँखों में नींद झूलने लगी। झपकी लेता सो गया वह तो कविता भारी मन लिए खिड़की पर आ बैठी। आसपास की ओर देखने लगी। अपने बेकरार दिल को उड़ते बादलों में उड़ा दिया उसने; किन्तु ठण्डी-ठण्डी बूँदें बरसाने वाले बादलों ने भी शान्ति नहीं दी कविता को।

• •

मुन्शीजी थके-थके सर झुकाये अपनी अलबेली चाल पर थिरकते चले जा रहे थे। किसी की आहट पाकर चौंक पड़े। सामने देखा—अजीब शकल दिखाई पड़ी उन्हें। फाटक पर विचित्र पोशाक में एक लड़की खड़ी थी।

'ऐं! कौन हो तुम? यहाँ क्या लेने आई हो!'

मुन्शीजी को देखकर घबड़ा उठी युवती।

'यह मेरी बहन है सरकार!' तभी सँपेरे ने आकर कहा।

'सँपेरा, तुम हो?...कैसी तबीयत है ठाकुर राजा की?... समझे कि नहीं? साफ-साफ कहो...महँगू कहाँ मर गया?' मुन्शीजी सुनने के लिए आतुर हो उठे।

'मिठाई खिलाओ सरकार!....राजा साहब सेवहाँ में जिन्दगी पाकर मेहमानी बजा रहे हैं।'

सुना मुन्शीजी ने तो उनकी साँस भीतर गई! पाँव में शक्ति मिल गई। पैरों तले की भागी धरती वापस आ गई।

वे भीतर दौड़े, परोसन और रचना को खुशखबरी सुनाने के लिए—'भाभी, ओ भाभी? ...आनन्द मनाओ, समझे कि नहीं?' बाहर से ही चिल्लाते जा रहे थे मुन्शीजी।

रचना ने सुना तो खिल उठी। इतनी खुशी हुई उसे कि पेट में दर्द उभर आया खुशी के मारे। शायद पेट का साँप क्रोधित हो उठा था खुशी के मौके पर। सभी उसकी सेवा में जुट गये। चमकी और छबीले उस करुण दृश्य को देखने लगे।

घण्टे भर बाद—ठीक हो गई रचना। चमकी और छबीले से बातें करने लगी, पलङ्ग पर पड़े ही पड़े। उदास चमकी आंखों में दुखाश्चर्य भरे महल के भीतरी आकर्षण को देख रही थी।

'छैला!' खुशी से चीख पड़ी चमकी।

'क्या है...क्या बात है?'

'वह देखिये सरकार! मेरा छैला!...' दौड़कर चमकी ने तस्वीर हाथों में ले ली। उसकी ओर देखकर कहने लगी—'बोलो जी परदेसी!...चुप क्यों हो तुम!...मैं तुम्हारी चमकी हूँ—नहीं पहचानते...एक टक मत देखो...कुछ बोलो तो सही...'

मगर बेजबान तस्वीर भला क्यों बोलती? चमकी उसे कलेजे से लगाकर सिसक पड़ी! मगर उसका छैला पिघला नहीं। कुछ बोला भी नहीं। रचना ने चमकी को समझाया—'यह तस्वीर मेरे भाई की है...और तस्वीर बोलती नहीं चमकी।'

'लेकिन यह देखती क्यों है सरकार!'

चमकी के प्रश्न पर मौन रह गई रचना। वह समझ नहीं पाई कुछ। आखिर छबीले ने सारी कहानी कह सुनाई।

'क्या नाम था तुम्हारे छैला का!' रचना ने पूछा।

'शीतल नाम था सरकार!'

'शीतल!...' रचना एक बार फिर चौंकी—'क्या कहा...शीतल!....यही नाम तो मेरे भाई का भी था। जङ्गल में शिकार खेलने गया था... फिर वापस नहीं लौटा। कहाँ है वह?'

'वह अब नहीं है, उसे तो...' कहते-कहते रुक गया छबीले।

'मेरे शौहर ने साँप डँसा दिया सरकार!...मैं लुट गई!...' कहकर रोने लगी चमकी।

रचना ने सांत्वना दी। आँसू रोककर सुबकती रही वह।

अपनी शङ्का मिटाने के लिए बहुत-कुछ पूछा रचना ने। चमकी और छबीले ने उसका सही-सही उत्तर दिया। रचना को विश्वास हो गया कि उसी का भाई शीतल चमकी का छैला था।

'चमकी तुम यहीं रहोगी अब! तुम्हारा घर है यह....तुम्हारे

छैला का घर ...' बोली रचना अपनत्व भरे स्वर में ।

सुनकर चमकी विभोर हो उठी। बोली—'सरकार ?....यह मेरे छैला का घर है न ! यहाँ की मिट्टी में जाब जायगी मेरी तो धन्य हो जाऊँगी।' चमकी का गला भर आया।

× × ×

चमकी को छैला न मिला, किन्तु उसका घर तो मिला ! नारी के लिए पति के घर में जगह मिल जाय, इतना ही पर्याप्त है। गम के आँसु को याद के दामन से पोंछकर सन्तोष कर लेगी। चमकी के लिए यहाँ का हर जर्रा पुजनीय बन गया।

चमकी और छबीले आपस में दुःख-सुख की कहानी कह सुन रहे थे। चमकी बहुत प्रसन्न हो रही थी। उसका छैला कितना बड़ा आदमी था। जब उसकी सूरत आँखों में तैर उठती तो जुदाई के आँसू पलकों की कोरों पर चमक उठते। लेकिन बहने नहीं देती वह। संजो कर रखती, अमूल्य निधि समझ कर।

'छबीले भैया !....आगे कहो, मुझे जब नदी में फेंक दिया चिकोरा तो क्या हुआ ?'

'इन्सान जोश में अन्धा हो जाता है चमकी !....लेकिन जब होश में आता है तो अपने किये पर पछतावा ही हाथ लगता है उसे....तुझे खोकर चिकोरा भी मरने पर उतारू हो गया....'

सारी घटनाएँ सविस्तार सुनाने लगा छबीले। चमकी सतर्क कानों से सुनने लगी—

× × ×

अंधेरी रात ! चिकोरा विदग्ध हृदय लिए चमकी की लाश लेकर नदी के किनारे खड़ा हुआ। एक बार, सिर्फ एक नजर उसने हसरत भरी निगाहों से चमकी के चमकते चाँदनुमा चेहरे को देखा। उसके चेहरे की शान्ति देखकर उसका दिल कसक उठा। पहाड़ जैसा सँपेरा रो पड़ा। अपनी अन्तरवेदना पलकों की ओट में छिपा नहीं सका। उसकी इच्छा हुई कि जिला ले चमकी को, किन्तु जब परदेशी छैला की आकृति याद आई तो

चमकी से भी घृणा हो गई उसे। उसके हाथ उठे। हवा का तीव्र झोंका आया और।

छप! सन्नाटा चीख पड़ा। चमकी की लाश लेकर लहरें 'रामनाम-सत्य' का शोर मचाती अनिर्दिष्ट दिशा की ओर बह गईं। चिकोरा ने आँखें मूँद लीं। कितना कठोर, कितना स्वार्थी है वह! चाहता तो चमकी को जिन्दगी देकर जिन्दा कर लेता। लेकिन चमकी तो उससे प्यार करती ही नहीं थी। जीवन पाकर वह उससे नफरत करती और छैला से मुहब्बत। वह अपने परदेसी के वियोग में पागल रहती। एक मर्द यह कैसे बरदाश्त कर सकेगा कि आँखों के आगे ही उसकी औरत गैर मर्द के लिए आँसू बहाये; तड़पे। चिकोरा भी मर्द था। उसके लिए यह नाकाबिले बरदाश्त था कि चमकी उसे छोड़कर किसी और से नजर लड़ाये; नजारा लूटे। वह लौटकर गाँव में चला आया। अपनी झोपड़ी में आकर आँसू बहाता रहा, न चाहकर भी।

बीती बातें याद करने पर रोता, क्रोधित हो उठता और हँसता भी। धीरे-धीरे पागल जैसा होने लगा वह।

कितना प्यार करता था चमकी को वह—मगर अन्त में चमकी का खून कर दिया। वह खूनी है! टिकोरा की ही तरह।

उसके मन में अपने प्रति घृणा उदित हो उठी। ग्लानि से अपना सर पटकने लगा वह। गले में लिपटे साँप को देखा उसने। कितना भयानक है यह साँप। इसी साँप की तरह वह भी साँप हो गया है।

साँप का जहर उतारने वाला सँपेरा स्वयं अपने जहर से मात हो रहा था। उसे साँप से नफरत होने लगी। साँप न होता तो क्या मजाल कि किसी की मौत इतनी जल्दी आ जाती।

उसने साँप को मन्तर से बाँधकर जमीन पर पटक दिया। मन्तर की आग से जलने लगा मणिधर। फों-फों फुफकारने लगा वह। उसके मुँह से चिनगारियाँ छिटकने लगीं।

'उस्ताद!' तभी किसी ने पुकारा—'यह क्या कर रहे हो..

यह बड़े उस्ताद का साँप है...इसे पूजोगे तो ताकत मिलेगी...मारो मत इसे।'

'तुम चुप रहो छबीले !—खबरदार जो मेरे काम में दखल-न्दाजी की....आज गाँव का कोई भी साँप जिन्दा नहीं रह पायेगा...' और मन्तर पढ़ता रहा चिकोरा।

थोड़ी देर छटपटाने के बाद साँप फन उठाकर झपटा और उड़ चला बाहर की ओर। चिकोरा का मन्तर उस पर कोई अधिकार नहीं जमा सका।

'अपनी खैर मनाओ उस्ताद ! साँप ने नुकशान नहीं पहुँचाया नहीं तो कुचलने वाले को साँप कभी माफ नहीं करते...देवता था वह !' बोला छबीले।

उस्ताद फेरई का साँप उड़ गया पता नहीं किधर, किन्तु दूसरे दिन लोगों ने अपनी पिटारियाँ खोलीं, देखा—सारे साँप मुर्दा थे।

लोगों को मालूम हुआ तो चिकोरा को कहने आये। चिकोरा ही तो था उस समय सरदार। लेकिन चिकोरा की झोपड़ी खाली थी। छबीले भी गाँव में नहीं था। सँपेरे समझ गये कि यह करतूत चिकोरा की ही है। सभी के दिलों में चिकोरा के प्रति घृणा पैदा हो गई पर मन मसोस कर रह गये वे।

और इधर ! चिकोरा और छबीले घनघोर जङ्गल के दैत्याकार वृक्षों की छाया के नीचे-नीचे बढ़े जा रहे थे पता नहीं कहाँ ? चिकोरा आगे था और छबीले पीछे। दोनों मौन थे, जङ्गल के सन्नाटे की तरह। दोनों अनजान दिशा की ओर बढ़ते जा रहे थे और जङ्गल की सघनता भी बढ़ती जा रही थी। साथ-साथ अँधेरा गाढ़ा होता जा रहा था। कँटीली झाड़ियों का समूह अधिक चुभने लगा था। जङ्गली लतायें पैरों में उलझ-उलझ कर अवरोध डाल रही थीं। कभी-कभी ज[illegible]ली जन्तुओं का विचित्र-विचित्र स्वर जङ्गल की शान्ति भङ्ग कर देता था।

मगर दोनों चल रहे थे; जैसे मौत का कोई भय ही न हो उन्हें। थोड़ी ही देर बाद भयानक जङ्गल में काली रोशनी छा

गई। रात आ गई किन्तु चिकोरा रुका नहीं और छबीले रुकना चाहकर भी उसका अनुसरण करता रहा। कुछ दूर चलने पर छबीले को मशाल की रोशनी दिखाई पड़ी। उसने सोचा, शायद कोई गाँव हो। उसने वहाँ रुकने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

तभी—आगे चलता चिकोरा चीख उठा। उसके ऊपर कोई चीज आ गिरी थी—ठण्ढी-ठण्ढी, बर्फ जैसी।

छबीले लपका। उसके मुँह से चीख निकली! एक अजगर था, करीब अट्ठाइस फीट का; विशाल—भयानक।

स्तब्ध रह गया छबीले। अपने सँपेरा जीवन में उसने अब तक उतना भयानक अजगर नहीं देखा था।

चिकोरा को कसे जा रहा था वह खूँखार अजगर। चिकोरा अपने बचाव के लिए युद्ध कर रहा था। अपनी सारी शक्ति से लड़ रहा था अजगर से। किन्तु उसके हाथ में कोई अस्त्र नहीं था। अपने हाथों और दाँतों से जानवर बनकर अजगर को काटने लगा वह। जब वह अजगर के ठण्ढे शरीर में दाँत गड़ाता तो मिचली आने लगती उसे। विचित्र तरह का स्वाद था अजगर के माँस का। लेकिन इस वक्त तो अपनी रक्षा कर रहा था वह। मौत की चाह रखने वाला चिकोरा; जिन्दगी के लिए काल से लड़ रहा था, अजीब बात थी।

लेकिन मौत से कब तक लड़ता कमजोर मानव! दूसरे ही क्षण एक भयङ्कर फुत्कार अजगर के मुँह से निकली और उसके भयानक जबड़े में चिकोरा का सर चला गया। छबीले चीखकर सजग हो उठा। अपनी कमर से छुरा निकाल कर अजगर के शरीर पर वार करने लगा। साथ ही मन्त्र भी पढ़ने लगा किन्तु अजगर पर कोई असर नहीं हुआ छबीले के तेज छुरे और जन्तर-मन्तर का। चिकोरा को निगल ही गया वह।

'उस्ताद!' छबीले चीख पड़ा।

उसी समय! धायँ की आवाज से जङ्गल का जर्रा-जर्रा काँप उठा। अजगर का शरीर लड़खड़ाकर जमीन पर सीधा हो गया।

× × ×

कहानी सुनकर काँप उठी चमकी। कितना दुखद अन्त था चिकोरा का। उसके मन में करुणा उत्पन्न हुई; किन्तु क्षणिक। चिकोरा ने ही तो उसकी दुनिया उजाड़ी, तब वह क्यों बहाये उसके लिए आँसू।

'उसके बाद राजा साहब मुझे अपने साथ ले आये... इसके बाद की बात मालूम ही है तुझे।' कहकर ठण्डी साँस ली छबीले ने—'तुम्हारे छैला का घर तुम्हें मिल गया। इससे बढ़कर सन्तोष और क्या होगा ?'

थोड़ी देर बाद चमकी उठकर भीतर चली गई। छबीले दरवाजे पर ही बैठा रहा। कुछ दूर पर मुंशीजी बहीखाता उलट रहे थे। चबूतरे पर बैठा महँगू खैनी रगड़ रहा था।

मुन्शी जी को व्यावावस्थित देखकर महँगू को रश्क होने लगा। उठकर उसके समीप आया वह। मुन्शीजी की नाक के पास दोनों हाथ ले जाकर बजाया उसने! खैनी की गैस भरी चूर्ण जब मुन्शी जी की नाक में घुसी तो दनादन छींकने लगे।

'नालायक ? पाजी... आक्छीं—उल्लू का पट्ठा... समझे... कि... आक्छीं... नहीं... तुम्हें निकाल दूंगा... आ... आक्छीं!'

महँगू हाथ जोड़े मुन्शीजी की हर छींक पर माफी माँगे जा रहा था—और कहता जा रहा था—'सरकार यह जेठवार की खैनी है.... बड़ी तेज... जरा चखकर तो देखो।'

तभी भीतर से परोसन की चीख सुनाई पड़ी। सभी बद-हवास-से भीतर दौड़े। देखा रचना फर्श पर छटपटा रही थी। मुँह से खून की कै हो गई थी। एक हाथ से कलेजा थामे थी वह और दूसरे से दाबे थी पेट। वफादार महँगू किसी के हुक्म के बगैर शहर दौड़ पड़ा डाक्टर बुलाने। उधर महँगू घोड़े से शहर की ओर जा रहा था और इधर एक सवार तेजी से हवेली के फाटक पर उतरा।

कोई पहरेदार नहीं था। सभी कठैत पता नहीं कहाँ मर गये थे। मरे कहाँ थे बेचारे ? भीतर रचना की हालत पर आँसू बहा

रहे थे। सन्नाटा देखकर सवार चकित हुआ। धड़धड़ाता अन्दर घुस पड़ा, किसी की आज्ञा के बगैर। इधर-उधर देखता भीतर चला जा रहा था। किसी नये मोड़ पर घूमने के लिए सोचना नहीं पड़ता था उसे, जैसे घर की हर एक राह उससे परिचित हो।

वह भी वहीं पहुँचा जहाँ मुन्शीजी घबड़ाये-से खड़े थे। परोसन कुलदेवता को याद कर रही थी। छबीले और चमकी मौन थे और रचना थी फर्श पर बेहोश। उसका सर परोसन दादी की गोद में था। दो-चार लठैत हाथ बाँधे बाहर आज्ञा का इन्तजार कर रहे थे। बाहर के लठैत आने वाले व्यक्ति को देखकर बगल हट गये। कमरे के भीतर चला गया आगन्तुक।

'रचना !' आनेवाला व्यक्ति चीखा—'इसे क्या हुआ दादी !'

'सजल बेटा...इसके पेट में साँप है...'

सजल ही था वह। सुनकर चौंक पड़ा। चमकी और छबीले ने भी सुना। सजल परेशान हो उठा। अभी-अभी वह सेदहाँ से अपना जीवन लेकर आया; लेकिन यहाँ उसे देखने को मिला मौत का मंजर ! देखकर दुख-सागर में टूटे किवारे-सा भहरा पड़ा।

दो घण्टे बाद आँधी की तरह आया पहुँगू, डाक्टर को लेकर। दवा दी डाक्टर ने। चैतन्य हुई रचना। डाक्टर ने सारी बातें बताईं सजल को। आपरेशन की भी सलाह दी।

'आपरेशन हो या चाहे जो हो...मुझे रचना की जिन्दगी चाहिए...रुपये की चिन्ता आप न करें !...लेकिन पेट में साँप गया कैसे...बड़ी अजीब बात है !' पशोपेश में पड़ा था सजल।

'अन्धकार में पानी पीने से !'

'क्या मतलब !'

'लोग अँधेरे में पानी पी लेते हैं...यह गाँव है; पानी कुएँ से आता होगा....कभी-कभी कुएँ में साँप चला जाता है....उसके अण्डे पानी में फूट जाते हैं...उसके बच्चे पानी में तैरने लगते हैं—कोई पानी भरकर ले आया और पी गया बिना देखे...कुछ पता भी नहीं लगता है। भीतर जाकर वह बढ़ने लगता है—

बस ?' डाक्टर ने कहा।

डाक्टर के जाने पर सजल व्यग्र होकर टहलता रहा, छबीले चिन्तित सजल के पास आकर खड़ा हो गया। बोला—'हुजूर !'

'क्या है ?' चौंक पड़ा सजल।

'सरकार ! अगर आप हुक्म दें तो गरीब कुछ खिदमत करे...मैं संपेरा हूँ हजूर ! साँप के हर रोग का ईलाज जानता हूँ—सेदहां के लोग साँप का जहर छूकर रफा कर सकते हैं, लेकिन पेट के साँप को छूकर निकाला नहीं जा सकता...सेदहां का देवी चमत्कारा देख सरकार ने, अब जादू-मन्तर का कमाल भी देखें। मैं रचना बहन के पेट का साँप निकाल सकता हूँ...'

छबीले को आज्ञा मिल गई। रचना अब तक शिथिल होकर पलंग पर पड़ी थी। छबीले ने सबको वहाँ से हटा दिया। स्वयं भी कमरे के बाहर चला आया।

भीतर सिर्फ चमकी, रचना को अपनी गोद में लेकर जमीन पर बैठ गई ! रचना के शरीर से कपड़े का आवरण हटा दिया गया। आपस में सटी जाघों को अलग कर दिया गया।

कमरे में आग जलाई गई। मयूर-पङ्ख के धुएं से सारा कमरा ढँक गया। रचना और चमकी बेमौसम के बादलों में खो गई।

बाहर छबीले की आँखें बन्द हो गयीं। उसके होंठ कुछ बुदबुदाने लगे। उसका दाहिना हाथ जमीन पर साँप की टेढ़ी-मेढ़ी चाल से आगे-पीछे चलने लगा। थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह जमीन से धूल उठाकर मुंह से फूंक मार कमरे की ओर देखता।

संपेरे की कला स्तब्ध होकर सभी देख रहे थे और किसी बात का इन्तजार कर रहे थे। रचना भीतर से कभी-कभी कराह उठती थी। सजल बेचैनी से चहलकदमी करने में मशगूल था। करीब एक घण्टे तक यही क्रिया चलती रही—उसके बाद कोई चीज कमरे से रेंगती हुई छबीले के पास आकर रुक गई ?

लोगों ने देखा—करीब एक फीट लम्बा साँप था, दुबला-पतला। सभी चकित थे और प्रसन्न भी।

दूसरे दिन—सभी शोक-मुक्त होकर विहँस रहे थे।

छबीले ने कहा—'सरकार! अब मुझे हुक्म दिया जाय.... देश लौट आऊँ मैं। मरने चला था हजूर! लेकिन सभी को जिन्दा देख; अपनी भी तबीयत जिन्दगी पर ही आ गई।'

'छबीले भैया! क्या कहते हो तुम!—गाँव जा रहे हो—सचमुच। लोग मार डालेंगे तुम्हें—सभी गुस्से में हैं...' किसी के बोलने के पूर्व चमकी बोल उठी।

रचना ने भी हां में हां मिलाई।

'मुझे सिर्फ मौत मार सकती है चमकी! इन्सान की इतनी हस्ती कहां....' कहा छबीले ने—'बूढ़ी मां मेरे बगैर मर जायगी हजूर!...चमकी की खुशी देखकर घर जाने की तमन्ना हो गई है—चमकी मेरी बहन है सरकार! और यह घर चमकी का है—बहन के घर में भाई का रहना नामुमकिन....मुझे माफ करें। दया बनाये रखें केवल...अब तो रिश्ता कायम हो गया है। आना-जाना तो लगा ही रहेगा। यह तो दुनिया का पुराना रिवाज है।'

आखिर हठी छबीले ने अपनी जिद्द पूरी की। जाते वक्त सजल जब छबीले को काफी रुपया देने लगा तो इनकार कर गया वह। बोला—'दौलत की भूख मुझे नहीं बाबू! आपने मुझे जिन्दगी दी है। जिन्दगी से बढ़कर एक चीज और भी दी—वह है मुहब्बत! मुहब्बत के आगे दुनिया की हर एक चीज नाचीज होती है राजा साहब!'

चमकी के आग्रह पर एक रोज और रुक गया छबीले। दूसरे दिन जाने लगा तो रो पड़ी चमकी। बोली—'सबसे मेरा कुशल-छेम कह देना भैया!—जरा सेदहाँ जाकर मोहन के बाबा से भी मिल लेना...अगर उसके बाबा ने नदी में से मुझे नहीं निकाला होता तो चमकी इस दुनिया में नहीं होती...कभी-कभी आना नहीं भूलना....'

छबीले चल पड़ा। चमकी रो उठी। रचना का दिल भी सहानुभूति से भर गया। छबीले उसके जीवन का रक्षक जो था।

● ●

कविता चुपचाप सूखे पेड़ के ठूंठ की सेवा कर रही है। देखना चाहती है कि कब इसमें वरदान के किसलय निकलते हैं।

रानी साहिबा दिन-रात भगवान के आगे अपनी बूढ़ी झोली फैलाये रहती हैं—'नये घर की दीवार मत गिरा भगवान !' उनकी प्रार्थना है—'उजड़े घर पर ही हाथ फैला दे.... मुझे फिर से बीमार कर दे....मेरे बेटे की जान लेने के पहले मेरी जिन्दगी का गला घोंट दे तू !... तेरा इन्साफ मेरे आंचल में धब्बा लगा देगा... दुनिया कहेगी—सौतेली मां अपने बेटे को खा गई !'

भगवान तो आसमान में रहता है, जहां इन्साफ की आवाज पहुंचते-पहुंचते बिखर जाती है। आसमान छोड़कर जमीन पर आता है भगवान तो पत्थर बन जाता है....और पत्थर के दिल में स्पन्दन कहां, जो इन्सान के दर्द का अन्दाजा लगा सके। कितनी बड़ी मजबूरी है यह।

आज तो अचल की हालत कल से अधिक खराब है। उसका पागलपन तेजी से बढ़ता जा रहा है। चांदनी रात के ज्वार-भाटे की तरह कभी बड़बड़ाता है तो कभी चुप हो जाता है। उसकी जबान सिर्फ मैना की रट लगाती रहती है।

बड़े पशोपेश में पड़ जाती है कविता ! कहां से लाये वह मैना को। बेचारी दिल में आग, आंखों में अन्धकार और जिन्दगी में मौत लिए बैठी है। वह अपने विक्षिप्त पति को सान्त्वना देती है, धीरज बंधाती है, मैना को लाने का झूठा वादा भी करती है, तब जाकर कुछ शान्त होता है कुंवर ! लेकिन वह बच्चा नहीं, जो झूठ भी न पहचान सके। थोड़ी देर बाद फिर मैना-मैना चिल्लाने लगता है। कहता है—'सरकार ! आप मुझे छोड़ दें... मैना सिर्फ मेरी आवाज पर आ सकती है....आपका इशारा उसके लिए कुछ नहीं....और इस कैद से मेरी आवाज उसके कानों तक नहीं पहुंच पाती....'

कविता सुनकर चुप रह जाती है। कैसे छोड़ दे वह ? किसके सहारे छोड़ दे ? और अचल ! कभी उसका पांव पकड़ता है, कभी

कभी बोलता है और कभी मैना की याचना करता है। लेकिन जब डाक्टर दास दवा और इन्जेक्शन लगा देते हैं, उसकी हालत सुधर जाती है कुछ....और तब कुछ-कुछ सबको पहचानने लगता है, किन्तु मैना को भूलता नहीं फिर भी।

अचल की तबीयत खराब देखकर कविता ने चंचल को बुलाने के लिए सेदहां आदमी भेज दिया है और वारिस को भेज दिया है डाक्टर दास को बुलाने। थोड़ी देर बाद डाक्टर दास आये। उन्होंने अचल का परीक्षण किया और गम्भीर हो उठे।

'मेरा अनुमान ठीक निकला !'

'क्या डाक्टर साहब !' कविता ने व्यग्र होकर पूछा।

'जी, कुछ नहीं....इनका 'ब्लड' टेस्ट करना होगा।' डाक्टर साहब कुछ छिपाते हुए बोले और अचल के बदन से खून लेकर चले गये।

× × ×

चंचल सेदहां से आ गया है। रानी मां कुँवर की चिन्ता मन में लादे अपने पलंग पर पड़ी हैं। बेचारी अचल के पास हमेशा रहना चाहकर भी नहीं रह पातीं। कुँवर की हालत देखकर रोने लगती हैं वे। ललित फर्श पर खेल रहा है और रानी साहिबा गम्भीर चिन्ता में पड़ी हैं, जिससे उनके चेहरे की झुर्रियां स्पष्ट हो गई हैं। बूढ़ी आंखें लाल होकर सूज गई हैं।

किसी खटके के साथ चौंक पड़ीं वे। आंखें उठाकर देखा तो सामने चंचल खड़ा मिला।

'क्या सोच रही हो मां !' चंचल ने पूछा।

'एक बात हो तो कहूँ...यहां तो भण्डार पड़ा है सोचने के लिए...सेदहां का समाचार नहीं बताया कुछ....आ बैठ न !' वे उदास चंचल को अपनी वाणी द्वारा समझाना चाहती थीं।

लेकिन चंचल क्यों बहलने लगा, कोई बच्चा तो था नहीं।

'एक बात है मां !....' बैठता हुआ बोला चंचल।

'क्या ?' चौंक पड़ी रानी मां।

'डाक्टर साहब कहते हैं...'

'क्या कहते हैं, जल्दी बोल !' रानी साहिबा व्यग्र हो उठीं।

'यही कि भैया के खून में सांप का जहर है बहुत दिनों से, शायद मैना ने सारा विष नहीं चूसा था। विष मस्तिष्क पर चढ़ गया है—' कहा चञ्चल ने।

'तो अब क्या होगा रे चंचल !...कोई उपाय कर, दौलत पानी की तरह बहाकर बचा ले अचल को।' रानी साहिबा बोली—'हां देख; बहू को यह बात अभी मत बताना....सुनकर क्या गुजरेगी उस पर....गला नहीं दबा लेगी !'

'मुझे मालूम है ....' कहती हुई कविता भीतर चली आई।

रानी साहिबा ने चकित होकर देखा कविता के गम्भीर चेहरे की ओर। उसकी उस गम्भीरता के पीछे कितना भयानक तूफान उठ रहा था, यह तो रानी मां ही समझ सकती थीं। कविता शान्त थी और उसकी पलकें झुकीं। आंखों के आसमान में वेदना के बादल घिरे थे; लेकिन पानी नहीं बरस रहा था, सिर्फ बिजलियां ही चमक रही थीं।

'माता जी आप चिन्ता न करें !...कविता का दिल इतना कमजोर नहीं...वे तो मैना की अमानत हैं, जब तक मेरे पास रहेंगे तब तक अपना जीवन देकर सेवा करूंगी हो...जाना चाहेंगे तो रोकने की शक्ति मुझमें नहीं...चांदनी चार दिन की होती है मां, सपना समझ कर भूल जाऊंगी उन्हें !...मौत का सबेरा होनेवाला है माताजी !' कहते-कहते कविता के गले में करुणा आ बैठी तो चुप हो गई वह।

'मेरी बच्ची ! मेरी बहू !' कहकर रानी साहिबा ने कविता को छाती से लगा लिया—'तू निराश न हो बहू !...अचल की जिन्दगी के लिए इस महल का खजाना लुटा दूंगी....'

'बेकार है मां—राही अपना सफर काफी तय कर चुका है, मञ्जिल के पास पहुंच गया है वह। दौलत जिन्दगी की दवा बन सकती है, मौत की नहीं...' थोड़ी देर रुककर बोली—'अच्छा

'...दवा पिलानी है—समय हो गया है...मुझसे जो हो रहा है कर रही हूँ...आप लोग भी कर गुजरिए।'

कहकर कविता भारी मन, भरा दिल और भरी आँखें लिए बाहर चली गई। रानी साहिबा कविता की सहनशीलता देखकर चकित रह गयीं। नारी की सहिष्णुता की पराकाष्ठा थी वह।

'माँ!' चञ्चल ने टोका—'भैया को सेदहाँ ले चलो'।

'क्यों?'

'भैया के रोग का इलाज है वहीं, तुमसे बताया नहीं मैंने; अजीब गाँव है।' कहने लगा चञ्चल और सुनने लगीं रानी साहिबा।

चञ्चल ने वहाँ के दैवी चमत्कार की बात कही तो दङ्ग रह गईं रानी माँ, बोलीं—'इतने दिन हो गये, यह बात मेरे कानों में क्यों नहीं पड़ी।'

'आवश्यकता पड़ने पर ही किसी वस्तु की खोज होती है....'

'मैं ले चलूंगी....जहाँ ठीक हो सके, वहीं ले चलूंगी!'

इधर सेदहाँ जाने की तैयारी हो गई और उधर अचल बीमारी में बेहोश कभी अपना सर धुनता है तो कभी दाँतों तले उँगली दबाकर काटने लगता है। वारिस और कविता उसे सँभालते हैं। वारिस जब अपने मालिक के साथ जबरदस्ती करने लगता है तो उसका दिल भर उठता है।

'मुझे बाहर ले चलो....मेरा जी घबड़ा रहा है....मैया! मैं मर जाऊँगा सरकार! मेरी जान लेने से क्या मिलेगा?...आप धनी हैं...आप पर बहुत लोग जान बिछायेंगे...मैं गरीब परदेसी हूँ, मुझे माफ करें।' हाँफ-हाँफ कर कह रहा था कुँवर—'मुझे बाहर ले चलो।'

'डाक्टर साहब ने मना किया है हजूर!'

'भाई, मैं हजूर नहीं, गरीब परदेसी हूँ... मुझे बाहर पहुँचा दो, भगवान भला करेगा तुम्हारा....' गिड़गिड़ा कर अचल ने वारिस का पैर पकड़ लिया।

'चलो वारिस !' कविता ने शान्त स्वर में कहा ।

अचल को लेकर वारिस और कविता बाहर आये । अचल मैना के स्मारक के आगे बैठ गया । उसे राहत मिली । उसकी विह्वल पुतलियाँ स्मारक को देखते-देखते थक गईं तो सर पटकने लगा । दौड़कर वारिस ने पकड़ लिया कुँवर को । अचल के सर पर नया घाव हो गया । खून देखकर घबड़ा उठा वारिस ।

उसके मुख से निकला—'या खुदा ! क्या गजब करता है तू !'

भीतर लाकर पलङ्ग पर लिटाया गया कुँवर को । डाक्टर आया तो बेहोश अचल होश में आ आया । कविता आँखों में उजड़ा संसार लिए खड़ी थी । रानी साहिबा बदहवास थीं ।

अचल होश में आया तो उसकी आँखें खुलने लगीं । धीरे-धीरे पलकों के बीच की दूरी बढ़ने लगी । कविता ने देखा—अचल की आँखों में उद्भ्रांत हृदय की छाया थी । उसका दिल धड़का; लेकिन हिमालय की दृढ़ता लिए मौन ही रही ।

'मैना !' अचल ने इधर-उधर देखकर पुकारा ।

मगर कौन जवाब दे । कविता ही बोली—'कहिए !'

अचल ने गौर से कविता की ओर निहारा । बोला—'आप, आप मैना नहीं है हजूर ! ...इस जनम में आप नहीं हो सकतीं... मुझे मेरी मैना दीजिए, गरीब को लूटकर क्या मिलेगा आपको ?'

कविता ने कलेजा थाम लिया सुनकर । उसकी आँखों की राह दिल के टुकड़े मचलने के लिए तैयार थे, किन्तु कविता रोई नहीं । बेवफाओं के लिए आँसु बहाना कहाँ तक ठीक है ।

अचल कहता रहा—'मुझे मत सतायें सरकार ! मैना मर जायगी मेरे बिना ...सुना आपने ?—पुकार रही है वह...अभी आया मैना ! मुझे जाने दीजिए हजूर !' उठकर खड़ा होने लगा। वह । डाक्टर दास और वारिस ने उसे पकड़ लिया । छटपटाकर रह गया बेबस परदेसी !

वारिस अचल की अब तक की हालत देखकर पागल हो उठा । वह बोला—'या खुदा ! ..कैसा इन्साफ किया तूने !.... मेरे मालिक ! जिन्दगी नहीं दे सकता तो मौत भी मत दे ।'

'अब क्या होगा डाक्टर साहब !' रानी साहिबा की आवाज नहीं मालूम पड़ती थी, लग रहा था जैसे किसी मुर्दे के मुख से निकल रहा हो वह स्वर।

'कुँवर साहब के दिमाग पर जहर चढ़ गया है। याददाश्त खो बैठे हैं। इनके मन के खिलाफ कुछ मत कीजिए।' बोले डाक्टर।

सभी बेचैन हो उठे। किन्तु कुँवर परदेसी वैसा ही रहा। एक बार अचल पागल होकर आया था तो मैना ने ठीक कर लिया था उसे। आज पागल हो गया है तो कोई तिनके का सहारा भी नहीं। कविता के जीवन का आलोक लुप्त होता जा रहा था। कितनी विवश हो उठी थी वह। कुँवर के पास जाती है तो वह हजूर सरकार, कहकर मैना की भीख माँगने लगता है।

● ●

आज अचल को सेहहौर ले जाने की तैयारी हो गई ! मोटर साफ हो जाय बस। कविता अचल को समझा रही है। पास में ललित भी है। नासमझ ललित नहीं समझ पा रहा है कि आखिर क्यों उसके पिताजी को माँ इतना समझा रही है ? क्यों उसके पिता उसकी माँ का पैर पकड़ने को तैयार हो रहे हैं ? चकिताश्चर्य मुद्रा धारण किए देख रहा था वह।

'हजूर आपके पैर पड़ता हूँ ... मुझे कुछ अच्छा नहीं लगता.... मुझे जाने दीजिए मैना के पास....आप बड़ी जिद्दी हैं सरकार.... कुँवरानी साहिबा ! कहीं ऐसा न हो कि जो इज्जत अमीरों के लिए इस गरीब के दिल में है खो जाय....'

'सरकार !....मोटर तैयार हो गई....कुँवर साहब को ले चलिए ?' वारिस ने आकर कहा।

'चलिए मेरे साथ।' कविता ने कहा।

सुनकर विभोर हो उठा कुँवर। खुशी से नाच उठा उसका मन। बोला—'आप तकलीफ न करें हजूर। मैं चला जाऊँगा.... मैना को खोजकर फिर मिलूँगा आपसे....'

'चलिए; मैना को मैंने खोज लिया है...उसी के पास तो ले

चल रही हूँ।' कलेजे पर पत्थर रखकर बोली कविता।

अचल घूम पड़ा चलने के लिए, तभी फाटक से शोर-गुल सुनाई पड़ा—'परदेसी !' कोई तेज आवाज में चिल्लाया।

लोगों ने देखा—एक भयानक सँपेरा पागल-सा खड़ा था फाटक पर। बड़ी-बड़ी लाल-लाल आँखों से लपटें निकल रही थीं। वह अचल को घूर रहा था।

'हा-हा-हा...!...पहचान... लिया... तूने... मैं... आ... गया...तेरा...ग...गला...?' लड़खड़ाती आवाज थी टिकोरा की।

अचल के पास पहुँचते-पहुँचते छोटी पहाड़ी-सा भयानक सँपेरा गिर पड़ा जमीन पर। परदेसी का गला पकड़ने के लिए उसके हाथ छटपटाते रहे। मणिधर साँप का जहर उसके भीतर मौत की जलन पैदा कर चुका था। उसकी चलती साँस बन्द होना चाहती थी।

'पर...देसी...बाबू!...आ...ज...तुझे....दुनि...या...से.. उठा....ने....आया....था...स...मगर...अफसोस !...टिकोरा.. को...तू...ने...फिर...हरा... दिया...आज... हमेशा...के... लिए...' कहकर उसने अपनी साँस सँभाली, फिर कहता गया— 'टिकोरा ने दुश्मन ..को माफ...करना नहीं...सीखा...मरकर... भी...तेरी...जान ...लूंगा...मेरी...रूह....तु... झे तड़पा... कर....मार...डालेगी...समझे...रहना....मैं ....टिकोरा...हूँ... मैना मै...ना...'

हवा का एक तेज झोंका आया और उसका सर जमीन पर लुढ़क गया। मुँह से झाग बह चली।

'मैना !' चीखकर अचल दौड़ पड़ा बाहर की ओर। टिकोरा को कुचलता हुआ। वारिस ने लपक कर कुँवर को पकड़ लिया। उत्तेजित अचल ने वारिस के हाथ में दाँत गड़ा दिए।

चीख पड़ा वारिस मगर छोड़ा नहीं उसने।

'आओ परदेसी बाबू !...मैना से मिला दूँ तुम्हें !' बोला वारिस और खींचते हुए मोटर पर ला बिठाया विक्षिप्त कुँवर को।

मोटर भागी जा रही थी। अचल विह्वल नजरों से इधर-

उधर देखता चल रहा था। मोटर सुनसान शहर से दूर सड़क पर दौड़ रही थी। शहर की आबादी पीछे छूट चुकी थी। अब धूल से भरी देहाती सड़क का सफर आरम्भ हुआ।

'शंकर, रोक दो मोटर! ...देखो, सड़क पर सो रहा है कोई... खुदा कसम! जान की कुछ भी परवाह नहीं है सोने वाले को' चीख पड़ा वारिस!

शङ्कर ने हार्न दिया। मगर उठा नहीं सोने वाला। मोटर रुक गई। वारिस और चञ्चल खीझकर चल पड़े सोये आदमी की ओर। सोये आदमी के नजदीक गया तो चौंक कर दो कदम पीछे हटा वारिस—'या खुदा! क्या गजब करना चाहता है तू! ...क्या देख रही हैं वारिस की आँखें!' उसके मुँह से निकला—'देखिए हुजूर! वही है वS... बिल्कुल वही है...'

सोये आदमी को देखकर चञ्चल भी अचम्भित हो उठा। बोला—'इसे उठाओ वारिस!'

वारिस ने सोये आदमी को उठा लिया। सोनेवाला हिला तक नहीं। कोई एतराज भी नहीं किया उसने। उसे लेकर वारिस मोटर के समीप आया। कविता ने देखा उस अजीब आदमी को तो चौंक पड़ी। और कुँवर! जब उसने देखा तो वह भी चौंक पड़ा। इतनी तेजी से उछला वह कि कविता सँभाल भी न सकी। दूसरे ही क्षण मोटर के बाहर था वह। तेजी से वारिस के हाथों से उस आदमी को छीन लिया उसने।

'मैना!....' परदेसी उसे चूमने लगा।

मैना ही थी वह। रास्ते में लाते समय पागल टिकोरा को यह भी पता नहीं लगा था कि उसकी पकड़ से मैना कब छूट गई। कुँवर मैना को चूमता जा रहा था।

थोड़ी देर बाद आश्वस्त हुआ तो बोला—'हुजूर! आपका लाख-लाख शुक्रिया!...मुझे मैना मिल गई...आपको बहुत तकलीफ उठानी पड़ी मेरी वजह से। गरीब परदेसी आपका अहसान भूलेगा नहीं....मैं यहाँ से बड़ी दूर चला जाऊँगा कि आप फिर मुझे भूल से पकड़ न सकें...मेरी मैना मेरे साथ है

सरकार !' कहता हुआ पागल परदेसी मैना को अपनी गोद में लिए लड़खड़ाता भाग चला। कविता देखती रह गई।

चन्चल, 'भैया-भैया !!' चीखकर दौड़ा पकड़ने।

कुँवरानी सजग हो उठी। वह भी कहती हुई दौड़ी—'वारिस संभालो उनको...देखो, गिर पड़े....उनका दिमाग ठीक नहीं — जल्दी से चलो सेदहाँ—मैना को भी ... हे भगवान ! मुझ अभागिन पर दया कर ..उन्हें और मैना को मेरी जिन्दगी दे... मैं उनकी मौत लेकर ही खुश हो जाऊँगी ...'

लेकिन वारिस के पहुँचने के पहले, लड़खड़ा कर कमजोर परदेसी मैना को लिए-दिए कंकरीली सड़क पर गिर पड़ा। बेहोश प्रेमियों को मोटर में लादा गया। मोटर भाग चली सेदहाँ की ओर, न जाने कितने अधूरे अरमानों की धूल उड़ाती हुई।

× × ×

दौड़ती-हाँफती मोटर लाख-लाख अरमान लादे किसी तरह सेदहाँ पहुँची। बड़ी उम्मीद, बहुत उत्सुकता लिए सभी खेलावन बाबा के चौरे पर आये। कुँवर के आने की खबर लहर की तरह गाँव में फैल गई। ठाकुर ध्रुवसिंह भी आये। कुँवर को कार से बाहर निकाला गया और साथ-साथ मैना को भी।

दोनों प्रेमी बेहोश थे। चेहरे पर अजीब तरह का दर्द बिखरा था। बन्द पलकें मूक भाषा में कुछ कह रही थीं। किन्तु कौन सुनता था उनका मौन सन्देश ?

कविता का दिल अचल की स्थिरता देखकर धड़का। होंठ फड़के किन्तु बोली नहीं कुछ। कुँवर और मैना को चबूतरे पर रखा गया। दो बुजुर्ग उपचार के लिए ऊपर आये। भीड़ साँस रोककर फैसला सुनने के लिए आतुर-विकल हो उठी।

तभी—भीड़ चीरता हुआ वहाँ कोई आया।

आगन्तुक चीख पड़ा—'परदेसी...मैना !'

लोगों ने देखा—कोई जवान सँपेरा था। किन्तु टिकोरा की तरह खूँखार नहीं। वह मैना और परदेसी के पास जाने लगा तो वारिस ने पकड़ कर पीछे खींच लिया।

गिड़गिड़ाने लगा वह—'मैना हमारे उस्ताद की बेटी है सरकार !...और वह परदेसी ?...मुझे मिल तो लेने दो जरा...'

'अभी ठहरो भाई !' चंचल ने कहा।

दोनों बुजुर्ग कुँवर और मैना का परीक्षण कर रहे थे। कुँवर और मैना की आँखें भीतर धँस गई थीं ! नाड़ी पकड़ी तो गम्भीर हो उठे वे। दोनों उतर आये चबूतरे पर से ! बोले—'हम जिन्दगी को जिन्दगी दे सकते हैं सरकार !.....मौत को जिन्दगी नहीं दे सकते'

कविता ने सुना। उसके ऊपर हिमालय भहरा पड़ा, वह स्थिर रही। पैरों के नीचे की जमीन हिली मगर काँपी नहीं वह। आसमान फटा फिर भी निश्चल ही रही। उसके चेहरे की गम्भीरता बढ़ चली। धूल भरे चेहरे की उदासी गाढ़ी हो गई और चंचल आँखों में धूल झोंककर भाग गया।

वारिस, चंचल वगैरह बदहवास हो उठे।

'चलो चञ्चल !...' कहते-कहते कविता के गले में आँसू अटक गये।

चञ्चल ने अपनी भाभी को देखा—वह कुछ समझ नहीं पा रहा था। कविता की उस गम्भीरता के पीछे कैसा तूफान उठ रहा था—यह वह जानता था। मोटर पर लाशें रख दी गयीं !

पास खड़ा सँपेरा चीखकर कविता के पैरों से लिपट गया।

'सरकार ! मैना हमारे उस्ताद की बेटी है...इसे मुझे दे दीजिए....इसकी जरा भी खिदमत कर सका तो उस्ताद की रूह मुझे आशीर्वाद देगी ...'

उसने देखा जवान सँपेरा रो रहा था।

निराश कविता ने उसे निराश नहीं किया। इन्सान मरने के बाद निर्मोही हो सकता है, किन्तु जीते-जी नहीं।

वह सँपेरा था छबीले ! उसने मैना को गोद में उठा लिया। कविता ने आदर के साथ मैना के पैर छुए। उसके अरमान पूरे होकर भी अधूरे रह गये।

मोटर बढ़ चली अपनी धीमी चाल से। सबकी चाल तो

अचल लेकर सो गया था, महानिद्रा की गोद में।

मोटर पर सवार थे सभी। वारिस परदेसी कुँवर को सँभाले था। कुँवर का सर कविता की जांघों पर था। चन्चल अपनी विक्षिप्त भाभी को सान्त्वना दे रहा था और भरी-भरी आँखों से देख रहा था, अपने मृत भाई की ओर...और कविता!

उसके चेहरे पर मौत की-सी खामोशी छाई थी। नारी की सहन शक्ति की सीमा थी। दिल में वेदना का सागर लहराता जा रहा था मगर आँखों में आँसू का एक कतरा भी नहीं...आह!

उस विजंन प्रान्त की धरती गा रही थी और आसमान सुन रहा था, यह दर्द भरा एकान्त संगीत—

झीनी चुनरिया कऽ भीजेला अँचरा,
आंसू से बहे राम नैना कऽ कजरा।
दिल कऽ दरदिया नहीं कोई जाने;
छैला डाले गलबहियाँ...
रे बेदरदी सइयाँ!

शाम हो गई, सूरज डूब गया। पश्चिम से घने अंधेरे का भयानक तूफान उठने लगा। मोटर दूर निकल चुकी थी, किन्तु धरती जैसे अब भी सिसक-सिसक कर गा रही थी। कोई सुने या न सुने, लेकिन उदास आसमान में व्यथा का विष अब भी घुल रहा था।

नीचे उठत रे लपट अगिन की
ऊपर बादर की छइयाँ...
रे बेदरदी सइयाँ!

उधर!—छबीले मैना की लाश सँभाले छोटी पहाड़ी की ओर बढ़ता जा रहा था।

मौत जिन्दगी का सहारा लिए थी और जिन्दगी मौत का!

मंजिल पर पहुँचने के बाद भी सफर जारी था।

सफर!

उफ्!

• समाप्त •

भारत पॉकेट बुक्स